THE BOOK WAS DRENCHED

स्वास्थ्य और दीर्घायु

Second Edition, June 17, 1930, 6000, Copies.

Printed aud Published by J. C. Craven. at and for the Oriental Watchman Publishing House, Salisbury Park, Poona, India. 6/30.

स्वास्थ्य और दीर्घायु

इस पुस्तक में सरल रीति से यह बतलाया गया है कि किस प्रकार साधारण बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं और उन के उपचार क्या हैं ॥

ए. सी. सेलमन, एम. डी.

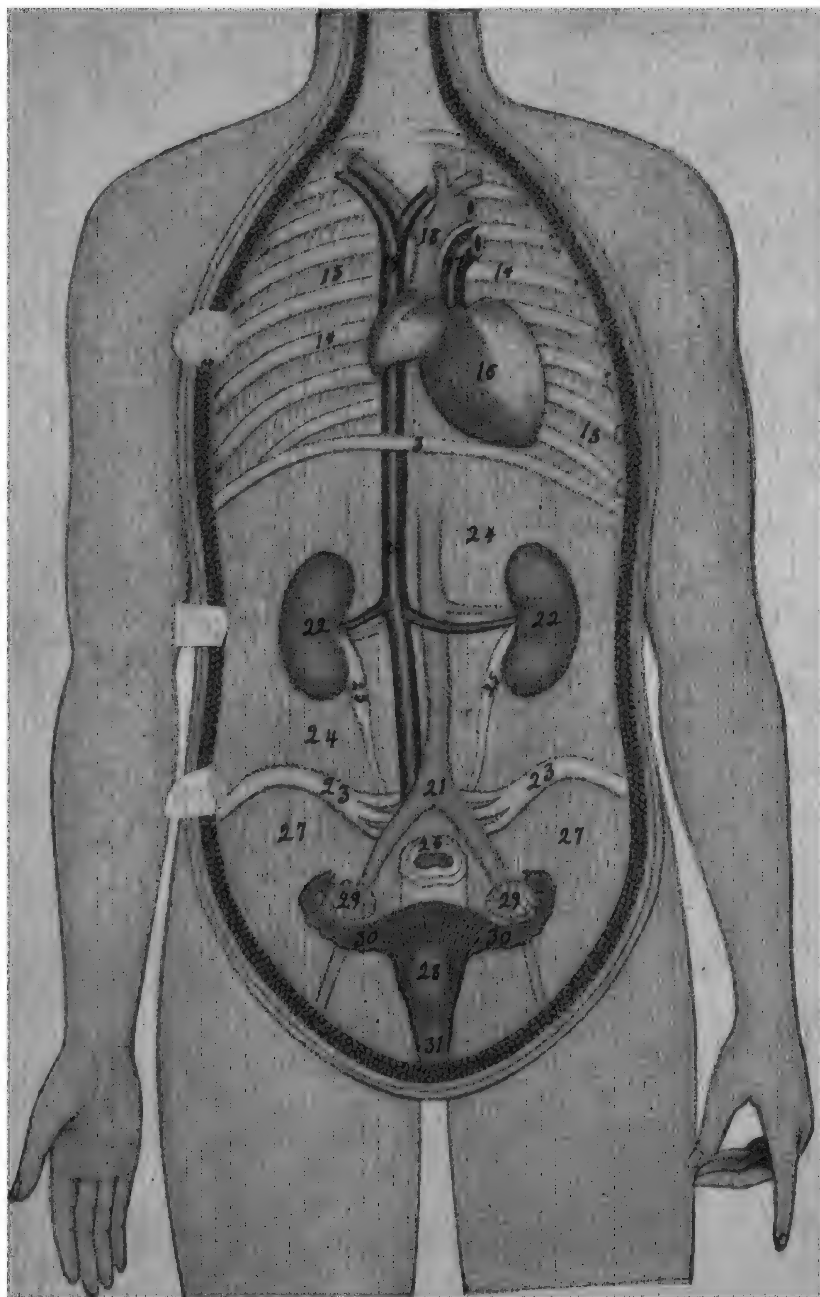
ओरिएंटल वाचमेन पब्लिशिंग हाऊस,
सालिज़बरी पार्क, पूना, इंडिया ॥

First Edition, 2500 Copies, Registered September 16, 1928.

Second Edition, 6000 Copies. Registered June, 17, 1930.

By

The Oriental Watchman Publishing House, Salisbury Park, Poona.



18
15
14
14
16
15
24
22
22
24
23
21
23
27
27
29
29
30
30
28
31

मानुषी अङ्ग का वर्णन

१. श्वास प्रश्वास के यन्त्र-श्वास-नली
२. फेफड़ा
३. उरोदर पटल (छाती और पेट के मध्य का पर्दा) डायाफ़्राम (मांसपेशी)
४. कलेजा (जिगर)
५. पित्ताशय, पित्त की थैली
६. छोटी आंत
७. बड़ी आंत
८. पित्ताशय
९. नीचे जाने वाली बड़ी आंत
१०. गुर्दा
११. आमाशय स्टोमक या जठर
१२. पित्त
१३. तिल्ली
१४. पसली
१५. पसलियों के मध्य भाग
१६. दिल
१७. रुधिराभिसरण यन्त्र
१८. ऐओरटा (धमनी) (Aorta)
१९. सुपीरिअर वीना कावा (Superior Vena Cava)
२०. इनफीरिअर वीना कावा (Inferior Vena Cava)
२१. उदर का ऐओरटा या धमनी
२२. गुर्दा
२३. बैठक की हड्डियां
२४. पेरीटोनियम (Peritoneum)
२५. मूत्र नल
२६. गुर्दा का कोश सेक्शन
२७. बैठक का पेरीटोनियम (Pelvie peritoneum)
२८. गर्भाशय (The Uterus)
२९. स्त्री अण्ड-फल कोष (The Ovaries)
३०. योनिमार्ग (The Fallopian tubes or Oviducts)
३१. सरविक्स यूटेराई (Cervix Uteri)

प्राकथन ।

बहुत से रोग जो मनुष्य में पाए जाते हैं, उन से बचना मनुष्य के हाथ में है, इस लिये एक ऐसी पुस्तक की बहुत ही आवश्यकता है जिस में साधारण रोगों के कारण और उन के रोक और औषधि ऐसी भाषा में लिखी जावें जो प्रत्येक मनुष्य पढ़ सके और समझ सके ॥

इस पुस्तक के प्रथम १३ अध्यायों में शरीर के भिन्न २ अंगों की रचना और उन के काम के विषय में अति आवश्यक बातें वर्णन की गई हैं। उन में मनुष्य के लिये शिक्षा भी लिखी है, कि इन अवयवों का स्वास्थ्य क्योंकर स्थापित रह सक्ता है। इस पुस्तक के अधिक भागों में अति साधारण रोगों का वर्णन है। रोगों के रोकने के नियम पर बहुत ज़ोर दिया गया है। और औषधि ऐसी बताई गई है जो प्रति घर में उपयोग में लाई जा सक्ती है ॥

इस पुस्तक का यह मतलब नहीं है कि इस के पढ़ने से डाक्टर या वैद्य की आवश्यकता ही जाती रहेगी। यह पुस्तक केवल रोगों की पहिचान बतलावेगी और यह शिक्षा देगी कि किस २ समय यह आवश्यक है कि किसी निपुण डाक्टर की सहायता ली जाए। इस बात से पढ़ने वालों को यह विदित हो जायगा कि डाक्टर और उन के बड़े २ औषधालय हमारे लिये कितने आवश्यक हैं और हम को उन का कितना आदर करना चाहिये ॥

लेखक की यह आशा है कि यह पुस्तक प्रत्येक घर में अति लाभदायक होगी, क्योंकि इस पुस्तक में जो शिक्षाएं दी गई हैं उन का उपयोग करने से बहुत प्रकार के रोग और पीड़ा कम हो जाएंगे और बहुत अवसरों में यह जानने से कि उचित समय पर क्या करना चाहिये, जान तक बच सकेगी ॥

इस पुस्तक में जिन २ औषधियों के नाम बताए गए हैं, वे प्रत्येक औषधालय में प्राप्त हो सक्ती हैं। केवल वे औषधियां जो विषैली हैं जिन का लेन देन नियमानुसार बन्द है, प्राप्त करने के लिये किसी डाक्टर के हस्त लेख की आवश्यकता होगी ॥

पुस्तक के अन्तिम भाग में औषधियों की सूची और उन के उपचार लिखे हैं ॥

इस पुस्तक में कहीं २ पर चिकित्सा का वर्णन संख्या द्वारा भी किया है उन की सूची भी पुस्तक के अन्त में दी है ॥

विषय सूचीपत्र। (Contents.)

पृष्ठ



उदाहरणों का सूचीपत्र।

पृष्ठ



"स्वास्थ्य के नियमों के न जानने से कोई मनुष्य जीवन के कर्तव्यों को प्रतिपालन करने के योग्य नहीं है"॥

अध्याय १।

स्वास्थ्य रक्षा का लाभ।

जीवन मनुष्य का बहुमूल्य पदार्थ है और तब स्वास्थ्य है। स्वास्थ्य रहित जीवन केवल व्यर्थ ही नहीं होता, पर इस दशा में मनुष्य और कोई संसारिक भोग विलास का भी सुख नहीं ले सकता है॥

रोगी मनुष्य केवल पीड़ा और कष्ट ही नहीं भोगता है, परन्तु वह अपने आवश्यक कार्य्यों को भी पूरा नहीं कर सकता है, और उसके रोगी होने के कारण एक दो घर के मनुष्यों को अपना स्वयं काम त्याग कर के उसी के देख भाल में लगा रहना पड़ता है॥

इस के अतिरिक्त रोगी अपने अड़ोस पड़ोस के लोगों को भी भय का कारण बन जाता है, क्योंकि बहुत से रोग ऐसे होते हैं जो सुगमता से दूसरों को भी लग जाते हैं, यह बात बहुधा देखने में आती है कि जब घर में एक आदमी रोगी हुआ तो उस के बाद और भी रोगी हो जाते हैं, और इसी प्रकार एक घराने के बाद दूसरे घराने के लोग इस में ग्रस्त हो जाते हैं, और फिर उस मुहल्ले के लोग इसी बीमारी में रोगी हो जाते हैं। और इस से अधिक हानि भी होती है। बहुधा रोग उस घर से दूसरे घरों में पहुंच जाता है जिसका परिणाम यह होता है कि उस समाज के मनुष्य अधिकतर रोगी हो जाने के कारण अपना व्यवसाय भली प्रकार नहीं कर सकते जिस से वह समाज दरिद्रता के दुःख में पड़ जाता है—केवल यही नहीं परन्तु अनेक जानें भी व्यर्थ नष्ट हो जाती हैं—क्योंकि रोगी अपना कार्य्य नहीं कर सकता और कभी २ मृत्यु हो जाती है जो अति शोकित और दुःखदायक होती है॥

इस के अतिरिक्त, जब आरोग्यता जाती रही तो वह एक दिन में फिर हाथ नहीं आ सकती है और कई रोग तो ऐसे होते हैं कि उन के अच्छा करने में अधिक द्रव्य और समय लगता है, जब पहिले की ऐसी स्वास्थ्य फिर मिल सकती है॥

यह प्रत्येक मनुष्य का प्रथम कर्तव्य कार्य्य है, कि अपने शरीर की रक्षा करे और उसे आरोग्य रखे। यह उस को प्रथम अपने लिये और

फिर अपने घराने के लिये, अपने पड़ोसियों के लिये और अपने स्वयं देश के लिये करना उचित है, और यह विशेष कर के अपने सृष्टा के लिये करना उचित है, यह सोचना मिथ्या है कि रोग देवता वा दुष्टात्मा द्वारा अथवा जलवायु के परिवर्तन द्वारा उत्पन्न होता है और हम किसी कारण से उसे रोक नहीं सकते हैं जीना और मरना भाग्याधीन नहीं है॥

आरोग्यता के नियम उलंघन करने से मनुष्य रोगी हो जाता है। वे रोग जो बहुधा प्रचलित हैं उन से रुपये में १३ आने हम बच सकते हैं। स्वास्थ्य के नियमों के अनुसार चलने से वह कामना पूर्ण होती है जो सब मनुष्यों के हृदय में रहती है अर्थात दीर्घायु॥

प्रत्येक बुद्धिमान मनुष्य इस को भली भांति जानता है कि सफ़ाई और स्वास्थ्य के नियमों को पालन करने से आयु दीर्घ होती है। ४०० वर्ष पूर्व यूरोपवासी सफ़ाई पर कम ध्यान देते थे और फल यह होता था कि उस समय वहां पर मनुष्य की औसत आयु केवल २० वर्ष की होती थी पर आज कल इन बातों पर ध्यान देने के कारण मनुष्य की औसत आयु सब यूरोप के देशों में ४० से अधिक हो गई है, और यह उन्नति केवल इस कारण से हुई कि प्रत्येक मनुष्य और प्रत्येक राज्य स्यंम् स्वास्थ्य और शुद्धता के नियमों पर विशेष ध्यान दिया। एशिया के कई देशों में अर्थात् भारत-वर्ष और चीन में अब तक स्वास्थ्य और शुद्धता पर पूर्ण रीति से ध्यान नहीं दिया जाता इस लिये मनुष्य की औसत आयु केवल २० वर्ष की है। यूरोप की औसत आयु के साथ एशिया के कई देशों की औसत आयु की तुलना करने से यह बात स्पष्ट रूप से प्रगट हो जाती है कि जो लोग दीर्घायु के इच्छुक हैं और जीवन को प्रिय वस्तु समझते हैं, उन को अवश्य स्वास्थ्य और शुद्धता पर पूर्ण ध्यान देना चाहिये और रोगों के रोकने और दीर्घायु सम्बन्धी नियमों का यथोचित रीति से प्रतिपालन करना चाहिये॥

बहुधा यह देखने में आया है कि जब तक हम आरोग्यता की दशा में हैं तब तक अपने शरीर की रक्षा के विषय में कुछ विचार नहीं करते, परन्तु जब रोगी और निर्बल हो जाते हैं, तब भग्न स्वास्थ्य होकर अपने शरीर की रक्षा के विषय में विचार करने लगते हैं पर उस समय बहुधा यह सर्व प्रयत्न निष्फल होता है, यह तो इस प्रकार का हाल हुआ, कि जब चोर चोरी करके चला गया तब द्वार बन्द करने की सूझी, यौवन ही में शरीर की रक्षा करने का उत्तम समय है, यह कहा गया है कि बालक के

आरोग्य और पुष्ट होने का प्रबन्ध उस के जन्मने से पूर्व ही करना चाहिये, माता और पिता को अपनी स्वास्थ्य पर यथोचित ध्यान देना आवश्यक है क्योंकि निर्बल और रोगी माता पिता के बालक हृष्ट पुष्ट उत्पन्न नहीं हो सकते॥

इस पुस्तक के पाठक जिन्होंने युवा अवस्था प्राप्त की हो, कदाचित् बहुतों के दुर्बल शरीर हों और कोई २ रोगग्रस्त हों, यदि यह दशा हो तो यह अति योग्य है कि बांचनेवाले इस पुस्तक के न केवल स्वास्थ्य के नियम ही पढ़ें और स्वास्थ्य की दशा में शरीर की सावधानी करें पर यह भी कि रोगी होके फिर उसे स्वास्थ्य में लाना सीखें। इस ग्रन्थ के लिखने का मुख्य अभीष्ट अर्थ यह है कि ग्रन्थवाचक को यह स्पष्ट करा दें कि वह अपने परिवार समेत किस प्रकार से रोगों का अवरोध करे और स्वास्थ्य सुरक्षित रहे, इस में इस प्रकार का सिद्धान्त है। उन प्रचलित रोगों का, जिन की दवा इसके अनुसार घर ही में स्वयं हो सकती है और वैद्य की आवश्यकता नहीं है, निस्सन्देह क्षय-रोग में चतुर वैद्य को बुलाना अत्यावश्यक है क्योंकि इस में बुद्धिमान वैद्य को छोड़ पुस्तक काम न देगी॥

रोगों के कारण।

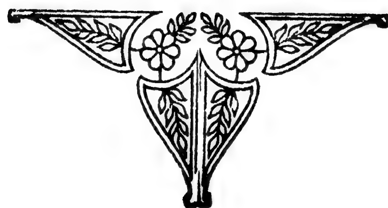
बहुत लोग जड़ता से यह विचार करते हैं कि रोग दैवयोग से होता है, इस में हमारा कुछ बस नहीं चल सकता है, डाक्टरों और विद्वानों का यह मत है रोग मुख्य कारणों द्वारा होता है, यथोचित और बिधिपूर्वक भोजन न मिलने से कई रोग हो जाते हैं जैसे बेरी-बेरी (beri-beri) रोग फिर शरीर में विष घुलने के कारण रोग होता है जैसे यह बहुधा उन लोगों को होता है, जो दियासलाई के कारखानों में काम करते हैं, अपथ्य खाने से अजीर्ण का रोग हो जाता है, उक्त कारण केवल दशांश रोगों की जड़ है और शेष रोग॥

रोग उत्पन्न करनेवाले कीड़े।

मनुष्य के अति हानिकारक शत्रु रोग उत्पन्न करनेवाले कीड़े हैं। प्रति दिन वे हज़ारों की मृत्यु का कारण हैं इन कीड़ों से सर्दी तपेदिक वा राजयक्ष्मा, दस्त मोतीझरा, हैज़ा, ज्वर, कोढ़, ताऊन, खांसी और बहुत प्रकार के रोग होते हैं। इन को पढ़ने से यह ज्ञात होता है कि बहुत रोग इन कीड़ों से उत्पन्न होते हैं और संसार में अधिक मृत्यु इन्हीं के द्वारा होती हैं॥

रोगों के कीड़े दो प्रकार के होते हैं, एक तो वनास्पती से उत्पन्न होते हैं और दूसरे चतुष्पदों से उत्पन्न होते हैं। ये रोगों के कीड़े इतने सूक्ष्म होते हैं कि नेत्र से दृश्य नहीं होते, अधिकांश इतने सूक्ष्म होते है कि खुर्दबीन में सहस्र गुणा बड़ा करने पर भी राई के दाने के बराबर दिखाई देते हैं॥

रोग के कीड़ों की वृद्धि अधिक होती है, अनुकूल दशा में एक हैज़े के कीड़े अथवा एक मोतीझरा के कीड़े से १० घण्टों में दस लाखों कीड़े उत्पन्न हो जाते हैं। तदनन्तर अति सूक्ष्म और सहस्र होने के कारण वे बड़ी शीघ्रता से फैल भी जाते हैं, ये पानी के कुए में, नदी में तालाब में गली की धूल में घर के फ़र्श और भीतों की धूल में हमारे खाने के पदार्थों में और पीने की वस्तुओं में होते हैं, घनी बस्ती में ये सब स्थानों में पाये जाते हैं ऐसा होने पर सब को यह सीखना उचित है कि इन को शरीर में प्रवेश होने से रोकें और यदि इन का प्रवेश हो गया है तो इन्हें कैसे नष्ट करें, इस पुस्तक के और अध्यायों में इन का वर्णन होगा॥

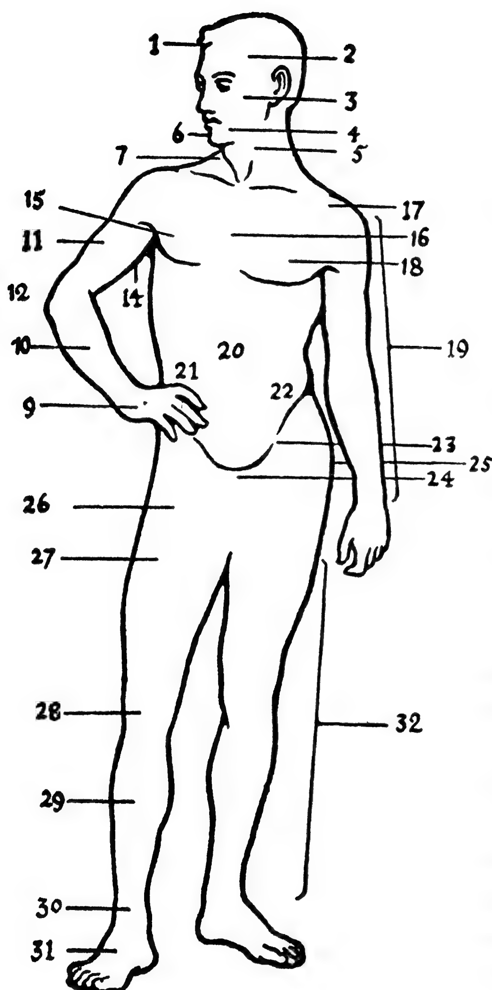


अध्याय २।

शरीर के मुख्य ३ भाग और स्वास्थ्य रक्षा के साधारण ६ नियम।

शरीर के मुख्य ३ भाग हैं अर्थात् सिर, धड़ और ऊपर के और नीचे के अंग। धड़ में बड़े खोल हैं, जिन में प्रायः सब मुख्य इन्द्रियां हैं, यह खोल या पोल उरोद्र पटल या डायाफ्राम (Diaphragm) द्वारा ऊपरी और नीचे के भागों में एक पतली पटल से बिभाजित हैं। अस्थिपञ्जर के सामने के भाग को देखो) ऊपरी भाग छाती कहलाती है। इस में दिल, फेफड़ा, रक्त-वाहिनी नाली और अन्न नल हैं, उरोद्र पटल या डायाफ्राम के नीचे के पोल में पेट की खोल या उदर है, इस में कलेजा आमाशय, तिल्ली, पित्त, छोटी और बड़ी आंतें हैं, गुरदे पीछे की ओर उस के बाहिर हैं॥

शरीर के प्रत्येक अंग का मुख्य उपयोग है और वह शारीरिक अवयव कहलाता है। कई अवयव मिल कर काम कर सकते हैं, जैसे भोजन पाचन-क्रिया में मुख, दांत, अन्ननल, आमाशय छोटी और बड़ी आंतें और लबलबा मिलकर परस्पर काम करते हैं। यह मिलकर पाचन क्रिया के अवयव कहलाते हैं। नाक, श्वासनली, श्वास-प्रश्वास, फेफड़े मिलकर शरीर में स्वच्छ वायु का प्रवेश कराते हैं और जीवान्तक वायु को बाहर निकालते हैं (देखो ६ अध्याय और इस कारण ये श्वास-प्रश्वास के अवयव कहलाते हैं हृदय या रक्ताशय और सब छोटे बड़े खून की नली या नस परस्पर शरीर में रुधिर पहुंचाने की क्रिया करती हैं, इस कारण से खून का दौरान करने वाली अवयव कहलाती हैं। गुरदे, त्वचा, फेफड़े, कलेजा और बड़ी आंतें मिलकर शरीर के मल को दूर करती हैं, इस कारण से उन को स्वच्छ करनेवाले अवयव कहते हैं। मस्तिष्क तथा पीठ का बांसा और छोटे और बड़े चेतना तन्तु शरीर के और अवयवों को चलाते और बस में रखते हैं और ये चेतना यन्त्र कहलाते हैं। इन अवयवों को छोड़ हड्डियां हैं, जिन से अस्थि-पञ्जर बना है शरीर को शोभा देता है, और नसें हैं जिन के द्वारा सम्पूर्ण शरीर में शक्ति पहुंचती है॥



स्वास्थ्य के मुख्य ६ नियम।

यदि शरीर के प्रत्येक भाग रक्षित रहें और उन की आवश्यक्ताएं पूर्ण होती रहें तो उत्तम स्वास्थ्य में होगा ॥

जिस रीति से एक इंजन और उसके यन्त्रों को यथा-योग दशा में रखने के लिये बड़ी सावधानी करनी पड़ती है, उसी रीति से शरीर और उसके बिभागों की सावधानी करनी चाहिये कि स्वास्थ्य पूर्ण रहे। इंजन को अच्छी तरह से दौड़ाने और गाड़ियों को खिचवाने के लिये उस में लगातार पानी और कोयले की आवश्यक्ता है, और जो पुरज़े गति करते हैं उन में तेल भी देना चाहिये। समय समय पर कि योग्य दशा में रहें, जले कोयले और राख को निकालना चाहिये, धूल और मैल को पोंछ कर समय समय पर साफ़ करना आवश्यक है, कि मुख्य पुर्ज़े इंजन

१. माथा २. कनपट्टी ३. गाल ४. जबड़ा ५. गर्दन ६. ठुड्डी ७. गला वा टेंटुआ ९. हाथ १०. साम्हने के बांह ११. ऊपरी हाथ का बाज़ू १२. कुहनी १४. बगल १५, दहनी छाती १६. छाती १७. कन्धा १८. बांयी छाती १९. बांह २०. पेट २१. कलेजा २२. तिल्ली २३. गलहरी २४. चूतड़ २६. कुलहा २७. ऊपरी रांग वा जांघ २८. घुटना २९. पिंडली ३०. टखना ३१. पांव ३२. टांग,

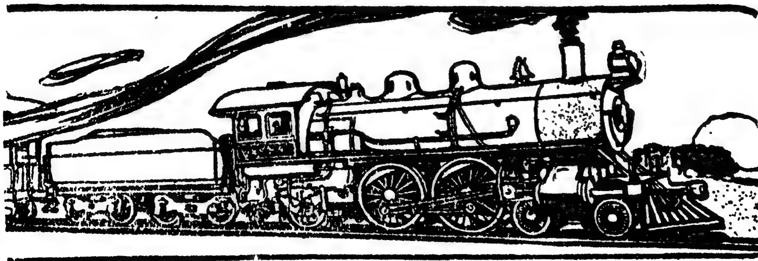
के नष्ट न हो जायें। इंजन चलानेवाले को इन बातों की प्रधानता पूरी रीति से समझनी चाहिये। इंजन के प्रत्येक पुर्ज़ों का काम उस को मालूम होना चाहिये, कि यदि कोई सा पुर्ज़ा बिगड़ जावे तो उसे वह ठीक कर ले, और यह भी मालूम करले कि क्या बिगड़ा है, इंजन चलानेवाले को इंजन चलाने के पूर्व इन सब बातों का ज्ञान आवश्यक है, तो यह प्रत्येक्ष है कि हम को भी अपने शरीर के प्रत्येक्ष भाग का काम और आवश्यकता का ज्ञान होना चाहिये कि हम स्वास्थ्य में रह सकें॥

यदि इंजन चलानेवाला इंजन की रक्षा करनी नहीं जानता है, तो वह उसे तोड़ डालेगा, इसी प्रकार से वह मनुष्य जो अपने शरीर की रक्षा करना नहीं जानता, उसी का शरीर थोड़े ही समय में निर्बल और रोगी हो जायगा प्रति बर्ष हज़ारों अपना जीवन खो बैठते हैं क्योंकि वे अपने शरीर की रक्षा और सावधानी करना नहीं जानते हैं॥

शरीर रक्षा निमित्त जो वस्तुएं आवश्यक हैं और जिन से हमारी स्वास्थ्य बनी रहे उन का सार निम्न लिखित ६ नियमों में है॥

१. शरीर पोषण के लिये उचित भोजन और पानी आवश्यक है॥
२. शरीर को अधिक सूर्य्य ज्योती और ताज़ी वायु भी चाहिये॥
३. शरीर से मल मूत्रादि निकालना चाहिये॥
४. शरीर रक्षित रहे कि सर्दी और गर्मी से हानि न पहुंचे॥
५. शरीर को प्रति दिन उचित व्यायाम और उचित बिश्राम चाहिये॥
६. शरीर को सदा विषैले पदार्थों से और रोग के कीड़ों से सुरक्षित रखना चाहिये॥

इन नियमों पर ध्यान देने से रोगों की रुकावट होती है और दीर्घायु प्राप्त होती है, पर इन में से एक भी लापरवाही करने से अवश्य रोग-ग्रस्त हो ही जाओगे॥



अध्याय ३।

अन्ननल महास्रोत और पाचनक्रिया।

इस अध्याय में हम शरीर और इंजन की तुलना कुछ और करेंगे। इंजन प्राय: सम्पूर्ण धातुओं लोहा और तांबे से बना है। उस में सम्पूर्ण गति पानी और कोयले से होती है, यदि उसका एक आध भाग बिगड़ जावे तो लोहे और तांबे से उस की मरम्मत होती है। इस कारण हम लोहे और तांबे को इंजन की मरम्त करने के पदार्थ कह सकते हैं। उस को शक्तिमान करने के लिये, कि यह चलायमान गति में रहे सदा पानी और कोयले की आवश्यकता है। इस लिये कोयले और पानी को हम इंजन को गर्मी और बल पहुंचानेवाले पदार्थ कह सकते हैं॥

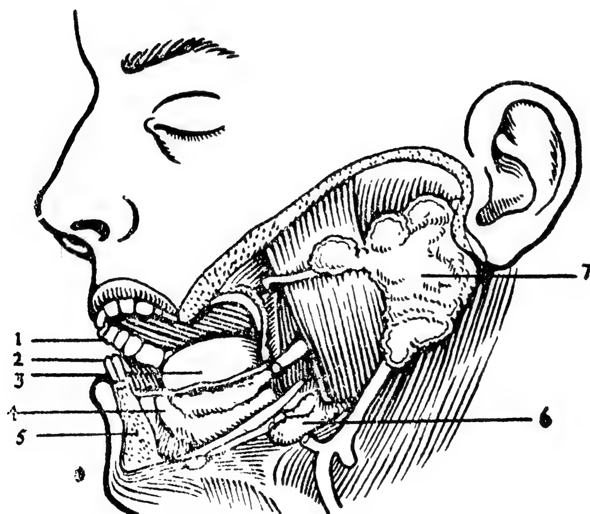
हमारा शरीर नाना प्रकार के पदार्थों के संयोग से रचा गया है। हड्डियों में एक प्रकार का पदार्थ है, त्वचा में दूसरे प्रकार का पदार्थ है और चेतनायन्त्र दूसरे प्रकार के पदार्थ का बना है। चाहे हम जागते हों या सोते हों हमारे शरीर के कुछ अवयव लगातार गति दशा में ही रहते हैं। यन्त्र के समान वे चलते जाते और घिसते जाते हैं, इस न्यूनता और खर्चे को पूरा करने के लिये पदार्थों की आवश्यकता अवश्य है, सो यह कमी भोजन से पूरी होती है जो हम खाते हैं, जिस रीति से इंजन कोयले और पानी द्वारा चलायमान दशा में रहता है, उसी प्रकार से भोजन द्वारा हमें शक्ति प्राप्त होती है और हमारा हृदय धड़कता है और हमारे हाथ और पांव काम कर सकते चल फिर सकते हैं, और प्रत्येक अवयव अपना नियत काम करता है। चाहे सर्दी वा गर्मी हो हमारे शरीर सदा गर्म रहते हैं, यह गर्मी जिस से हमारे शरीर गर्म रहते हैं वह भी उस भोजन से जो हम खाते हैं आती है, सो इस से विदित होता है कि भोजन जो हम खाते हैं सो दो मुख्य काम करता है। प्रथम, वह इंजन के ईंधन के समान हमारे शरीर में गर्मी और उत्साह उत्पन्न करता है। दूसरा वह लोहे और तांबे के समान जिन से इंजन की मरम्मत होती है, क्योंकि वह शरीर के बढ़ने और यथोचित दशा में रखने के लिये पदार्थों को जोड़ता है॥

भोजन का पचना आवश्यक है।

हम जानते हैं कि जब चमड़े का एक टुकड़ा छिल जाता है तो छिले हुए भाग में हम भोजन को नहीं डाल ससकते हैं, और यूं भोजन उसे अच्छा नहीं कर सकता है, यदि बांह में छेद हो जाय और वहां पर हम खाना रख दें तो वह न तो गर्मी और न बल पहुंचावेगा। गर्मी, उत्साह रचना के पदार्थ जुड़ाने के पूर्व भोजन को खाना और पचाना आवश्यक है। भोजन में पचने के लिये जो २ परिवर्तन होते हैं उसे पाचनक्रिया कहते हैं और भोजन पचने के द्वारा हमें गर्मी, बल, बढ़ने की शक्ति और न्यूनता पूर्ण करने के पदार्थ मिलते हैं॥

अन्ननल-महास्रोत।

शरीर का वह भाग जो भोजन पचाने का काम करता है अन्ननल महास्रोत कहलाता है। यह अन्ननल महास्रोत मुख से आरम्भ होता है। बड़ी आंत लों चला गया है इस के मध्य का भाग गूड़ी मूड़ी हो कर गुदा द्वार तक पहुंचा है। पूर्ण मनुष्य में यह नल ३० फ़ीट लम्बा होता है, इस अन्ननल के भागों के नाम ये हैं, मुंह, गला, आमाशय, छोटी और बड़ी आंतें॥

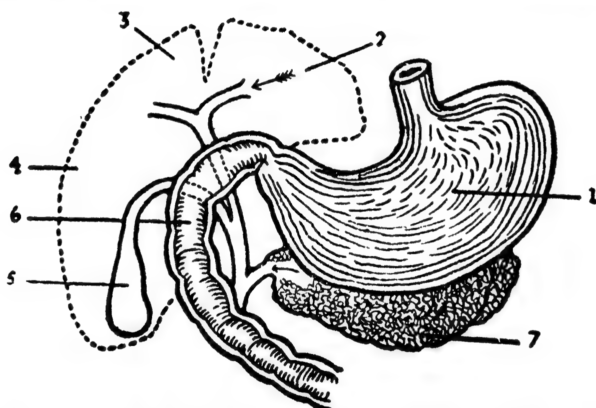


१. ऊपर के दांत २. नीचे के दांत ३. जीभ ५. नीचे का जबड़ा ४, ६. और ७. थूक की थैलियां।

मुंह द्वारा खाना शरीर में जाता है। दांतों द्वारा मुंह में यह अच्छे प्रकार से चबाना चाहिये, चबाते समय पर थूक में सन जाता है जो छै पिराड से उत्पन्न होता है और ये थूक के पिराड कहलाते हैं। इन पिराडों को तुम चित्र में जो दिया गया है देख सकते हो। पाचन क्रिया के काम में थूक की आवश्यकता है इस लिये खाने को जल्दी नहीं निगलना चाहिये पर समय लगा कर खाने को भली भांति चबा लेना चाहिये कि आमाशय में प्रवेश पूर्व वह रस पाचन रस में खूब मिल जावे, जब भोजन निगला जाता है तो वह अन्ननल द्वारा आमाशय में जाता है॥

आमाशय।

आमाशय एक थैली के समान अन्ननल के सिरे पर होता है, उस का स्थान और आकार (आस्थि चित्र) देखने से मालूम हो जायगा। एक मनुष्य के आमाशय में डेढ़ सेर से दो सेर लों समा सकता है।



१. आमाशय २. कलेजे की नली ३. और ४. कलेजा ५. पित्ताशय ६. छोटी आंतें ७. लबलबा.

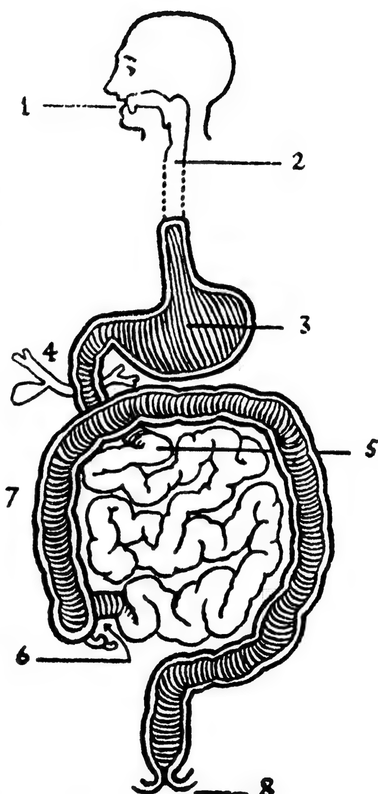
आमाशय की भीतरी सतह मुंह के भीतरी सतह के समान होती है। यह भीतरी सतह एक प्रकार का रस उत्पन्न करती है, जो जठर-रस कहलाता है, यह जठर-रस खट्टा होता है और मुंह के थूक की नाई पाचन क्रिया में सहायक होता है और भोजन को शरीर के उपयोग के लिये ठीक करता है॥

यदि हम आमाशय के भीतरी सतह को जब वह जठर-रस एकत्र करता है देखें तो वह ठीक वैसा ही दीखता है जैसा हमारे शरीर में जब

पसीना आता है, जैसे सहत पर जठर-रस के कण दिखाई देते हैं वैसे ही हमारे शरीर पर पसीने के कण दिखाई देते हैं॥

आमाशय में जो भोजन जावे वह खूब अच्छी रीति से पकाया हुआ हो और भली भांति चबाया हुआ भी हो, यदि भोजन अधकच्चा पका हो तो वह पूरा २ नहीं पचेगा और ऐसे भोजन को खाने के पश्चात् आमाशय में एक प्रकार की जलन होगी और पीड़ा भी होगी और खट्टी डकारें भी आवेंगी॥

जब कभी किसी प्रकार का मद्यपान होता है तो उस से आमाशय को हानि होती है, चाय पीने से और तम्बाकू पीने से भी आमाशय का बिगाड़ होता है। मिर्च, अद्रक, और मसालेदार चीज़ें और पान आमाशय की भीतरी सतह को हानिकारक होती हैं यदि, मिर्च अद्रक और गर्म मसाला मुंह में रखा जाय तो मुंह जलने लगता है, पर हम इस जलन पर ध्यान नहीं देते हैं क्योंकि हमारा मुंह ऐसे खाने खा कर ऐसे अभ्यास का हो जाता है कि मालूम नहीं कर सकता जैसे लोहार को गर्म लोहे उठाने के अभ्यास के कारण गर्म वस्तु उठाने में दर्द नहीं होता है। गर्म मसाले से आमाशय की सतह को मुंह से अधिक हानि होती है, और आमाशय उन को शीघ्रता से निकाल नहीं सकता है, क्योंकि भोजन पचने लों वह जलता रहेगा चाहे एक घण्टे में पचे वा कई घण्टों में, वह मसाले शरीर के लिये कुछ लाभदायक नहीं हैं, किन्तु हानि-



१. मुंह २. अन्न-नल ३. आमाशय ४. पित्ताशय और पित्त नली ५. छोटी आंत ६. परदा जो छोटी आंत और बड़ी आंत के मध्य में है ७ बड़ी आंत ८. गुदा।

कारक ही होते हैं. इस कारण इन को खाना उचित नहीं है॥

छोटी आंतें।

जब भोजन आमाशय में ३० मिनट से ले कर कई घण्टों तक रह चुकता है तब उसका अधिक भाग छोटी आंतों में चला जाता है। परन्तु यदि अच्छी रीति से चबाया हुआ है, तब तो थोड़ी देर रहता है नहीं तो बहुत देर तक रहता है। छोटी आंत २० फ़ीट लम्बी नली है जो आमाशय के पोल में गुंडी मुंडी हुई रहती है। (चित्र को देखो)॥

एक छोटा नल कलेजा और पित्ताशय से चला गया है, जो छोटी आंत के ऊपरी छोर पर खुलता है। पित्त रस जो कलेजे में तैयार होता है इस नल में से होके छोटी आंत में जाता है। भोजन को शरीर के लिये पुष्टिकारक करने के लिये पित्त रस अति उपयोगी है, दूसरा छोटा नल लबलबा से निकलता है और छोटी आंत के ऊपरी छोर पर खुलता है। जो रस इस लबलबा में बनता है वह छोटी आंत में जाता है, और भोजन की पाचनक्रिया में मुख्य काम देता है॥

बड़ी आंतें।

उस समय लों कि छोटी आंत का सामान नीचे के भाग में पहुंच कर बड़ी आंत में प्रवेश करे भोजन का प्रायः सकल पुष्टिकारक भाग शरीर के पुष्टि के लिये लोहू में प्रवेश हो जाता है और सारहीन पदार्थ जो रह जाता है वह बड़ी आंत में प्रवेश करता है। इस मल और सारहीन पदार्थ में कई परिवर्तन होते हैं, इस में बिषहरे और मल पदार्थ बनते हैं. यह अति आवश्यक है प्रति दिन मल निकल जावे, नहीं तो यह विषहरे पदार्थ खून में प्रवेश कर सकल शरीर में फैल जावेंगे, और इन से दुर्गन्धि मुंह से आने लगेगी और सिर में पीड़ा होगी और २ रोग भी हो जायेंगे वह दुर्गन्धि जो उन लोगों के मुंह से निकलती है जिन्हें अजीर्ण है, ठीक व्यर्थ पदार्थ की सड़ी दुर्गन्धि के समान होती है। इस से यह बात प्रमाणिक है कि वह जिस को अजीर्ण है उस के पेट का सारहीन पदार्थ और मल सम्पूर्ण शरीर में प्रवेश करता है, और हम सब इस बात को जानते हैं, कि विश कैसा हानिकारक है॥

बने भोजन का शरीर में भिद जाना।

जब भोजन पूर्ण रीति से पच चुका तो वह पानी के समान रस

बन जाता है, और यह रस रक्त के उन तत्वों से जो आमाशय और छोटी आंत में होते हैं, उसी प्रकार से चूसा जाता है जैसे शक्कर मिला जल मोटे कपड़े की कई तह की बनी थैली म से छनता हो॥

जब पचा हुआ भोजन रक्त में प्रवेश कर के शरीर के प्रत्येक अवयव में घूमता है, तो गर्मी और बल उत्पन्न करता है, और वही काम देता है जैसे इंजन मे कोयला। रक्त जब शरीर के रोगी अवयवों में से हो कर घूमता है तो पचे हुए भोजन के सार रस से उन्हें स्वास्थ्य कर देता है॥

इस से यह प्रकाशित होता है कि हमारा शरीर उस भोजन से जो हम खाते हैं बना है। पवित्र स्वास्थ्य शरीर बनाने के लिये हमें उचित है कि स्वच्छ और निर्मल भोजन खावें। यह अचम्भित बात है कि गेहूं, चांवल और अन्य २ पदार्थ जो हम खाते हैं, वह स्नायु, हड्डी और चेतना-तन्तुओं में परिवर्त्तन हो जाते हैं, परन्तु यह बात सत्य है। यह प्रत्यक्ष है, कि सर्व शक्तिमान सर्वज्ञ परमेश्वर ने हमारे शरीर को उत्तम उपाय से रचा है इस लिये कि और अद्भुत नियम से हमारे शरीर को सम्पूर्ण स्वास्थ्य, उष्णता और शक्ति का सामान मिलता रहता है, और न संयोग अथवा मनुष्य बुद्धि से यह रचना हो सकती थी॥

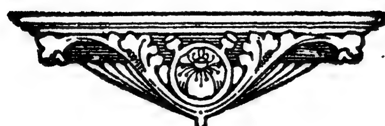
सूचना—पानी पीने की मुख्यता।

भोजन का सारहीन पदार्थ जब बड़ी आंत में पहुंचता है तो प्रायः द्रव्य पदार्थ की नाई होता है। छोटी आंत में उसका सम्पूर्ण सार-रस चूस लिया जाता है, और अब वह इस योग्य है कि वह शरीर से बाहर निकाला जावे, क्योंकि वह अब वह छोटो आंत को निरुपयोगी है, अब बड़ी आंत इस मल के द्रव्य भाग को खींच कर शीघ्र लेती है, और यह द्रव्य भाग गुर्दा द्वारा शरीर के बाहर निकाला जाता है। इस सम्पूर्ण शोख घटना का यह परिणाम होता है कि बड़ी आंत का कुछ मल, प्रायः दृढ़ पदार्थ बन जाता है। सिकुड़ने और फैलने की घटना द्वारा जो मल बड़ी आंत के आगे पीछे होता है, तथा निकम्मा मल धीरे २ से आगे ढकेल दिया जाता है यहां लों कि वह बड़ी आंत के नोचे के भाग में पहुंच जाता है, यहां पर वह कुछ समय रह कर गुदानल से मल द्वार में आकर, बाहर होजाता है॥

बड़ी आंत में एक सारहीन पदार्थ उस समय लों जमा रहता है जब लों शरीर उस को बाहर करने के योग्य होवे, जो मनुष्य थोड़ा ही पानी पीते हैं उन के शरीर में भोजन सारहीन पदार्थ का पानी सब सूख जाता है और इस कारण बड़ी आंत को अपना मुख्य कार्य्य करने के लिये पूरा २ पानी नहीं मिलता, ऐसे लोगों को अजीर्ण होने का भय है, इस का आशय यह है कि मल शरीर से अति देर में निकलता है॥

इस पर ध्यान देना कि यथोचित पानी छोटी आंत के द्रव्य पदार्थ के लिये आवश्यक है और यह द्रव्य पदार्थ भी उसी समय यथोचित दशा में होगा जब हम ठीक परिमाण भर पानी पीयें। जब आवश्यकता से अधिक द्रव्य वस्तु छोटी आंत में आ जाती है, अधिकांश बाहर निकल जाता है। इस की अपेक्षा जब भोजन सार पदार्थ छोटी आंत में पूरे २ पानी समेत नहीं जाता है, तब बड़ी आंत में भोजन प्राय सूखा पहुंचता है। इस कारण बड़ी आंत के कार्य्य के लिये खूब पानी पीना चाहिये, अतएव यह शिक्षा ध्यानपूर्वक है कि खूब पानी पीओ॥

सम्पादक



अध्याय ४।

दांत और दांत रक्षा।

बच्चा जब छः अथवा सात मास का होता है, तब से दांत निकलने लग जाते हैं, वर्ष भर की अवस्था में बालक के छः दांत निकल आने चाहियें और डेढ़ साल में बारह; दो वर्ष में सोलह यहां कि अढ़ाई वर्ष की अवस्था में दूध के बीस दांत निकल आने चाहियें। बालक जब छः साल का होता है, उस समय उसके पक्के दांत निकलने आरम्भ होते हैं। पहिले चार पक्के दांत दूध के दांत के पीछे निकलते हैं और तब साम्हने के दूध के दांत ढीले होकर उखड़ जाते हैं, तब धीरे २ दूध के दांत गिर जाते हैं और उन की जगह पक्के दांत आ जाते हैं॥

छोटे बालकों के दांतों को सावधानी से स्वच्छ करना उचित है, दूध के दांत पक्के दांतों के निकलने के समय लों रहने चाहियें, बहुत लोगों के दांत कुरूप और बेढंगे इस कारण से होते हैं, कि बाल्यावस्था में उन के दूध के दांतों की यथोचित सेवा नहीं हुई और परिणाम यह हुआ कि उन के दूध के दांत इसके पूर्व कि पक्के दांतों के निकलने का समय आवे गिर गये थे और उन की जगह खाली हो गई थी। इस कारण जब पक्के दांत निकले तो टेढ़े निकले या साम्हने को आगे निकल आये अथवा पीछे की ओर मुड़ गये॥

पक्के दांत बत्तीस हैं। पीछे के चार बड़े दांत सोलह वा सतरह अठारह वर्ष की अवस्था लों नहीं निकलते। जीवनान्त लों इन पक्के दांतों को मुंह में होना चाहिये। नाक, कान और उंगलियों के समान दांत भी शरीर के मुख्य अवयव हैं। और एक दांत का गिर जाना वैसा ही हानिकारक होता है जैसे एक अंग का न रहना॥

दांतों का मुख्य उद्देश्य।

दांत का काम भोजन को चबाना है अर्थात् उस को सूक्ष्म कणों में पीस डाल कर थूक में सान देना और इस रीति से पाचन क्रिया आरम्भ करना दांतों से बोलने में भी सहायता मिलती है। क्योंकि जब वे नहीं रहते

हैं तो कई शब्दों का ठीक उच्चारण नहीं कर सकते हैं। दांतों का उपयोग अति आवश्यक है। और उन की दशा से स्वास्थ्य पर बहुत बड़ा प्रभाव होता है, यहां लों कि यूरोप की एक बड़ी जाति की सेना के दांत और दतूनों या कूचियों की प्रति दिन वैसी परीक्षा की जाती है जैसे उन की तोपों की। कई बीमा कम्पनियां अपने ग्राहकों के दांतों की परीक्षा रक्षा निमित्त अपने खर्च से दांत वैद्य या "डेनटिस्ट" से करवाते हैं। क्योंकि यह उन को लाभ दायक होता है उस की अपेक्षा कि दांत रोगों से जो रोग होते हैं और मृत्यु उस पर बीमा देवे॥

मैले और रोगग्रस्त दांत स्वास्थ्य को हानिकारक हैं।

जो मनुष्य अपने दांत को प्रति दिन स्वच्छ नहीं करता यदि वह दांत खोदनी से दांत के ऊपर का ज़रा सा मेल निकाल कर देखे तो उस की दुर्गन्धि से उस को बिदित हो जायगा कि उस के दांतों में रोग दायक पदार्थ उपस्थित हैं। इस दांत के सड़े पदार्थ में लाखों लाख कीड़े उत्पन्न होते हैं, ये कृमि खाते समय भोजन में मिल जाते हैं, पिघलते समय ये भोजन के साथ आमाशय और आंत में प्रवेश करते हैं। यहां वे भोजन को सड़ा कर खट्टा कर देते हैं, और उस से अजीर्ण और पेट ख़राब हो जाता है। दांत से ये कीड़े गले की कौड़ियों में और नाक और कान और फेफड़े तक पहुंच जाते हैं। और इन अवयवों में भी रोग उत्पन्न कर देते हैं। जब किसी के दांत रोगी हो जाते हैं तो श्वास के संग दांत से बिषभरी वायु मिल जाती है और वह विषहरी वायु फेफड़े में जा कर न केवल उसी में रोग उत्पन्न करती हैं परन्तु रक्त में प्रविष्ट हो कर सम्पूर्ण शरीर को हानिकारक हो जाती है॥

क्षय और कई रोगों में प्रथम काम जो डाक्टर को करना पड़ता है वह यह कि रोगी के दांतों को उत्तम दशा में रक्खे, सो उस को प्रति दिन कूची से दांत स्वच्छ कराने या उन को जो सड़े हैं निकालना या भरवाने का नुस्खा देना पड़ता है। यदि वह प्रथम इस प्रकार से दांतों को ठीक न करे, तो शरीर को पुष्टिकारक भोजन जो रोगी को बल देता है और रोग से जो हानि हुई है उस हानि को पूरी करता है जो नहीं पूरी हो सकती॥

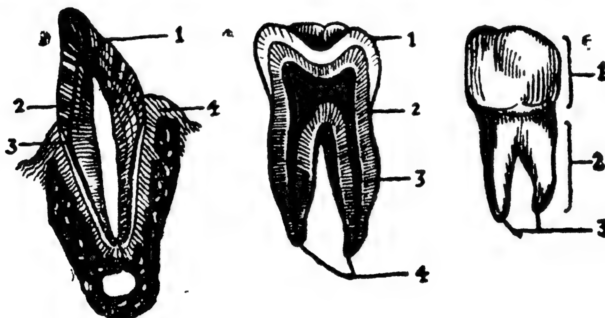
किस कारण से दांत सड़ते हैं।

भोजन के कण जो चबाते समय रह जाते हैं दांतों में सड़ कर दांतों

को ख़राब कर देते हैं। जब एक दांत सड़ने लगता है तो उस के निकट-वर्ती दांत भी कुछ समय पश्चात् सड़ने लगते हैं ठीक आम के समान, जब एक आम सड़ता है तो टोकरी में जो दूसरे आम उसके पास रक्खे हैं वे भी सड़ने लगते हैं॥

भोजन के कण दांतों के बीच मसूड़ों या दांतों की सतह के छेदों में अटक जाते हैं, और जैसे ही कीड़े मसूड़ों के किनारों में उत्पन्न होने लगते हैं। मसूड़े ढीले पड़ जाते हैं और दांतों की जड़ें खुल जाती हैं कीड़े इन में मार्ग अपने लिये बना लेते हैं और बढ़ते हैं। और पीप उत्पन्न करते हैं इस दशा में यदि कोई शीत या उष्ण वस्तु खाई जावे तो दांत दुखते हैं और अंत में धीरे २ हिलने लगते हैं और व्यर्थ हो जाते हैं और उखाड़ने पड़ते हैं॥

पान खाना एक बड़ा हानिकारक अभ्यास है। इस से थूकने की मलीन आदत पड़ जाती है पान चबाते समय जो ढेर सा थूक उत्पन्न होता है वह निरुपयोगी हो जाता है। चूना जो पान के साथ खाते हैं उस से मसूड़े सिकुड़ जाते और ढीले हो जाते हैं और दांत सड़ने लगते हैं। यह बात कि कोई २ लोग जो बहुत समय से पान खाते हैं, और इस पर भी उन के दांत ठीक हैं। यह कुछ उचित प्रमाण नहीं है कि पान खाना हानिकारक नहीं है। जैसे कि कोई अफ़ीमची बहुत वर्षों तक जीवे तो यह सिद्ध न हुआ कि अफ़ीम खाना हानिकारक नहीं है॥



१. इनामल	१. इनामल	१. चोटी
२. डेग्टीन	२. दांत की गर्दन	२. जड़
३. सीमेंट	३. डेग्टीन	३. नसें
४. दांतों की अस्थि त्वचा	४. नसें	

दांतों की रक्षा कैसे करनी चाहिये।

दांतों को उतनी बेर स्वच्छ करना चाहिये जितनी बेर उस से काम लेते हैं, परन्तु कम से कम दो बार एक तो सबेरे उठ के स्वच्छ करना चाहिये और फिर सोते समय। भोजन के कण एक लकड़ी की कोरनी से निकालने चाहियें (धातु की कोरनी कभी उपयोग न करनी चाहिये,) और तब एक सख़त कूची से और पानी से साफ़ कर डालो। कूची से खूब इधर उधर ऊपर नीचे फेर कर स्वच्छ करो, भीतरी भाग और बाहरी खूब कूची फेर कर साफ़ कर डालो। कूची के बाल हर तरफ़ जा कर भोजन के कण जो रहे सहे हों निकाल डालें भोजन के कण जो दांत की कोरनी से नहीं निकलें या खींचने से नहीं निकलते उन को रेशमी तागे या सूत के दरार में डाल के खींचने से निकाल सकते हो। मसूड़ों के किनारों को भी कूची फेर कर साफ़ करना उचित है। यदि ज़रा सा खून निकले तो कुछ चिंता न करो। कई बार कूची करने से वे सख्त पड़ जायेंगे, दांत का मञ्जन एक बार प्रति दिन उपयोग करो, कुछ खड़िया मिट्टी (Precipitated Chalk) ले कर दाल चीनी का ज़रा सा तेल सुगन्धि के लिये डालो तो इस से उत्तम मञ्जन बन जाता है। (देखो ५० अध्याय उपचार नम्बर १४)॥

साधारण नमक दांत स्वच्छ करने को उत्तम होता है। इस को मञ्जन की नाईं कूची में खूब छिड़को और तब इस से दांत खूब स्वच्छ करो॥

दांतों को कूची से खूब स्वच्छ करने के पश्चात् कूची में नमक मल कर दूसरी बेर उपयोग करने के लिये रख दो, यदि ऐसा न करोगे तो कूची मलीन हो जायगी, और लाभ की अपेक्षा हानि होगी, दांत साफ़ करने के लिये सदा पक्के पानी का उपयोग करना चाहिये, क्योंकि कच्चे पानी के कीड़ों से दस्त और हैज़े के रोग का भय है। यह बात बहुधा देखने में आती है कि दांत स्वच्छ करने के समय लोग पानी या तो तालाब से या बर्तन से लेते हैं और मुंह हाथ भी उसी से धोते हैं। यह बड़ी मलीन आदत और हानिकारक भी है। और वैसे ही उबला पानी भी पीना उचित है। क्योंकि जब हम अपने दांत धोते हैं तो कुल्ली में पानी यदि बाहर निकलता है पर पूरा २ नहीं निकल सकता। इतना रह जा सकता है जिस से मोतीझिरा, दस्त और हैज़ा हो सकता है॥

जब कोई दांत खोखला होने लगे तो शीघ्रता पूर्वक उसे दांत डाक्टर

से भरवा लो, क्योंकि जल्द भरवाने से खर्च और पीड़ा दोनों कम होती हैं। जब दांत में छोटा सा छेद हो और उसे भरवा न लें तो उस के इधर उधर के दांत भी खराब हो जायेंगे दांतों को प्रति दिन दो बेर कूची से स्वच्छ करना उचित है। ज्यूंही कोई दांत खराब होने लगे, शीघ्र दांत वैद्य से ठीक कराओ, नहीं तो दांत पीड़ा और उखाड़ने का दुख और बनाये दांतों का खर्च उठाना होगा और बनाये दांतो से भी यथायोग काम नहीं होता है॥



भोजन और खाना खाने की बिधि।

भोजन जिस की आवश्यकता है हमारे शरीर को हृष्ट पुष्ट रखने के लिये वह तीन साधारण भागों में बांटा जा सकता है। प्रथम "कारबोहाइड्रेटस" (अर्थात् वे बस्तुएं जिन में श्वेतसार तत्व है) दूसरी "प्रोटीडूस" (अर्थात् अण्डे की सफ़ेदी के समान पदार्थ) तीसरी चिकना अर्थात् घी तेल इत्यादि)। इन के उपरान्त शरीर को जल भी चाहिये। कुछ खानिज तत्व की भी आवश्यकता है (जैसे नमक इत्यादि) और एक मुख्य पदार्त् जो कि साग पात फल फूल इत्यादि में पाया जाता है शरीर को इन सब तत्वों की मिक्र-दार भर आवश्यकता है। इस कारण से कोई एक तत्व जैसे चावल वा आलू पूर्ण पोषण नहीं कर सकता है। बहुतेरे लोग केवल चावल खाकर अपनी हानि करते हैं। सेम, मटर, दाल, अण्डे, और साग चावल के साथ अवश्य खाने चाहियें क्योंकि इन के द्वारा पौष्टिक तत्व की कमी पूरी हो जाती है॥

धर्म्भ शास्त्र में मनुष्य की उत्पत्ति के सम्बन्ध में उस के भोजन के लिये अनाज और फल और किराना अर्थात् बादाम और मूंगफली इत्यादि दिये हैं। मनुष्य सर्वज्ञानी सृजनहार द्वारा बनाया गया है। और यह बिदित है कि वह जिस ने मनुष्य के शरीर को रचा, जानता था, कि किस प्रकार के पुष्टिकारक भोजन की उस को आवश्यकता थी। बहुतेरे प्रमाणों द्वारा बिदित हो चुका है, कि शरीर फल, अन्न और चिकने चीजों के द्वारा पुष्ट और स्वास्थ्य रह सकता है। और यदि ये मिल सकें तो मांस खाने की कोई भी आवश्यकता नहीं है॥

भोजन के पोषण कारक अन्न गेहूं, दाल, सेम, चावल, मक्का और बाजरा हैं॥

उत्तम गरी, अखरोट, काजू, बादाम और चीना बादाम हैं॥

भोजन खाते समय ही और खाने के समान गरी बादाम आदि खाना चाहिये और इन को खूब चबाना चाहिये॥

उत्तम फल ये हैं। नारंगी, केला, आम, सेव, अंगूर, खूबानी, आड़ू अमरूद और अंजीर। फल अति पौष्टिक भोजन हैं। इन के द्वारा खून निर्मल और स्वच्छ रहता है और पाचन क्रिया में भी लाभदायक हैं बहुत से फल जो बाज़ार में ख़रीदते हैं यदि कच्चे खाने हों तो उबलते पानी में डाल कर निकालो और छीलो तब उन को खाओ। कई फल भूनने से स्वादिष्ट होते हैं और शक्कर में डाल कर पकाने से भी अति स्वादिष्ट होते हैं। कुछ कच्चे भोजन जैसे कच्चे फल या कच्चे साग पात, मनुष्य के भोजन के लिये विशेष कर पुष्टिकारक भोजन होते हैं क्योंकि इन कच्चे भोजन में पोषण के यथेष्ट तत्व होते हैं। बालकों को फल और तरकारी खिलाना अति उपकारी होता है। क्योंकि उन के बढ़ते शरीर के लिये ये अनुकूल तत्वों वाले होते हैं॥

अण्डे और दूध भी भोजन के उत्तम पदार्थ हैं। छोटे बच्चों के लिये दूध अत्यन्त हित कारक है। पर पीने के पूर्व दूध को सदा उबाल कर के पीना चाहिये। उबालने के बाद छः वा सात घण्टों से अधिक दूध को न रखना चाहिये क्योंकि इस में रोग के कीड़े शीघ्र वृद्धि करते हैं॥

मांसाहार।

मांस को जो समझते हैं कि मनुष्य के भोजन में एक मुख्य वस्तु है भूल करते हैं। उन देशों में जहां का जल वायु समशीतोष्ण है या उष्ण है वहां बहुत से पुष्टिकारक और अनुकूल भोजन के पदार्थ पाये जाते हैं जो मांस की अपेक्षा सस्ते और लाभ दायक भी होते हैं॥

इन दिनों ऐसे जन्तु जिन का मांस खाने का प्रचार है कम हैं जिन में रोग न हो, गौ आदि ऐसे जन्तु हैं कि बहुधा उन रोगों में से मनुष्य जाति के समान इन को भी रोग होते हैं, और वे जो ऐसे रोगी जन्तुओं का मांस खाते हैं उन को भी वे ही रोग लग जाने का भय रहता है। कई देशों में सुअर का मांस मांसाहार में अति साधारण प्रकार का भोजन है और हम जानते हैं कि सुअर अति मैला और घृणित जन्तु है। वह सब प्रकार का गला सड़ा पदार्थ खाता है और मैली कुचैली जगह में प्रसन्नता पूर्वक रहता है। अति प्राचीन पुस्तक में जिस में मनुष्य के पथ्यापथ्य भोजन का ब्योरा दिया है यह भी लिखा है कि सुअर अपवित्र जंतु है और उस का मांस आहार में कदापि न करना चाहिये॥

बहुत लोग भूल से यह बिचार करते हैं कि और कोई खाने के पदार्थ से अधिक पोषणकारक वस्तु मांस में पाई जाती है अमेरिका के रसायन शास्त्रियों ने रसायिनिक प्रयोगों से भली भांति पृथक्करण द्वारा यह निर्णय किया है कि यह सच नहीं है, वे यह बताते हैं कि आध सेर मूंगफली में इतना पौष्टिक तत्व वाला पदार्थ पाया जाता है जो अढ़ाई सेर मांस में नहीं होता। इस से यह भी विदित है कि मांस अति मंहगा भोजन है, यदि हो सके तो फल, अन्न, सूखा मेवा और साग तरकारी का उपयोग कर खर्च को बचाओ और अपने को गोश्त अधिक खाने के कारण जो हानिकारक परिणाम हैं उन से भी बचाओ॥

भोजन पकाना।

पक्के फल और सूखे मेवे को छोड़ शेष खाने के पदार्थ खाने के पूर्व पकाने चाहियें। पकाने से तीन काम पूरे होते हैं। प्रथम कि रोग उत्पन्न करनेवाले कीड़े जो बहुधा खाने के पदार्थों में वृद्धि पूर्वक पाये जाते हैं पकाने से नष्ट हो जाते हैं। दूसरी बात यह है कि पकाने से भोजन शीघ्र पचता है। क्योंकि भोजन के पदार्थ अर्थात् गेहूं, दाल, सेम ये पचाए नहीं जा सकते जब तक कि पकाये न जायें। तीसरा पकाने से स्वाद आ जाता है क्योंकि चांवल, दाल, गेहूं, मटर कच्चे खाने में ऐसे स्वादिष्ट नहीं लगते जैसे कि पकाने के पश्चात् लगते हैं॥

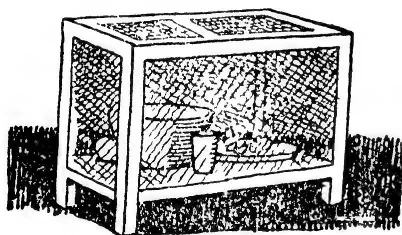
तीन विधि पकाने की हैं अर्थात् उबालना, भूनना और तलना॥

तलना अच्छा नहीं है, यद्यपि भोजन इस प्रकार से शीघ्र ही तैयार हो जाता है अच्छा है कि हम अधिक समय पकाने में लगायें, क्योंकि तला हुआ भोजन पाचनशक्ति को हानिकारक है। तलते समय तेल जो तलने में काम आता है प्रत्येक तले हुए पदार्थ पर ऐसे लग जाता है मानों वह तेल से रच गया हो; तदन्तर जब वह तेल रचा भोजन आमाशय में पहुंचता है तो पचता नहीं क्योंकि आमाशय का रस तेल नहीं पचाता है। परिणाम यह होता है कि तला पदार्थ आमाशय में एक दो घण्टे पड़ा रहता है और तब सड़ने लगता है और इस से दर्द और जलन उत्पन्न होती है। तली वस्तु बराबर खाने से अजीर्ण रोग हो जाता है॥

उत्तमता से भोजन पकाने से घराने का स्वास्थ्य अवलम्बित है। यह दुर्भाग्य है कि लोग रसोईघर की स्वच्छता पर पूरा २ ध्यान नहीं देते हैं, और इस पर भी उचित बिचार नहीं करते कि पकानेवाला यथायोग्य

पका सकता है कि नहीं। बहुतेरे लोग जब घर बनाते हैं तो शेष घर पर अधिक द्रव्य व्यर्थ करते हैं पर रसोईघर एक गिरा हुआ छोटा सा कमरा जिस में न खिड़की है न वायु यथोचित रीति से आती जाती है, और बहुधा ऐसी मैली और नीची जगह में जहां सीलन है रसोईघर रखते हैं। ऐसे स्थान में स्वच्छ और पौषणकारक भोजन कदापि भी नहीं बन सकता है। सम्पूर्ण घर में रसोईघर सब से उत्तम होना चाहिये, खिड़कियां होनी चाहियें कि यथोचित ज्योति आवे। फ़र्श, दीवार और छत स्वच्छ रखना चाहिये, छत और दीवारों पर सफ़ेदी समय २ पर करानी आवश्यक है। बालटी घड़े वा टीन ढकनेदार होने चाहियें और इन में कूड़ा कचरा और मैला पानी डालना चाहिये। कूड़ा और मैला जल द्वार के साम्हने अथवा कस ओर या फ़र्श पर कदाचित न डालना चाहिये क्योंकि इस से स्थान मैला हो जाता है और मक्खी और रोग के कीड़ों की शीघ्र वृद्धि होती है॥

एक जालीदार अलमारी होनी चाहिये और भोजन इस में रखना चाहिये कि मक्खी और दूसरे कीड़े उस पर न चढ़ें और भोजन में न फलें (चित्र के समान बनवाओ), चूहे, चुहियां, मक्खी, चिऊंटी, झींगर और दूसरे कीड़े अति मैले होते हैं, उन के पैर और शरीर पर मैली और विषभरी वस्तु होती है। और वे इस मल को भोजन पर लगा देती हैं, वह बहुधा देखा जाता है मक्खी मल मूत्र खा कर घर में घुस कर रसोई घर में खाने पर बैठ जाती हैं इस लिये सब भोजन ऐसी जगह में रखना चाहिये जहां पर चूहे, चुहियां और मक्खियां उस पर न जा सकें। बावरची को सदा साफ़ और सुथरे वस्त्र पहिनना चाहिये॥



जाली से सब भोजन को बचाओ वा रक्षित रक्खो।

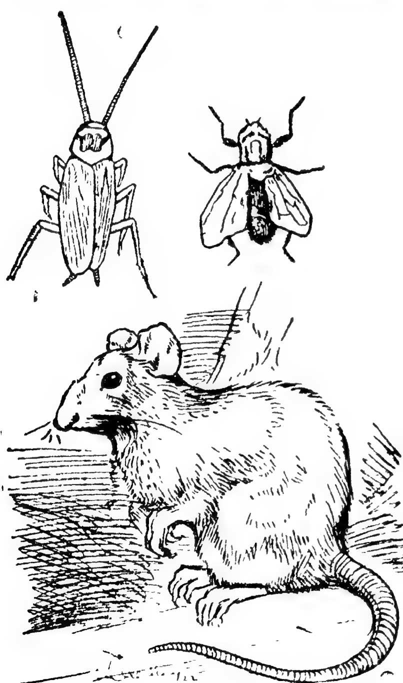
चांवल और साग तरकारी को स्वच्छ जल में खूब धोना चाहिये, नाले वा तालाब के गन्धे पानी में उन को कदापि न धोओ, झाड़न जिन से बर्तन धोकर पोंछो उन को प्रति दिन उपयोग पश्चात् धोओ और बदलो और दो चार दफ़ा उबाल भी डालो। और इन को ऐसे स्थान पर टांगो जहां पर मक्खियां उन पर न बैठने पावें। पकाने और खाने के बर्तनों को

धो कर उन पर उबलता पानी छोड़ो तब एक साफ़ कपड़े से पोंछ कर सुखा डालो॥

भोजन पक चुकने पर उसी दिन खा लिया जावे, क्योंकि उष्ण ऋतु में बहुधा पकाया हुआ खाना शीघ्र बिगड़ जाता है। बिगड़ा वा सड़ा हुआ खाना कदापि न खाना चाहिये, जब खाना सड़ता है तो उस में कीड़े उत्पन्न हो जाते हैं। यह कीड़े विष उत्पन्न करते और यदि इस प्रकार का भोजन खाया जावेगा तो निश्चय दस्त आवेंगे और आंतों में रोग उत्पन्न होगा। यह भी स्मरण रहे कि कभी खाना बिगड़ जाता है पर उस में दुर्गन्धि वा अस्वाद नहीं होता है॥

खाना।

कमरा जिस में खाना खाया जावे स्वच्छ रहना चाहिये। मेज़ और दस्तरखान और खाने पीने के बर्तन बिलकुल साफ़ और सुथरे होने चाहियें।

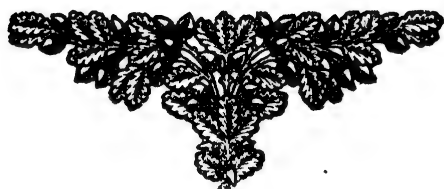


चूहे, मक्खियां, झींगुर, सर्वदा स्वास्थ्य के नाशक हैं॥

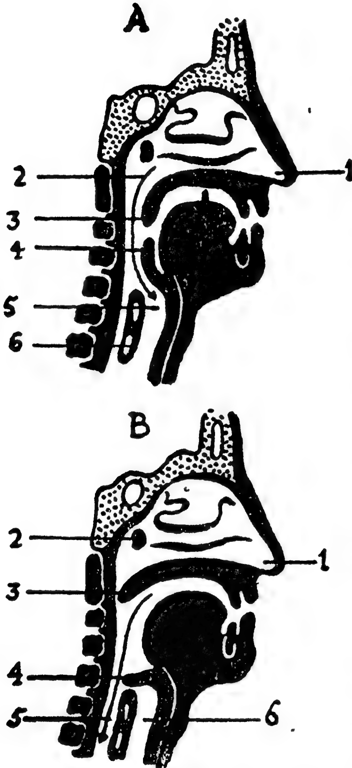
खाना खाते समय सम्पूर्ण घरवाले मनोरंजन वार्त्तालाप करें, क्योंकि जब मन प्रसन्न होता है तो भोजन भी भला लगता है और शीघ्र पच जाता है, भोजन खूब चबा २ कर धीरे २ खाना चाहिये। खाने का समय निश्चित करना आवश्यक है चाहे दो बेर, चाहे तीन बेर संध्या का भोजन हलका होना चाहिये और ७ बजे शाम को खाना चाहिये इस से अधिक देर न करना चाहिये। भोजन जो रात में देर कर के खाया जाता है वह महास्रोत में हानिकारक होता है। क्योंकि रात को पाचन क्रिया के अवयव शरीर के और भागों की नाईं विश्राम के इच्छुक हैं। बहुत कर के अजीर्ण रोग और पाचन क्रिया के अवयवों का बिगाड़ देर कर के रात को भर पेट खाने और तब एक दम सो जाने के कारण होते हैं॥

पाचन अवयवों को भी कुछ विश्राम करना आवश्यक है, बालकों को बीच २ में खाने के पूर्व मिठाई खिलाने से पेट में दर्द होता है और अन्त में दस्त आने लगते हैं। प्रत्येक बालक को जो ७ वर्ष की आयु का है केवल ३ बेर खाना देना चाहिये और बीच २ में कुछ न दो॥

खाने के समय नाना प्रकार के भोजन खाने से पाचन अवयवों को हानि होती है। कई भोजन पथ्य हैं और जब भली भांति तैयार किये गये तो उत्तम होते हैं परन्तु जब ठीक से नहीं पके और दूसरे खानों से मिला देने से बिगाड़ उत्पन्न करते हैं॥



श्वासोच्छ्वास श्वास प्रश्वास के यन्त्र।



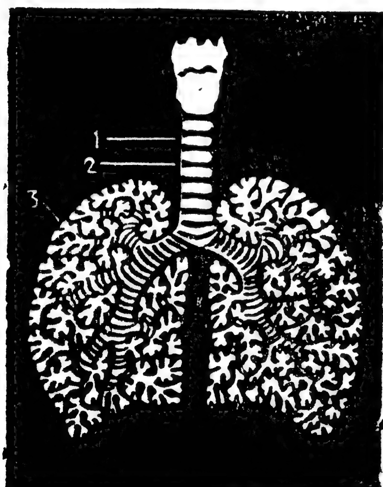
मनुष्य कई हफ़्तों तक भोजन के बिना जी सकता है और कई दिन जलपान रहित भी रह सकता है पर यदि वायु का आना जाना (जैसे डूबने में वा दम घुटने में होता है,) रुके तो दो तीन क्षण में प्राणान्त हो जायगा। सो यह विदित है कि लगातार ताज़ी वायु का मिलते रहना शरीर के लिये आवश्यक है, अग्नि भी वायु बिना नहीं जल सकती। इस का यह प्रमाण है एक मोम बत्ती को जला के बर्तन से ढांक दो तो वह बुत जायगी, वायु जैसे आग जलाने के लिये आवश्यक है वैसे ही जीवन के लिये भी आवश्यक है हम वायु श्वास द्वारा अपने फेफड़ों में खींचते हैं कि वह उन में से (आक्सीजन) प्राण-वायु को निकाल कर काम में लावे। प्राण-वायु अदृश्य वायु है, जब हवा फेफड़ों में प्रविष्ट हुई तो उस हवा में का प्राण वायु रक्त में मिलता है। और शरीर के सकल भागों में मिल जाता है। वायु का मुख्य भाग

क (A) वह भाग जिस से श्वास प्रश्वास के समय वायु नल की गति विदित होती है। १. नथने २. तीराकार श्वास प्रश्वास की वायु को प्रगट करती हैं ३. कौआ ४. वायु नल उठा हुआ ढकना कि वायु फेफड़े के नल में प्रवेश करे ५. कण्ठ वा वायु नल जो फेफड़े की ओर जाता है ६. कुरकरी हड्डी॥

ख (B) वह भाग जिस से भोजन खाते समय नलियों की दशा प्रगट करती है॥ १. नथने २. कान से नाक तक जो नली है ३. कौआ भोजन को नीचे भेजते समय ४. नली का ढ़कना वन्द कि कुछ भोजन श्वास नल में न जाय ५. तिराकार नीचे भोजन वा अन्न नल की ओर दिखाता है ६. नली वा कण्ठ॥

प्राण-वायु है और शरीर में यह जीवन देने और गर्मी और उत्साह उत्पन्न करने के लिये आवश्य होनी चाहिये। वायु जो हम फेफड़ों में लेते है प्राणप्रद वायु से लदी है पर यह जो श्वास के द्वारा बाहर निकलती है उस में प्राणवायु केवल नाम मात्र को है, और फिर २ श्वास लेने योग्य नहीं है॥

श्वास के द्वारा वायु जो बाहर निकलती है न केवल उस में प्राण-वायु नहीं है परन्तु उस में एक विषहरा पदार्थ भी रहता है जो रक्त से आता है, यह विषहरा पदार्थ अदृश्य है पर यह विदित हो सकता है, यदि एक बन्द कमरे में बहुत से लोग बैठे हों और कोई बाहर से आवे तो उस को इस विषहरे पदार्थ की दुर्गन्धि तुरन्त मालूम हो जावेगी, और बहुत से जो कमरे में हैं सिर पीड़ा में ग्रस्त होंगे और कई एकों को चक्कर आने लगेंगे दुर्गन्धि सिर की पीड़ा और चक्कर का कारण वही बिषहरी वायु है जो फेफड़ों से निकलती है॥



१. नली २. गले की नली की कुरकुरी हड्डी ३. वायु के छिद्र।

यदि एक बड़े मुंह वाली साफ़ बोतल को ले कर के कई बार उस में श्वास ले कर एक डाट एक दम लगा कर एक गर्म स्थान पर रक्खो, कुछ दिन के पश्चात् डाट खोलने पर यह विदित होगा कि उस के भीतर की वायु दुर्गन्धि पूर्ण है। यह दुर्गन्धि उन विषों के द्वारा होती है जो हम श्वास लेते समय निरन्तर अपने फेफड़ों से बाहर निकालते हैं। यदि लोग ऐसे कमरे में रहें जिस की खिड़की खुली न हो कि बाहर से स्वच्छ वायु प्रवेश करे और मैली वायु बाहर निकल सके। तो मैली और दुर्गन्धित वायु में श्वास लेने के कारण अपने शरीर की हानि करेंगे, ऐसे लोगों को तपेदिक़ और (फेफड़ों की सूजन)-निमोनिया और फेफड़ों के और २ रोग और सर्दी अत्यन्त शीघ्र लग जाती है॥

घर के प्रत्येक कमरे में एक वा दो खिड़कियां ज़रूर होनी चाहिये, इन खिड़कियों को कई फुट ऊंची और कई फुट चौड़ी होना आवश्यक है

कि कमरे में ताज़ी निर्मल वायु और बहुत सी रोशनी या सूर्य्य की ज्योति आ सके, खिड़कियों के साम्हने कपड़े और पर्दे नहीं टांगने चाहियें क्योंकि इन से ज्योति और वायु रुक जाती है ॥

श्वास प्रश्वास के यन्त्र।

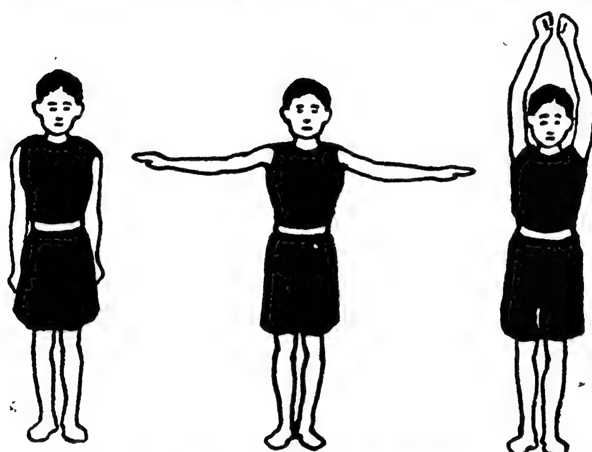
वायु जिसे हम श्वास में लेते हैं नाक के नथनों से होकर गले के पिछले भाग में से स्वर नली में से जाकर श्वास नली में से फेफड़ों में जाती है। फेरनिकस् वा स्वरनली का निचला छोर श्वासनली में प्रवेश करता है। यह एक कड़ी नली है जो गले के साम्हने वाले भाग में छूने से मालूम हो सकती है, स्वास नली छाती से उतर कर दो भागों में विभक्त हो गई है। उस का एक भाग दाहिने फेफड़े में और दूसरा भाग बायें फेफड़े में चला गया है फेफड़े अनगिन्ती छोटी २ वायु की थैलियों से रचा गया है (देखो दिये हुये चित्र को) श्वास लेना केवल इन वायु थैलियों को भरना और खाली करना है ॥

श्वास लेना।

एक क्षण में हम प्राय: १६ वा १७ बार श्वास लेते हैं, प्रत्येक बेर श्वास लेते दिल चार बार धड़कता है। ज्वर जब चढ़ता है, वा जब हम कसरत वा व्यायाम करते हैं तब और भी शीघ्र धड़कने लगता है ॥

प्रत्येक जीवधारी चाहे पशु हों चाहे बनास्पती वर्ग सब श्वास लेते हैं। पौधा अपनी पत्ती द्वारा श्वास लेता है। मेंडक और कई प्रकार के कीड़े अपने चमड़े द्वारा श्वास लेते हैं, मछली जो जल में रहती है, वह अपने गलफड़ों द्वारा जल से वायु का संचार करती है। धर्म पुस्तक की पहिली पुस्तक अर्थात् उत्पत्ति के दूसरे पर्व्व में जो ब्योरा मनुष्य के सृजने का है उस में यह लिखा है कि यहोवा परमेश्वर ने मनुष्य को भूमि की मिट्टी से रचा और उस के नथनों में जीवन का श्वास फूंक दिया और मनुष्य जीता प्राणी हुआ"। धर्म पुस्तक में यह भी लिखा है कि ईश्वर सब को श्वास और जीवन देता है और कि सम्पूर्ण मनुष्य जाति का श्वास उसी के हाथ में है। इस बात का प्रमाण कि ईश्वर हमारे श्वास को भी अपने अधिकार से चलाता है यह है कि जब हम निद्रा में हैं तब भी हमारे फेफड़े निरन्तर ताज़ी वायु को भीतर खींचते और बिषहरी वायु को बाहर निकालते रहते हैं। जिस

समय हम निद्रा में हैं तो हम बिलकुल अचेत होते हैं। और यदि हम को अपने श्वास की भी रक्षा करनी पड़ती तो ज्योंही हम को नींद आती हम उसी समय मर जाते। श्वास लेना और हृदय का चलना दोनों स्वाभाविक गति हैं और ये दोनों चेतना यन्त्र के एक भाग पर अवलम्बित हैं। परन्तु यह ही कहना केवल उचित न होगा कि श्वास लेना स्वाभाविक और निरन्तर गति है, क्योंकि यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि चेतना यन्त्र का एक भाग हृदय की गति और श्वास को कैसे चलायमान रखता है और यह गतियां कैसे प्रारम्भ हुईं, श्वास लेने की क्रिया और उसे कौन उत्तेजना देता है और श्वास किस की प्रेरणा से चलता है



गहरे वा लम्बे श्वास लेने के अभ्यास॥

और उस के अद्भुत परिवर्त्तन गति होने के विषय में जब ध्यान पूर्वक विचार करते हैं तो यह परिणाम निकलता है, कि कोई ऐसी शक्ति है जो मनुष्य से श्रेष्ठ है उस से भिन्न है, जो कि श्वास पर अधिकार रखती है और जीवन को शरीर में स्थापित करती है वह ईश्वर की शक्ति है, ऐसा परमेश्वर जो अति दयालुता से हमारी रक्षा करता है पूजनीय और मानने के योग्य है॥

सीधे बैठो और सीधे खड़े रहो।

यह मुख्य बात है कि हम सीधे बैठें और खड़े हों ताकि प्रत्येक बेर जब हम श्वास लेते हैं तो फेफड़ों को फैलने के लिये यथायोग्य स्थान

मिले। इस रीति से शरीर को ताज़ी वायु का अधिकांश मिलता है। जब हम सीधे बैठते और खड़े होते हैं तो न केवल सुन्दर दिखते है पर उस से हृष्ट पुष्ट होने में सहायता मिलती है। कूबड़ निकाल कर खड़ा होना अथवा बैठना न केवल कुरूप दिखता पर उस से फेफड़े पूरे २ फैलने नहीं पाते और इस कारण से यथोचित वायु शरीर में प्रवेश नहीं कर सकती है। और फल यह होता है कि शरीर निर्बल हो जाता है और सर्दी और तपेदिक़ की बीमारी शीघ्र लग जाती है॥

घर के भीतर काम करनेवालों को और मुख्य कर उन लोगों को जो अधिक बैठ कर काम करते हैं, इस का अभ्यास करना आवश्यक है कि दिन में कई बेर सीधे खड़े हो कर लम्बी श्वास लें ताकि फेफड़ों में खूब ताज़ी वायु भरे और बिषहरी जीवान्तक वायु "कारबन-डैओकसाइ" पूरी रीति से बाहर निकल जावे, (देखो लम्बी श्वास लेने का चित्र) जीवान्तक उस बिष लदी वायु को कहते हैं जो श्वास की बाहर निकली वायु में मिली रहती है, लकड़ी के कोयले के जलाने से जो ग्यास निकलती है, जिस से सिर में पीड़ा और चक्कर आते हैं उस का अधिकांश भाग "कारबन-डैओकसाइड" का होता है॥

मुंह से श्वास लेना।

वायु का भीतर प्रवेश करने का स्वाभाविक मार्ग नाक है और भोजन का मुख, नाक के भीतर सूक्ष्म अनगिनती केश होते हैं और इन्हीं से वायु जो भीतर प्रवेश करती है छन जाती और धूल और कृमि आदि से स्वच्छ होती है। जिस समय वायु नाक द्वारा प्रवेश करती है तो वह गीली और नर्म भी हो जाती है। जब मुंह द्वारा श्वास लेते हैं तो वायु न गर्म और न गीली होती है और श्वास नल में सूखी जाती है और इस से अधिक कफ़ निकलता है। और फिर इसी कारण से सर्दी और खांसी आने लगती है। जब नाक से श्वास नहीं लेते हैं तो वह बन्द हो जाती है उस में गदूद निकल आते हैं जैसे अध्याय ३६ के चित्रों में से एक में गदूद के स्थान दिखाये हैं। टोंटे या टेंटुआ भी फूल जाते और रोगी हो जाते हैं। इस से यह बात सिद्ध हुई कि मुंह से श्वास लेना अति हानिकारक है और ऐसे न करना चाहिये। यदि कोई बालक मुंह से श्वास लेवे तो उसे डाक्टर के पास ले जा कर नाक और गला दिखला दो कि यदि कोई गदूद उत्पन्न हुए हों तो उन को निकाल

डाले नहीं तो ऐसा बालक कदापि स्वस्थ और हृष्ट पुष्ट न होगा। वह बौना रह जायगा और शाला में भी यथोचित न काम कर सकेगा और भद्दा ही रहेगा। (कारण रोकना, चिकित्सा, मुंह से श्वास लेने की और गदूद की २६ अध्याय में वर्णन की गई हैं)॥

वायु की धूल फेफड़ों को हानिकारक है।

धूल जो उड़ती है और हमारे घरों के सामान और फ़र्श पर दिखाई देती है निरी धूल ही न है पर उस में अनगिनती रोग उत्पन्न करने वाले कृमि भी होते हैं। जब वायु के संयोग में यह धूलि हमारे श्वास में प्रवेश करती है, तो वह फेफड़ों में जा कर वहीं रह जाती है। वे कृमि वृद्धि करते हैं और इन से तपेदिक़; निमोनिया, खांसी, ज़ुकाम ये रोग हो जाते हैं। धूलि की हानि से बचने का उपाय यह है कि गर्मी में सड़कों पर छिड़काव करना चाहिये और लोगों को घर के फ़र्श और गली में थूकना न चाहिये। सर्दी के रोगी या तपेदिक़ के रोगी का थूक रोग कृमि से भरा रहता है, और यदि वह गली में वा घर के फ़र्श पर थूके तो शीघ्र थूक सूख कर धूलि में मिल जाता है और यह धूलि और लोगों में श्वास द्वारा प्रवेश करती है और वे भी इन्हीं रोगों में ग्रस्त हो जाते हैं। या तो गली के किनारे थूको या काग़ज़ में थूको जो इसी काम के लिये रक्खें। इस काग़ज़ को फेंकना न चाहिये पर जला डालना चाहिये। वे जिन को तपेदिक़ का रोग है सदा काग़ज़ वा कपड़े में थूकें और तद्. पश्चात् आग से जला देवें॥

फ़र्श को झाड़ते समय पानी छिड़को या इस से उत्तम यह होगा कि बुरादा लकड़ी का गीला कर छिड़क दो वा धान के छिलके गीले कर फैला दो तब झाड़ो, इस प्रकार से झाड़ो, कि धूलि उड़ कर फैलने न पावे॥

तम्बाकू और मदिरा से श्वासयन्त्रों को हानि होती है।

प्रत्येक देश में मनुष्य जाति में दो अभ्यास होते हैं, जिन से श्वास यन्त्रों को अधिक हानि पहुंचती है, अर्थात् तम्बाकू पीना और दारू पीना। तम्बाकू का धुआं श्वास प्रश्वास यन्त्रों के प्रत्येक भाग को बिगाड़ देता है। वह नाक के भीतर की झिल्ली और फेफड़ों की झिल्ली और श्वास-नली की झिल्ली को फुला देता है। और इस कारण से प्रमेह और अन्य रोग लगने का भय रहता है॥

जो बातें तम्बाकू के विषय में कही हैं वे और २ नशे और दारू के विषय में भी ठीक हैं। जब मनुष्य दारू पीता है तो पीने के ज़रा देर पश्चात् उस के मुंह से उस की बास आने लगती है। इस का कारण यह है कि जब दारू रक्त में प्रवेश करती है, और फेफड़ों में जाती है तो फेफड़े विष से जितनी जल्दी हो मुक्त होने का यत्न करते हैं। डाक्टर लोग यह जानते हैं कि दारू पीने वालों को तपेदिक़ और (निमोनिया) रोग शीघ्र लग जाता है। और लगने पर इन के स्वास्थ्य होने की आशा कम रहती उन की अपेक्षा जो दारू का उपयोग नहीं करते हैं। इस से यह बात सिद्ध है कि दारू फेफड़ों को जोखिमदायक है॥

तम्बाकू और दारू न केवल फेफड़े को हानिकारक हैं, परन्तु शरीर के प्रत्येक अवयव को भी बिगाड़ डालते हैं॥

श्वास-प्रश्वास की क्रिया के मुख्य बातों का सार।

१. देखो कि तुम्हारे घर में दिन और रात पूरी २ रीति से वायु का प्रचार रहे॥

२. दिन के समय जितना बन पड़े बाहर ताज़ी वायु में रहो और रात को सोने के कमरे की खिड़कियां पूरी खोल दो कि ताज़ी वायु का प्रचार रहे जैसी दिन की हवा है वैसे ही रात की सो रात की वायु का भय न खाओ और उस से बचने को द्वार और खिड़की न मूंद दो। यदि किवाड़ें और खिड़कियां बन्द भी करो तो जैसे रात की वायु बाहर है वैसे घर के भीतर की भी है। रात की हवा का भय नहीं है पर मच्छड़ों से जो रोग देनेवाले कृमि हैं डरो। उन से मच्छड़दानी पलंग पर लगा कर सोने से बच सकते हैं॥

३. प्रत्येक वेर जब श्वास लेते हो फेफड़ों को हवा से पूर्ण रीति से भर लो, ऐसा करने के लिये सीधे बैठना वा खड़ा होना उचित है। कन्धों को पीछे झुकाओ, ठुडी उबरी और गले से लगी न रहे॥

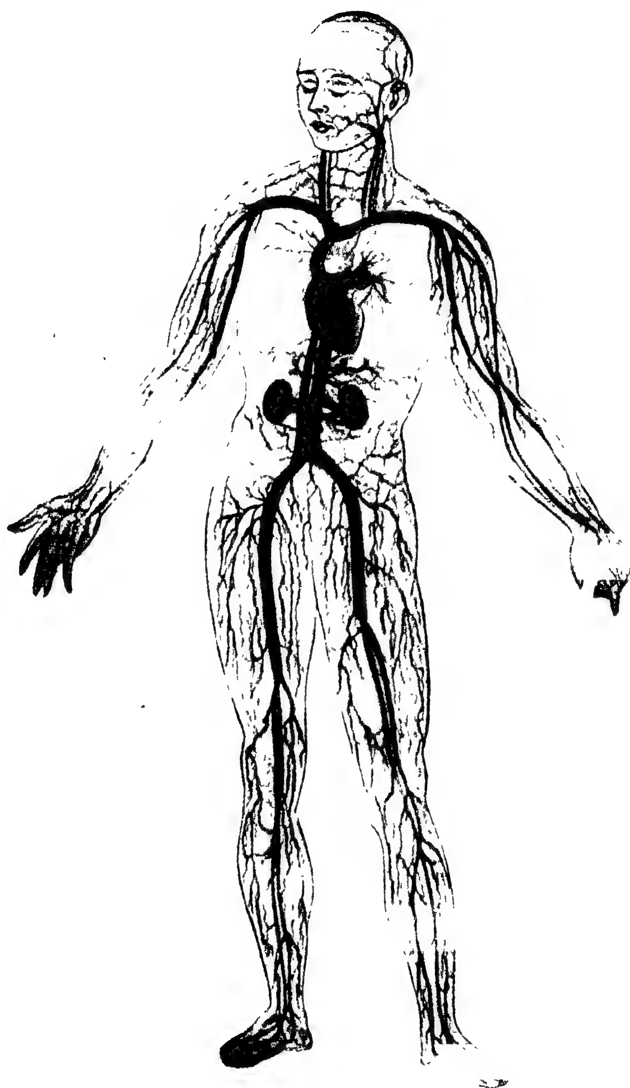
४. धूलि पूर्ण वायु में श्वास न लो॥

५. तम्बाकू का किसी प्रकार उपयोग न करो, अर्थात् न हुक्का पीओ, न चुरुट, न बीडी और सिगार, पाईप कुछ भी न पीओ॥

६. किसी प्रकार की दारू न पीओ॥

७. सदा नथनों वा नाक द्वारा श्वास लो॥

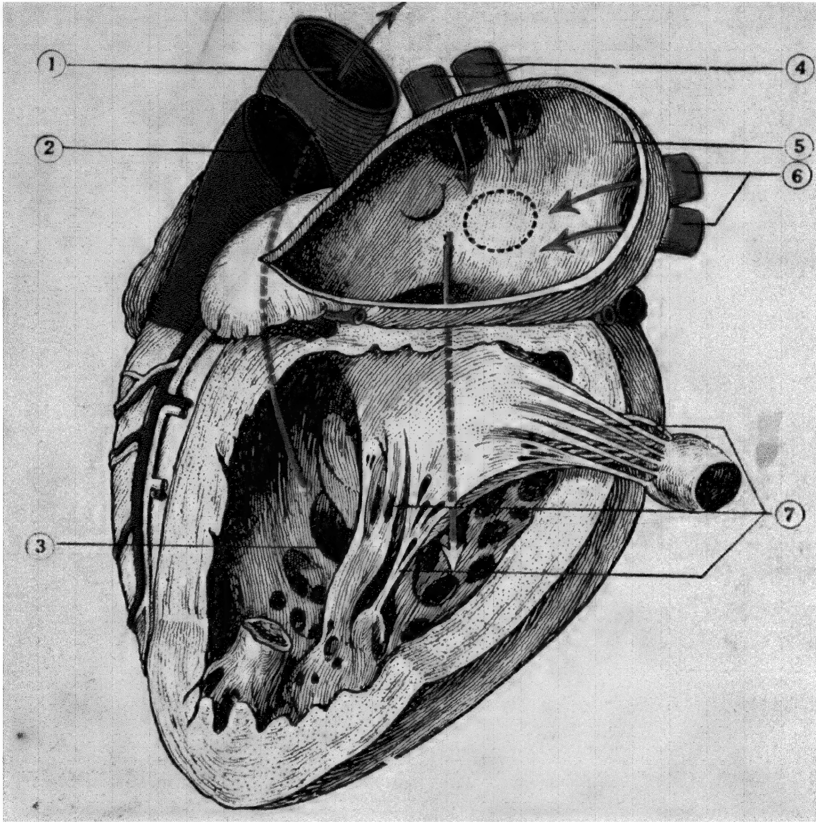
८. कमर में कस के बेल्ट न बान्धो वा कमर पट्टी न कसो॥



रुधिर-सञ्चार .

लाल को धमनी और नीली को शिरा समझिये ।

पृष्ट नं. ४२ व ४३ पर इस का वर्णन देखिये



हृदय और बड़ी धमनियां

१. मूल धमनी

२. धमनी

३. बांई ओर नीचे का खाना

४. दहनी धमनी

५. शिरा

६. बांई ओर का पर्दा

७. बांई शिराएं, पर्दे को सम्भाले हैं, इन के द्वारा पर्दा सिकुड़ने पर "औरिकल" या शिरा के गढ़े में न चला जाय जब पेशियां सिकुड़ती हैं॥

पृष्ठ नं. ४२ व ४३ पर इस का वर्णन देखिये।

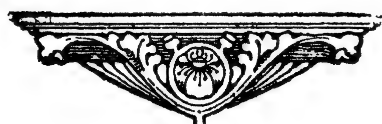
९. प्रति दिन कई बार लम्बी सांस लो॥

१०. कभी मुंह ढांप के न सोओ, वे जो मुंह ढांप के सोते हैं अपने शरीर में विष भरते हैं क्योंकि श्वास की विषहरी हवा में फिर श्वास लेते हैं जो फेफड़ों से बाहर निकलती है, यह अति हानिकारक घटना है॥

उचित प्रकार के रहने के घर।

घरों को ऐसे नीचे स्थानों में न बनवाना चाहिये जहां जब पानी गिरे भूमि पर एकत्र हो जाय इस पानी में मच्छड़ उत्पन्न होते हैं और घर में रहनेवालों को शीत-ज्वर आने लगता है। फिर पानी में जो कुछ पड़ता है वह सड़ जाता है, इस प्रकार से कमरों को नम और शीतल ही केवल नहीं करता पर बुरी दुर्गन्धि भी आती है जिस से शरीर को हानि पहुंचती है॥

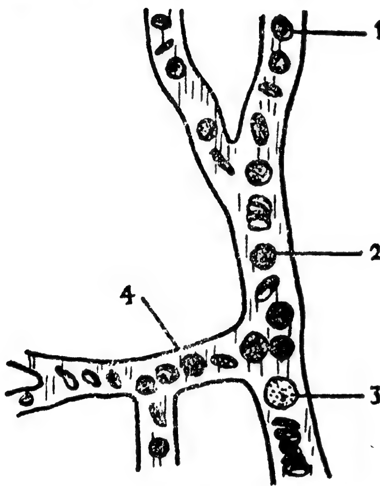
मुरग़ी, सुअर, कुत्ते, ढोर घर में या उस के नीचे न रखने चाहियें। उन का मैला अर्थात् मल मूत्र घर को दुर्गन्धि से पूर्ण कर देता है, फिर इन के शरीर में पिस्सू और कीलनी होती हैं जिन के घरवालों पर चढ़ने से रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इन जन्तुओं में से बहुतों को तपेदिक़ का रोग होता है और इन से घर के लोगों को लग जाने का बड़ा भय है। फ़र्श के नीचे का स्थान जन्तुओं को बान्धने वा सामान एकत्र करने के लिये जसा अन्न भूसी हैं न रक्खो, यह खुला रहने दो कि वायु का संचार भली भांति हो और चूहों, चूहियों और कीड़ों के लिये स्थान न रहे॥



अध्याय ७।

रक्त और रुधिराभिसरण यन्त्र।

जब खुर्दबीन द्वारा एक बुन्द रक्त की परीक्षा की जाती है, तो बहुत से छोटे गोल लाल कण दिखाई देते हैं और यह रजकण कहलाते हैं। इस को छोड़ बहुत से छोटे स्वेत कण भी इस बुन्द रक्त में हैं इन को रक्तजल कहते हैं, ये रजकण और रक्तजल नदी में जैसे मच्छली तैरती है वैसे ही रक्त में तैरा करते हैं ॥



१. और २. रजकण ३. रक्त जल
४. रक्त नल की भींत

पचा हुआ भोजन वा पौष्टिक भाग रक्त में मिल जाता है, रक्त को शरीर का ढुलाई करनेवाला मुहकमा कह सकते हैं क्योंकि यह प्राणप्रद वायु को जो फेफड़ों द्वारा शरीर में प्रवेश करती है और पचाये हुए भोजन को जो आमाशय और आंतों द्वारा ठीक किया गया है शरीर के प्रत्येक भाग में जहां आवश्यक्ता है पहुंचाता है कि प्रत्येक भाग की न्यूनता को पूर्ण करे और वह शरीर के प्रत्येक भाग से हानिकारक सारहीन पदार्थों और हिंसक वायु को फेफड़ों गुर्दों और त्वचा में ले जाता है जहां से वे बाहर निकाल दिये जाते हैं यह पसीने श्वास और मूत्र द्वारा होता है ॥

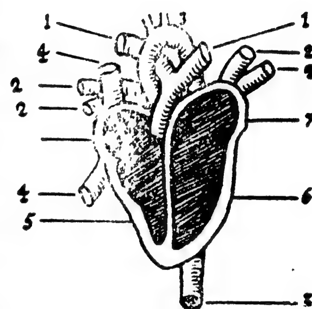
रक्ताशय-(हृदय) और नाड़ियां।

रक्त रगों और नसों में निरन्तर फिरा करता है, यदि बांह की त्वचा और रक्त नली की दीवारें जो त्वचा के नीचे दीखती हैं 'आइने' की बनी होतीं तो हम रक्त को इन नसों के भीतर हाथ की ओर से कन्धों की ओर अति शीघ्रता पूर्वक बहते देख सकते ॥

रक्ताशय के संकुचित होने से नलियों में बहने लगता है, रक्ताशय एक मनुष्य की बन्द मुट्ठी के बराबर होता है भीतर से पोला होता है, और एक प्रबीन धौंकनी का काम देता है जिस की शक्ति द्वारा रक्त शरीर के सम्पूर्ण अवयवों में घूमता है॥

पूरे मनुष्य का रक्ताशय एक मिनट में प्रायः ७० बेर चलता या धड़कता है, व्यायाम करने से और भी शीघ्र धड़कता है, ज्वर जब हो तब भी शीघ्र चलता है, स्त्रियों का रक्ताशय पुरुष की अपेक्षा १ मिनट में ८ वा १० बेर शीघ्रता से चलता है, बालक का रक्ताशय मनुष्य की अपेक्षा और भी शीघ्रता से चलता है, जैसे एक ५ वर्ष के बालक का हृदय एक मिनट में ९० से १०० बेर धड़कता है॥

इस अध्याय में रक्ताशय का चित्र देखने से विदित होगा कि रक्ताशय के ऊपर के बांये ओर से एक बड़ी नाड़ी निकलती है जिस को मूल धमनी व एओरटा कहते हैं, यह ऊपर की ओर जाती है और उस में शाखाएं निकलती हैं जो रक्त को सिर और बाजुओं में पहुंचाती हैं॥



१. पलमेनोरी आर्टरी २. पलमेनोरी वेन्ल ३. एओरटा ४. बीना केवा ५. राइट वेनट्रिकल ६. लेफ्ट वेनट्रिकल ७. लेफ्ट आरीकल

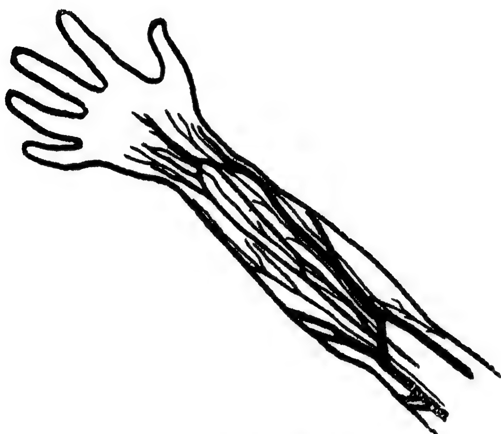
जब हृदय संकुचित होता है तो रक्त इसी धमनी में से उस की असंख्य उपशाखाओं द्वारा शरीर के प्रत्येक भाग लों पहुंचाया जाता है। बहते २ मार्ग में नाड़ियां छोटी २ होती जाती हैं, यहां लों कि सूक्ष्म हो जाती हैं कि ऐसी ३००० नाड़ियां बराबर २ रखें तो केवल १ इंच चौड़ी होंगी इन महीन नाड़ियों को केश-वाहिनियां कहते हैं, यह केश-वाहिनियां गिनती में इतनी अधिक और ऐसी बनी होती हैं कि बारीक से बारीक सुई शरीर के किसी भाग में चुभा दी जाय तो किसी न किसी केश-वाहिनियों में अवश्य ही गड़ जायगी॥

केश-वाहिनियों में बह कर रक्त नसों द्वारा हृदय में फिर आता है, यदि रक्ताशय को काट कर खोल दें तो उसे २ भाग में खण्डित देखेंगे एक बांया खण्ड और एक दहिना खण्ड, रक्त जो धमनी में से वहां बहा, रक्ताशय की बांई ओर से आया, रक्त शरीर के सकल भागों से लौट कर आता है वह दाहनी ओर जाता है, रक्ताशय के दाहिनी ओर बह कर फेफड़ों द्वारा

बाहर आता है, जब फेफड़ों में घूमता है तो मल से जो शरीर के सम्पूर्ण भागों से लाता है उस से मुक्त हो जाता है और फेफड़ों में श्वास द्वारा वायु से प्राणप्रद वायु को भी खींच लेता है ॥

रक्त में जीवन है।

यदि एक रस्सी कस के उंगली पर बान्ध दी जावे, और कुछ समय लों यूंही छोड़ दी जाय, तो वह काली पड़ जायगी, और दो दिन यूंही रह कर मर और सड़ जायगी, उंगली मर जायगी क्योंकि उस में का रक्त प्रवाह रोका गया है। जब कभी शरीर के किसी भी अंग का रक्त प्रवाह



बांह की रगें और नसें।

रोका जाता है तो वह अंग मर जाता है। इस से यह निर्णय है कि शरीर के प्रत्येक अंग का जीवन रक्त ही पर अवलम्बित है। सैकड़ों और सहस्रों वर्ष पूर्व मनुष्य का सृजनहार परमेश्वर जो स्वर्ग में है उस ने कहा सब मांस का जीवन रक्त में है ॥

रक्त और हृदय में हम ईश्वर की शक्ति का अद्भुत परिमाण देखते हैं यह दिल है, जब बच्चा माता के गर्भ में है तब से यह धड़कने लगता है और तब से ८० या ९० वर्ष की आयु लों एक क्षण में ७० बेर धड़कता रहता है। हमें इसके विषय में चिन्ता भी नहीं करनी पड़ती है कि वह धड़के और न चिन्ता द्वारा हम उस के धड़ने को रोक सकते हैं, रक्ताशय स्वयं चलनेवाला और स्वयं काम करनेवाला इंजन है, वह उन मनुष्य कृत कलों

से लाखों प्रकार से अद्भुत है, यहां लों कि जब हम सोते हैं तब भी रक्ताशय जीवन दायक रक्त खींच कर शरीर के प्रत्येक भागों में पहुंचाता जाता है। उस की धड़कन हम पर अवलम्बित नहीं है। ईश्वर जो स्वर्ग में है जिस ने मनुष्य को सृजा वह उस को धड़काता और निरन्तर चलाता है, चाहे हम जागें वा सोवें॥

जब शरीर के किसी भाग में चोट लगती है तो केवल रक्त है जो उस भाग को चंगा करता है। जब रोग के कृमि किसी प्रकार शरीर में प्रवेश करते हैं तब रक्तजल जिस का वर्णन हो चुका है, निडर सिपाहियों के समान पहरा देता है और रोग कृमि को पकड़ कर नाश कर डालता है। केवल जब यह रक्तजल दारू वा तम्बाकू वा और किसी कारण से निर्बल हो जाते हैं और चूंकि रोग कृमि अधिक हैं और अति विषहरे हैं अतः ये रक्तजल रोग कृमि को नष्ट करने में अशक्त होते हैं॥

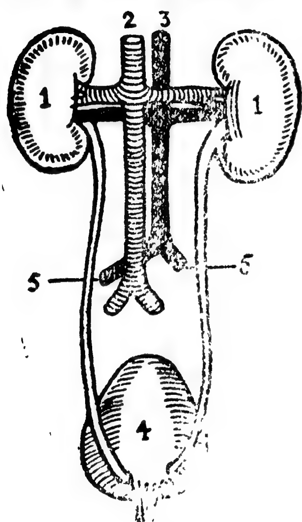
कभी २ खुर्दबीन द्वारा यह भी दिखाई पड़ता है कि रक्तजल रोग कृमि को पकड़ रहे हैं। यद्यपि ये इतने सूक्ष्म हैं कि यदि २५०० पास २ रखें तो १ इंच चौड़ी जगह में समा जांयगे। ये दृश्य पड़ते हैं रोग कृमि को पकड़ के नाश करते हुए। ये ऐसी क्रिया करते हैं मानों इन में बुद्धि है, इस से यह परिमाण हम देखते हैं कि न केवल ईश्वर ने मनुष्य को सृजा परन्तु वह मनुष्य के जीवन का सहारा भी है। उस ने ये प्रबंध भी किया कि शरीर अपनी रक्षा रोग कृमि और अन्य विषहरी जीवन नासक वस्तुओं से भली भांति कर सके॥

इस कारण कि रक्त में जीवन है और जब रक्त चंगा भी करता है, तो यह विशेष बात है कि हम में अच्छा रक्त हो। भोजन जो हम खाते हैं उस से रक्त बनता है। यदि भोजन निर्मल और अच्छा है, तो रक्त भी निर्मल होगा। यदि भोजन गुण और परिमाण में कम है और अच्छा नहीं है, तो रक्त के केश-वाहिनियां खाली वा भूखी रहती हैं और सम्पूर्ण शरीर दुःखी होता है। परिपूर्ण रीति से जल पान करने से रक्त के मल और विषहरे पदार्थ स्वच्छ हो जाते हैं। पुष्ट रक्त के लिये व्यायाम करना भी आवश्यक है दारू और तम्बाकू रक्तजल और रक्तरजकण दोनों को नाश करते हैं और रक्त के चंगा करने की शक्ति और जीवनाधार शक्ति को भी नाश कर डालते हैं॥

अध्याय ८।

गुरदे।

जो लोग भाप इंजन चलाते हैं उन को बहुधा राख और जले हुए कोयले निकालते हुए देखना एक साधारण घटना है। इंजन को चलायमान करने के लिये कोयले जलाने पड़ते हैं और इन से राख और जले कोयले निकलते हैं, यदि इन को साफ़ न करो तो थोड़ी देर के पश्चात् इंजन व्यर्थ और बिगड़ जायगा। प्रत्येक दिन हम भोजन खाते और पानी पीते हैं, ठीक उसी रीति से जैसे भाप के इंजन के चूल्हे में कोयले डाले जाते हैं, यह भोजन हमारे शरीर में जलता है और कुछ मल या राखी रह जाती है इस को शरीर में निकालना आवश्यक है, शरीर के कुछ अवयव सदा गतिदशा में होने के कारण घिस जाने की विधि भी होती रहती है जिस के कारण वे व्यर्थ पदार्थ को फेंकना चाहिये, क्योंकि यदि यह शरीर में रह जावे तो वह बढ़ कर शरीर को हानिकारक होगा और रोगी कर देगा अध्याय ६ में बताया गया है कि फेफड़े इस बिषहरे और सारहीन पदार्थ को निकालने में सहायक हैं गुरदे का कार्य्य है कि व्यर्थ पदार्थ को शरीर से बाहर निकाले॥



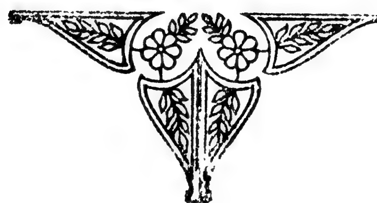
१. गुरदे २. आर्टरी ३. वेन
४ मूत्राशय वा वस्तिका
५. मूत्रनालियां

गुरदे सेमाकार के दो अवयव हैं, मूत्रपिण्ड रीढ़ के अन्त में कमर के अन्तिम भाग में स्थित है, मेरुदण्ड के ओर एक और दूसरी ओर दूसरा (अस्थिपञ्जर के सामने वाले चित्र में देखो) जब मूत्रपिण्ड में रक्त बहता है तो विषहरे सारहीन पदार्थ को वे छान डालते हैं, सारहीन पदार्थ और पानी जो गुरदे रक्त में से निकालते हैं इन दोनों के सम्बन्ध से मूत्र बनता है। प्रथक २ नली द्वारा मूत्र गुरदे से निकल कर मूत्राशय वा वस्तिका में जाता है और वहां पर तब तक रहता है जब तक कि मूत्र में गति न लेवे॥

प्रत्येक निरोग और स्वस्थ्य पुरुष सारे दिन में आध सेर से डेढ़ सेर लों मूत्र निकालता है। जब मनुष्य निरोग और स्वास्थ्य दशा में है और यथा योग्य पानी पीता है तो मूत्र का रंग हलका पीला होगा और बहुधा प्राय: पानी के समान साफ़ होगा, पर जब मूत्र का रंग लाल वा भूरा होता है तो प्रत्यक्ष है कि पानी कम पीया गया है॥

रोगावस्था में जब ज्वर चढ़ा रहता है तब मूत्र-पिण्ड का काम अधिक बढ़ जाता है, तब रोगी को उचित है कि खूब पानी पीवे और रोगी के निकट पानी रख देना चाहिये कि जब वह चाहे तब पीवे, और खूब पीवे क्योंकि यदि वह पानी ज्यादा न पीवेगा तो विषहरे सारहीन पदार्थ शीघ्र न निकल पावेंगे और रोग बढ़ जायगा॥

दारु, तम्बाकू, गर्म मसाला, मसालादार सालन अदरक इत्यादि गुरदे को हानिकारक हैं गुरदे का एक काम यह है कि शरीर में से कोई भी पदार्थ जो रक्त में हानिकारक है निकाल देवे। जैसे अभी बताये हैं, और इन हानिकारक पदार्थों का निकालने में मूत्र-पिण्ड को बिगाड़ होता है ठीक जैसे शान्ति रखने और लोगों की रक्षा एक क्रूर दुष्ट मनुष्य से करने में जब पुलिसमैन उस को पकड़ता है तो हानि पाता और चोट भी खाता है॥

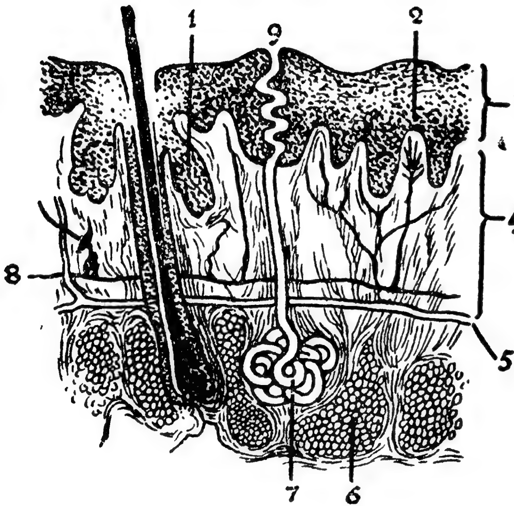


अध्याय ६।

त्वचा।

शरीर के ऊपरी भाग को त्वचा अथवा चमड़ा कहते हैं, त्वचा द्वारा शरीर के भीतरी अङ्गों की रक्षा होती है, उस की उपमा एक अस्तर वाले कपड़े से हो सकती है, जिस में ऊपरी परत होती है और भीतरी परत अकस्मात जब खौलते पानी से त्वचा जल जाता और फफोले पड़जाते हैं तो छाले इसी चमड़ी के होते हैं॥

इस की भीतरी परत में असंख्य छोटी छोटी पसीने की गांठें होती हैं। इन में से प्रत्येक में एक नल होता है जो त्वचा के ऊपर लों चला गया है, यदि हाथ गर्म है तो उंगली के छोर से छूने से सूक्ष्म बून्दें पसीने की नली के मुंह पर विदित होंगी पसीना केवल पानी ही नहीं है पर नमक और सार-हीन पदार्थ भी मिले रहते हैं ये सारहीन पदार्थ मूत्र के समान हैं॥



त्वचा के विभाग
(१,२) ज्ञान तन्तुओं के छोर (३) मरा चमड़ा (४) त्वचा (५) आर्टरी (६) चर्बी के स्नायु (७) पसीने की गांठ (८) पसीने के छेद जो त्वचा से गये हैं॥

यदि गुरदे और त्वचा इन सारहीन पदार्थों को बाहर न निकालें तो शीघ्र स्वयं विष शरीर में चढ़ कर हानि करेगा त्वचा ही अकेला बहुत सा विषहरा पदार्थ निकाल कर बाहर करता है, यदि त्वचा पर किसी वस्तु का या रोग़न का लेप कर दिया जाय, कि पसीना बाहर न निकलने पावे

तो कुछ घण्टों में मृत्यु अवश्य ही हो जायगी बहुत से मनुष्य जब वे पसीने को त्वचा के ऊपर देखते हैं तो विचार करते हैं कि अब पसीना निकलना आरम्भ हुआ, परन्तु पसीना निरन्तर शरीर से निकला करता है, परन्तु धीरे २ निकलने के कारण वह वायु से मिल कर उड़ जाता है और इस लिये अदृश्य होता है, गर्मी और व्यायाम से अधिक पसीना निकलता है। प्रत्येक मनुष्य को उचित है कि प्रति दिन व्यायाम करे कि यथायोग्य पसीना निकल जाय क्योंकि यह केवल त्वचा ही को लाभकारी नहीं है पर यह रक्त को भी स्वच्छ और निर्मल रखता है॥

भली भांति पसीना निकलने के पश्चात् त्वचा के ऊपर एक पतली नमक की तह जम जाती है। यह नमक पसीने के साथ आता है। इस में और भी सारहीन पदार्थ सम्मिलित हैं यदि शरीर और कपड़े बार २ धोए न जावें तो उन में से दुर्गन्धि आने लगती है। यदि शरीर खूब उत्तमता से न धोया जाय तो पसीना और मल जम जाने के कारण सकल पसीने के छेद बन्द हो जाते हैं, और तब वह अपना काम नहीं कर सकते, तो विषहरा पदार्थ एकत्र हो कर रोगी कर देगा। उष्ण देशों में प्रत्येक को प्रति दिन स्नान करना चाहिये। और शीत ऋतु में भी सप्ताह में दो या तीन बेर अवश्य स्नान करना चाहिये॥

शरीर की स्वच्छता के लिये गर्म पानी और साबुन का उपयोग करना चाहिये। ठण्डे पानी में स्नान करने के पश्चात् तौलिया से शरीर को खूब रगड़ कर पोंछने से अति लाभ प्राप्त होता है, इस से शरीर को शक्ति और बल प्राप्त होता है और सर्दी और दूसरे रोगों से रक्षा होती है। उत्तम समय स्नान करने का प्रातः काल का समय है। जब थके हो वा गर्म हो तो ठण्डे जल से कदापि न स्नान करो। न खाने के पश्चात् ठण्डे वा गर्म जल से स्नान करो। उष्ण ऋतु में त्वचा को शीतल रखने के लिये स्नान करना चाहिये, फव्वारे से स्नान करना इस दशा में अति उत्तम रीति है॥

यह अति आवश्यक बात है कि स्वस्थ्य लोग रोग से रक्षित रहने के लिये प्रति दिन स्नान करें। परन्तु रोगियों के लिये यह अति आवश्यक है कि प्रति दिन उन को स्नान कराओ क्योंकि रोगावस्था में मल और निकम्मे पदार्थ अधिक त्वचा पर जम जाते हैं और अधिक विष भी रोग के कारण इन में मिला होता है, रोग शीघ्र आरोग्य हो जायेंगे यदि उन को प्रति दिन स्नान करावें, यदि उचित विधि से स्नान कराया

जावे तो सर्दी लगने का भय न रहेगा। पानी स्नान कराने का गर्म हो, प्रथम दाहिना हाथ धोओ पोंछो और ढांको, तब बांया हाथ धोओ, पोंछो और ढांको, तब साम्हने की छाती धोओ और पोंछो और ढांको और इस प्रकार से पूरे शरीर को धोओ, ऐसा करने से रोगी को ठण्ड लग जाने का भय जाता रहेगा॥

वस्त्र-धारण करना।

ऋतु के अनुसार वस्त्र पहिनना उचित है, यह मुख्य बात है कि वह वस्त्र जो त्वचा पर पहिना जावे, बार २ बदला जावे, और धोया जावे उष्ण ऋतु में नित्य प्रति बदलना और धोना चाहिये यह न बने तो प्रत्येक दूसरे दिन बदलो, वस्त्र जब पसीने और चमड़ी में से जो तेल निकलता है इस से मैले हो जाते हैं, तो न केवल दुर्गन्धि ही निकलती है पर त्वचा में खुजली होने लगती है और छोटी २ फुन्सी इत्यादि निकलने लगती हैं, सो इस रीति से विष फिर रक्त में लौट आकर बहुत ही हनिदायक हो जाता है॥

केश और त्वचा के तेल की गांठ।

प्रत्येक बाल की जड़ पर एक छोटी गांठ होती है। जिस में से तेल निकलता रहता है। यह तेल त्वचा के ऊपर निकलता है और उसे चिकना और निरन्तर कोमल रखता है। और बाल को भी चिकना रखता है सिर के बालों को चिकने और सुन्दर रखने का उत्तम उपाय यह है कि प्रति दिन उन को कूची से वा बुरूश से ज़ोर २ से झाड़ो और समय २ पर गर्म पानी और उत्तम साबुन से सिर धोओ कि धूल और तेल निकल जावे॥

गञ्जापन।

रूसी हो जाने से गञ्ज होता है, त्वचा के तेल की गांठों में कृमि होने से रुसी होती है और कंघी और बुरूश वा कूची द्वारा ये फैल जाते हैं। इस लिये प्रत्येक को अपनी कंघी बुरूश पृथक २ रखना उचित है और दूसरों की कंघी कूची का उपयोग न करना चाहिये, फिर सदैव घर में टोपी पहिने रहने से भी गञ्ज शुरू हो जाता है, स्त्रियां अधिक कर के तेल अपने बालों में लगाती हैं, इस से भी बाल गिर जाते हैं, प्रति दिन भली भांति कूची करने से बाल अच्छे रहने और तब तेल लगाना बिलकुल व्यर्थ है॥

जब रूसी हो वा बाल गिरने लगें तो यह करना उचित है मुट्ठी भर गीला नमक खूब ज़ोर २ से मलो ऐसे ज़ोर से मलो कि चमड़ी लाल पड़

जाय, तब नम्बर ५ का मरहम वा नम्बर ६ की दवा वा औषधि प्रति दिन चमड़ी में मलो॥

स्पर्शेन्द्रिय।

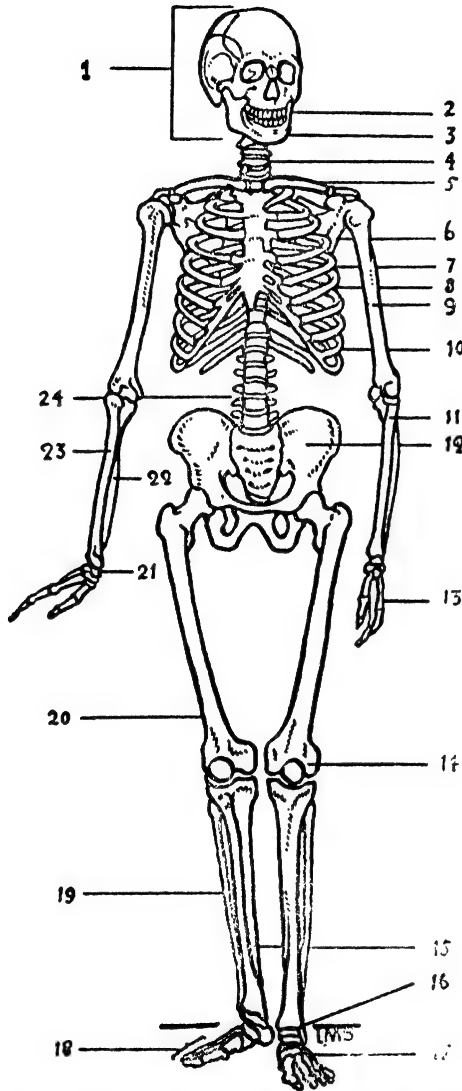
जब हम किसी वस्तु पर हाथ रखते हैं, तो हम उसे स्पर्श करते हैं, और हमारी त्वचा में असंख्य तन्तु फैले हुए हैं और कोई भी शरीर के अवयव का सम्बन्ध जब किसी भी वस्तु से होता है तो स्पर्श का ज्ञान ग्रहण करता है, जब इन इन्द्रियों में कुछ भी घटना घटती है तो तुरन्त ही तन्तुरूप दूतों द्वारा मग़ज़ में सन्देश पहुंच जाता है, इस प्रकार हम को विदित होता है कि वस्तु ऊष्ण है वा शीत, खुर्दड़ी वा चिकनी भारी वा हलकी है॥

स्पर्शेन्द्रिय का ज्ञान उत्तम रीति से शिक्षित कर सकते हैं, जैसे अन्धों को उठाये हुए अक्षरों को छूने द्वारा पढ़ना सिखाया जाता है, इन ज्ञान तन्तुओं को मनुष्य के सृजनहार ने शरीर की रक्षा निमित बनाये। और कि इन के द्वारा कला कौशल विद्या में निपुणता प्राप्त करें, यदि यह स्पर्श ज्ञान न होता, तो कोई वस्तु हम को जलाती वा काटती पर हम को ज्ञान न हो पाता स्पर्शेन्द्रिय ज्ञान रहित हम वे सकल काम जो अपने हाथों से करते हैं नहीं कर सकते और न उन का उपयोग कर सकते॥

अब त्वचा के इतने मुख्य कर्तव्य कर्म हैं और स्वास्थ्य और सुन्दरता के लिये आवश्यक हैं सो उस को हमें बड़ी युक्ती से रक्षित रखना चाहिये, स्नान द्वारा केवल ऊपर से ही स्वच्छ रखना चाहिये परन्तु तम्बाकू इत्यादि हानिकारक पदार्थों से जिसे उसे परिश्रम से बाहर निकालना पड़ता है, भीतर भी स्वच्छ रखना उचित है॥

नख़।

उंगलियों के नख़ उंगलियों के छोर को रक्षित रखते हैं और सूक्ष्म पदार्थों को उठाने में हमारे सहायक हैं, नख़ों को काट कर इतना रखना चाहिये कि उंगलियों के छोर से बाहर न निकलें। नख़ से जब त्वचा खुरचा जाता है तो बहुधा पक जाता है, नख़ में हैज़े और २ रोगों के रोग कृमि रह सकते हैं और खाते समय वा जब कभी उंगली मुंह में जावे तो यह आमाशय में प्रवेश हो जा सकते हैं, और इन से वे रोग उत्पन्न हो जायेंगे। इन नख़ों को काट के ठीक रखने पर भी मल और धूलि इन में जमा हो जाती है, इनको सदैव छुरी वा लकड़ी से साफ़ करना आवश्यक है॥



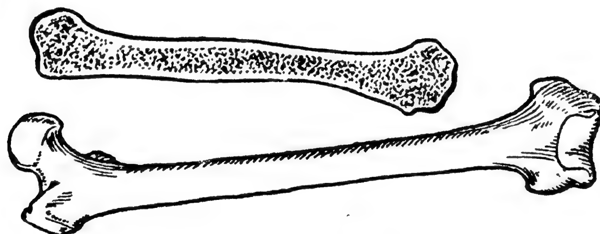
१. खोपड़ी २,३. जबड़े ४. गर्दन का जोड़ ५. हंसली ६. कन्धे की हड्डी ७,८,१०. पसलियां ९. बाजू की हड्डी ११. पहुंचे की हड्डी १२. कूल्हे की हड्डी १३. उंगलियों की हड्डी १४. घुटने की चपनी १५. पिंडली की हड्डी १६. टखने १७. तलवे की हड्डियां १८. पांव के अंगूठे और उंगलियों की हड्डियां १९. पिंडली की हड्डी २०. जांघ की हड्डी २१. कलाई की हड्डी २२. बांह की नीचली हड्डी २३. बांह के ऊपर की हड्डी २४. रीढ़

अध्याय १०।

हड्डियां और नाड़ियां।

चित्र जो दिया है अस्थि-पञ्जर है अस्थि-पञ्जर में २०६ अस्थियां हैं, जीवित मनुष्य में ये २०६ अस्थियां जोवित हैं इन में रक्त और तन्तु हैं अस्थि-पञ्जर द्वारा मनुष्य का आकार बनता है और वह सीधा खड़ा रह सकता है अस्थि-पञ्जर रहित मनुष्य न सीधा खड़ा हो सकता है और न सीधे चल सकता. पर कीड़ों की नाईं उसे रेंगना पड़ता॥

अस्थि-पञ्जर को सावधानी से परीक्षा करने से विदित होता है, कि कैसी विचित्रता से प्रत्येक अवयव अपने मुख्य और प्रथक काम के लिये रचा गया है। जैसे खोपड़ी का पोल कुछ २ एक बड़े गेंद के समान गोल है वह भीतर खोखला है यूं मस्तिष्क के लिये स्थान बना है जहां वह चोट से रक्षित है॥



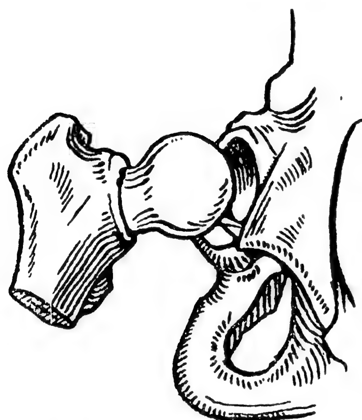
जांघ की लम्बी हड्डी।

छाती का पोल एक खोखले सन्दूक़ के समान है, और इस में रक्ताशय और फेफड़े सुरक्षित हैं॥

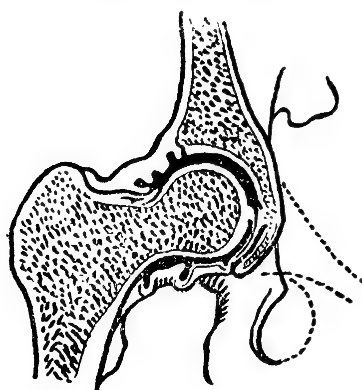
हाथ और पैर की हड्डियां लम्बी और पतली हैं, इस कारण सुगमता और शीघ्रता पूर्वक हाथ और पांव को चला सकते हैं॥

बच्चे की हड्डी अति कोमल होती हैं इस लिये अति सावधानी से रक्षा करनी चाहिये कि वे कुडौल न होजायें यदि बच्चे को उत्पन्न होने के पश्चात् केवल एक ही ओर लिटा रखो तो उस का सिर कुडौल हो जायगा खोपड़ी की तोंबी सामम्हने निकल पड़ेगी और दूसरी ओर चपटी हो

जायगी बच्चे को एक ओर कुछ घण्टों के लिये लिटाओ और तब दूसरी ओर लिटा दो, यदि बालक को शीघ्र ही खड़ा करने लगोगे तो उस के पैर झुक जायेंगे, पाठशाला में बालकों के बैठने की कुर्सियां टेकनदार होनी चाहियें कि वे पीठ लगा सकें और नीची भी होनी चाहियें कि बालक के पांव फ़र्श पर रहें बहुधा बालकों के कूबड़ निकल आते हैं क्योंकि पाठशाला की कुर्सियां ऊंची और टेकन रहित होती हैं ॥



कूल्हे का गेंदाकार जोड़ जांघ की हड्डी और चूतड़ की हड्डी।



जांघ चूतड़ की हड्डी से लगी हुई हड्डी का गुदा भी दिखाया गयाहै।

जब बालक धीरे २ बढ़ते और उन की हड्डियां छोटी और निर्बल होती हैं, तो यह समझ लो कि उसको यथायोग्य भोजन नहीं मिलता है। उन को अस्थि बनानेवाले भोजन देने चाहियें जैसे गेहूं मटर, सेम, दाल सागइत्यादि और गाय वा बकरी का दूध भी देना चाहिये ॥

जहां दो हड्डियों का संगम होता है उसे जोड़ कहते हैं उन जोड़ों में से कई जोड़ हिलने डुलनेवाले जोड़ चटखनी समान होते हैं जैसे उंगलियां, इन को हम खोल और बन्द कर सकते हैं, फिर कन्धों के जोड़ दूसरी प्रकार के हैं। यह गतिमान ही नहीं वरन हम हाथ को गोल घेरे में घुमा सकते हैं ॥

वह स्थान जहां पर दो हड्डियां परस्पर मिल कर जुड़ती हैं वे पुष्ट सन्धि-बन्धन से बन्धित होते हैं। कभी २ जब वे जोड़ बड़े जोड़ से और बलपूर्वक घुमाये जाते हैं तो ये सन्धि-बन्धन ढीले होजाते और टूट भी जाते हैं, इस को मोच कहते हैं ॥

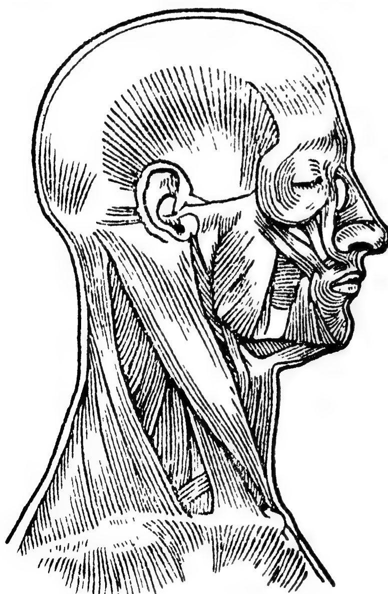
कभी २ हड्डियां टूट भी जाती हैं, यदि टूटी हड्डी की विधि पूर्वक रक्षा हो तो वह आप से जुड़ जायगी, जैसे कि वृक्ष की टूटी डाल जुड़ जाती है ॥

अध्याय ४५ में मोच आ जाने और हड्डी टूट जाने को उपचार-चिकित्साएं दी गई हैं ॥

स्नायु।

यदि त्वचा और त्वचा के नीचे की चर्बी निकाल दी जावे तो शरीर का आकार जैसे कि इस अध्याय में स्नायु के लिये उदाहरण चित्र दिया है दिखाई देगा। पृष्ठ ५६ जीवित स्नायु लाल है, गाय का वा बकरी का लाल मांस स्नायु है। शरीर में ५०० से अधिक स्नायु हैं। ये स्नायु आकार और परिमाण में नाना प्रकार के हैं, स्नायु के चित्र को देखने से विदित होगा कि कई तो लम्बे हैं, कई छोटे हैं कई गोलाकार हैं और कई बड़े हैं और कई अति छोटे हैं ॥

दहिना हाथ बांये बाजू के ऊपर रख कर साम्हने के हाथ को झुकाओ ऐसा न करने से तुम को स्पर्शज्ञान उन बड़ी स्नायुओं का होगा जो हाथ को घुमाते हैं। जब कोई चबाता है तो नीचे के जबड़े के स्नायुओं की गति कनपट्टी पर दृश्य होती है। स्नायु अङ्गों वा शरीर के दूसरे भागों को गति दशा में करने का काम करते हैं ॥



सिर और गर्दन के स्नायु।

जब हम घूमते फिरते हैं तब ही स्नायु कार्य्य करते हैं वरन् सीधे खड़े होने के समय बहुत सी स्नायुओं को निरन्तर संकुचित होना पड़ता है कि शरीर सीधा रहे, बहुत से लोग खड़े वा बैठते समय पीठ की स्नायुओं को ढीला कर देते हैं और परिणाम यह होता है, कि पीठ में कूबड़ निकल आता है और साम्हने झुकने लगते हैं यह न केवल कुरूप दिखता है, पर छाती के पोल की दीवार फेफड़ों में निहुड़ जाती और लम्बी सांस लेना कठिन हो जाता है जब कुर्सी पर वा पढ़ने की कुर्सी पर बैठते हो तो ऐसे बैठो कि शरीर सीधा रहे जब खड़े होते हो तो सीधे पूरी लम्बाई पर खड़े हो ऐसे खड़े



उचित बैठने की विधि।



अनुचित बैठने की विधि।



उचित विधि से खड़े होना।



अनुचित विधि से खड़े होना।

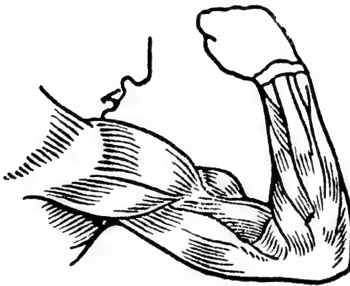
हो मानों किसी वस्तु को ऊपर उठा रहे हो जो सिर के ऊपर रखी है। ठुड्डी गर्दन के साम्हने उठी रहे, और छाती साम्हने निकली रहे, पेट बाहर को न निकले पर पीठ की ओर उसे खींचो॥

जितना सीधे उठने वा खड़े होने के विषय में कहा जाय वह सब थोड़ा है, हम पथ्य भोजन खा कर अपने रक्त को निर्मल क्यों न करें, पर सदा झुकने के कारण रक्ततन्तु शरीर के सम्पूर्ण भागों में यथोचित् रीति से रक्त का दौरान कभी नहीं कर सकते और यूं रोगी अवश्य ही हो जाओगे, पिता माता और गुरू गण को इस कारण सदैव देखना चाहिये कि बालक सीधे बैठें और सीधे खड़े होवें॥

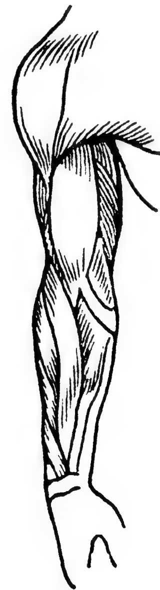
अध्याय ११।

कसरत।

शरीर को हृष्ट पुष्ट और स्वास्थ्य में रखने के लिये मनुष्य को यह अत्यावश्यक है कि प्रति दिन थोड़ी बहुत कसरत करे, यह बात प्रत्येक पर प्रत्यक्ष है कि कल को जब बहुत समय लों उपयोग में नहीं लाते तो वह जंगाल से भर जाती है और बेकार हो जाती है। यही दशा हमारे शरीर की भी है, यदि कई हफ़्तों लों हम बैठने और लेटने को छोड़ और कुछ न करें तो टांगें ऐसी निर्बल हो जायेंगी कि खड़ा होना और चलना असम्भव हो जायगा। यदि कसरत न करें तो स्नायु कोमल और छोटे हो जायेंगे पाचन शक्ति घट जायगी और रक्त में इतनी शक्ती न रहेगी कि रोग कृमि को जो हमारे शरीर में प्रवेश करें, नाश करें॥



बांह के स्नायु।



कसरत करते समय रक्ताशय शीघ्रता से चलता है और इस रीति से शरीर के प्रत्येक भाग में रक्त खूब पहुंचने लगता है कसरत करते समय जल्दी २ श्वास लेते हैं, और यूं प्राणप्रद वायू अधिकता से शरीर के प्रत्येक अवयव में पहुंचती है, प्राचीन कहावत है कि "मन प्रसन्न तो शरीर भी प्रसन्न है।" यदि शरीर की स्नायु और मांसपेशियों से परिश्रम

न लिया जावे तो मस्तिष्क हृदय निर्बल पड़ जाते हैं। यदि अच्छी स्मरण शक्ति के इच्छुक हो और शीघ्रतापूर्वक पढ़ना लिखना चाहते हो तो प्रति दिन कसरत करो कि शरीर की मांसपेशिएं और स्नायुएं परिश्रम करें॥

लोहार की बांह पुष्ट और शक्तिवान हैं क्योंकि वह प्रति दिन उस का उपयोग करता है। पहाड़ी कुली की टांगें बड़ी और बली होती हैं क्योंकि वह प्रति दिन कई मील चलता है, इस की अपेक्षा बहुत से विद्यार्थियों की टांगें और बांह और सम्पूर्ण शरीर छोटा और निर्बल रहता है और यही दशा कामकाजी पुरुषों की भी है क्योंकि वे दिन भर बैठे रहते और अपने टांग और बांह से यथोचित कार्य्य नहीं करते, बहुत लोगों का यह विचार है कि पढ़े लिखे लोगों को शारीरिकश्रम न करना चाहिये, केवल कुली लोगों को अपने हाथों से ऐसा काम करना चाहिये, यह उन की बड़ी भूल है। शारीरिक परिश्रम योग, और उत्तम काम है; जैसे पुरुष और लड़कों को शारीरिक परिश्रम और कसरत करना आवशयक है वैसे ही लड़कियों और स्त्रियों के लिये भी आवशयक है, क्योंकि यह निन्दा की बात है कि स्नायु कोमल और निर्बल होवें॥

जब ईश्वर ने मनुष्य को सृजा, तो वह जानता था कि शरीर को बली और स्वास्थ्य में होने के लिये क्या कुछ आवश्यक है, इस कारण उस ने शरीर के पोषण हेतु न केवल भोजन दिया पर यह भी कि मनुष्य काम करे भोजन उपार्जन करने के लिये, और शारीरिक परिश्रम भी इस भोजन हेतु करे। पीछे उस ने कहा "तू अपने पसीने की रोटी खायगा" वह मनुष्य जो अपना भोजन तो प्रति दिन खा लेता है वरन् अपने हाथ और पैर के स्नायु को शारीरिक परिश्रम द्वारा वा व्यायाम द्वारा कड़ा नहीं करता स्वास्थ्य के नियमों का बिरोध करता है। और उस को अवश्य रोगी और निर्बल शरीर दण्ड में मिलेगा॥

व्यायाम नाना प्रकार के होते हैं, पर साधारण काम करना जैसे बाग़ीचा बनाना। बढ़ई का काम इत्यादि अति उत्तम शारीरिक परिश्रम हैं दौड़ना घूमने जाना और तैरना भी व्यायाम की अच्छी विधियां हैं॥

जब बालक कुछ समय लों अपने पढ़ने की बेंच पर बैठे पढ़ते रहते हैं तो उन का श्वास प्रश्वास धीमा पड़ जाता और यथायोग्य वायु का संचार नहीं होता है। फेफड़ों में कम वायु जाती, रक्ताशय मध्यम वा मन्द चलता बुद्धि मन्द हो जाती और बालक अच्छी रीति से पढ़ नहीं सकता है, इस

लिये पाठक गणों को बालकों को छुट्टी देना उचित है कि वे बाहर आ कर दौड़ें और खेल खेलें, इस के उपरान्त श्वास प्रश्वास का अभ्यास और अङ्गों को फैलाने का अभ्यास ३ वा ४ क्षण दो पहर से पहले करा जो एक या दो बार और दो पहर बाद एक वा दो बार करालो, ऐसे अभ्यास द्वारा रक्ताशय का दौरान अधिक होने लगता है, लम्बी श्वास द्वारा वायु फेफड़ों में प्रवेश करती और बालकों के मन ताज़े हो जाते और वे यथायोग कार्य्य करने लगते हैं॥



अध्याय १२।

चेतन—तन्तु।

शरीर में बहुत से अवयव हैं। प्रत्येक अवयव का मुख्य कर्तव्य है। जैसे आमाशय का काम भोजन को चबाना है, गुरदे विषहरे सारहीन पदार्थों को निकालने में सहायता देते हैं। त्वचा शरीर में यथोचित गर्मी का यत्न करती है। रक्ताशय रुधिर का संचार करता है। प्रत्येक अवयव का नियत समय पर पृथक २ काम करना नियत है और ये परस्पर उत्तमता से अपना २ काम करते हैं। यदि ऐसा न करें तो शरीर रोगी हो जायगा और मृत्यु होगी॥

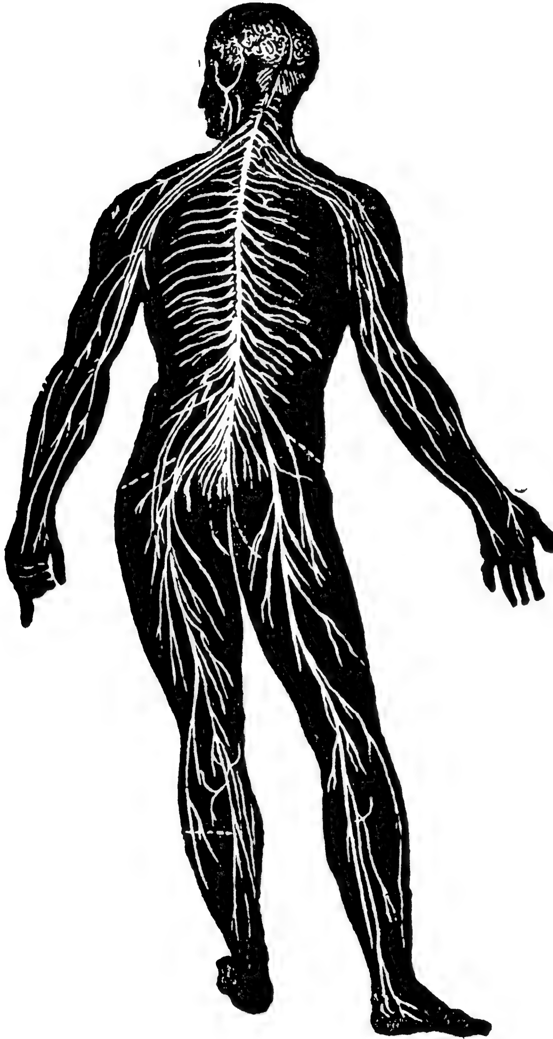
शरीर और उस के असंख्य अवयवों की उपमा एक सेना से दे सकते हैं। सेना में कुछ मनुष्यों को एक प्रकार का काम करना पड़ता है और किसी २ को दूसरे प्रकार का, पर सकल को अपना २ काम नियत समय पर करना अवश्य है और मुख्य बात यह है कि वे सब मिल कर एक मनुष्य की नाईं काम करें इस कारण केवल एक ही मनुष्य सम्पूर्ण सेना का प्रबन्ध एक में करे, और एक २ सिपाही के भी काम का प्रबन्ध करे। इसी प्रकार से शरीर में भी एक ऐसा सेनापति होवे जो प्रत्येक अवयव के काम का प्रबन्ध करे और उन्हें चलावे। यह सेनापति चेतना यन्त्र है॥

चेतना यन्त्र का काम यह है कि शरीर के सब अवयव ठीक समय पर अपना ठीक और यथोचित् कर्तव्य कार्य्य करें, जब हम अपना हाथ फैला कर किसी वस्तु को पकड़ना चाहते हैं तो यही चेतना यन्त्र है जो हमारी बांह के स्नायु को चलायमान गति में करता है। जब हम चलना चाहते हैं तो चेतना यन्त्र ही हमारी टांगों के स्नायु को चलाता है। चेतना यन्त्र ही द्वारा फेफड़े, हृदय, गुरदे और कलेजा अपना २ काम करते हैं ये शरीर के सम्पूर्ण भागों का प्रबन्ध करता है। जब हम विचार करते हैं वा स्मरण करते हैं तो यह भी चेतना यन्त्र के एक भाग द्वारा होता है॥

मस्तिष्क और पीठ का बांसा।

चेतना यन्त्र के दो मुख्य भाग हैं एक मस्तिष्क और दूसरा पीठ का

वांसा वा सुपुम्णा कन्द कहते हैं। मस्तिष्क हड्डी के एक डब्बे में जिसे खोपड़ी कहते हैं रक्षित है॥



साधारण चेतना यन्त्र।

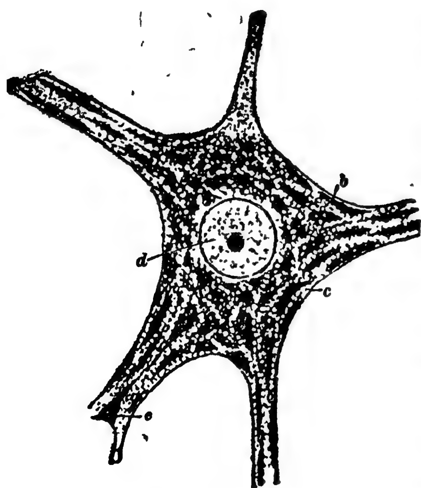
पीठ का बांसा रस्सी के समान भेजे का लम्बा खिंचा हुआ भाग है, और यह रस्सी प्रायः छोटी उंगली के बराबर मोटी होती है॥

यह पीठ का बांसा भेजे के निचले भाग में जुड़ा हुआ है और खोपड़ी में एक बड़े छेद द्वारा बाहर निकला है। विचित्र रीति से पीठ का बांसा चोट से रक्षित किया गया है। मेरुदण्ड की २४ हड्डियां एक दूसरे के ऊपर कमर से लगी हुई हैं और इन सब के बीच में एक छेद होता है जिस से इस से मेरुदण्ड में एक दृढ़ हड्डियों की नली बन जाती है और इस नली में पीठ का बांसा कटि के नीचे लों चला गया है॥

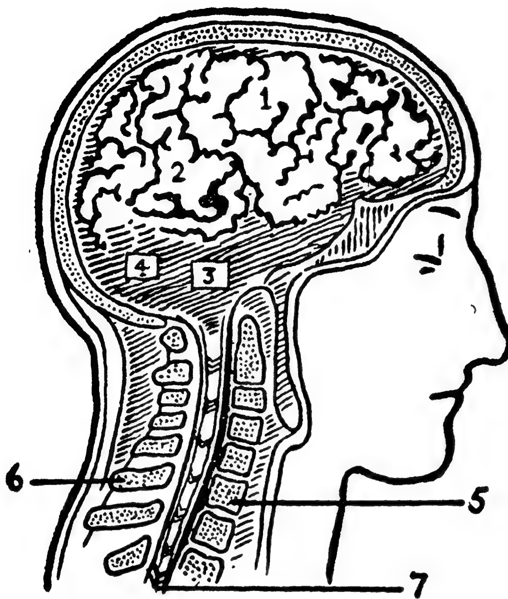
भेजे और पीठ के बांसा में से बहुत से सूक्ष्म और महीन और रेशम के तागे से भी महीन होते हैं। और चेतना तन्तु शरीर के सम्पूर्ण भागों में फैल गये हैं और यह तन्तु असंख्य और इतने घने होते हैं कि यदि एक महीन सुई शरीर में कहीं पर भी चुभाई जाय तो किसी न किसी तन्तु को अवश्य चुभेगी और पीड़ा होगी॥

चेतना अणु और रेसे॥

यदि मस्तिष्क और पीठ का बांसा को अलग २ करें तो यह देखोंगे कि वे असंख्य छोटे तागे के समान तन्तुओं के बने हैं। प्रत्येक तन्तु रेसे के छोर पर एक गांठ के समान बढ़ाव है वे चेतना गांठ वा अणु कहलाता है ये सब छोटे २ चेतना अणु मस्तिष्क और पीठ के बांसा में हैं वे चेतना अणु मस्तिष्क के भाग हैं जो विचार करता, स्मरण करता और स्नायु को गति दशा में करता है और शरीर के सब भागों का प्रबन्ध करता है ठीक जैसे कि बिजली के तार दूर के नगर में और बड़े तार घर में सम्बन्ध स्थापित करते हैं वैसे ही इन चेतना रज्जु को मस्तिष्क वा पीठ के बांस और शरीर के अन्य भागों में समाचार पहुंचाता है॥



एक चेतना तन्तु।



१ और २. बड़ा भेजा ३. सुषुम्णा कन्द ४. छोटा भेजा
५ और ६. रीढ़ की हड्डी ७. पीठ का बांसा॥

मस्तिष्क और पीठ के बांसा के कार्य्य।

मस्तिष्क और पीठ का बांसा एक प्रदेश के अध्यक्ष के समान है, जो अपनी राजधानी के दफ़्तर में रहता है और नसें जो शरीर के प्रत्येक भाग की ओर गई हैं उन बिजली के तारों के समान है जो अध्यक्ष के दफ़्तर से प्रदेश के मुख्य नगरों को गये हैं, इन तारों द्वारा समाचार नगरों के अध्यक्ष के दफ़्तर में आता है और विदित होता है कि क्या २ हुआ फिर वह एक दम से सन्देशा तार में भेजता है और नगर अध्यक्ष को जो कुछ करना है उस को आज्ञा देता है॥

मस्तिष्क में केवल शरीर के अन्य २ भागों से सन्देश नहीं आता पर वह आज्ञाएं भी बाहर भेजता है और इस से नसें गति दशा में हो जाती हैं॥ यदि हम घूमने फिरने की इच्छा करते हैं तो मस्तिष्क से स्नायु को आज्ञा मिलती है कि टांगों को चलाए यदि नेत्रों से मस्तिष्क को यह समाचार मिले कि शरीर के निकट सर्प है तो मस्तिष्क से स्नायु को तुरन्त आज्ञा मिलती है कि शरीर को तुरन्त गतियुक्त करे, यदि उंगली की नसों के द्वारा मस्तिष्क और पीठ के बांसा को यह सन्देश मिले कि उंगली गर्म वस्तु को छू रही है तो मस्तिष्क और पीठ के बांसा से तुरन्त बांह के स्नायु को आज्ञा मिलती है कि तुरन्त उंगली हटा लो, यदि हमारे चेतना तन्तु न होते तो हम को उंगली जलने की घटना का ज्ञान न होता, और उंगली हटाने के पूर्व हमारी उंगली सम्पूर्ण जल जाती॥

मस्तिष्क ही से विचार, स्पर्शज्ञान और स्मृति होती है, इसी के द्वारा प्रेम भाव और बैर भाव होता है, यह निर्णय करता है हम क्या करें और

कथा कहें शरीर के प्रत्येक भाग को वही अधिकार में रखता है। जब शरीर के किसी भाग और मस्तिष्क के बीच के तन्तु तार कट जावे वा किसी प्रकार से चोट लग जाय तो वह भाग सुन पड़ जाता है। अर्धांगी हो जाता है अर्थात् वह हिल नहीं सकता और उस में स्पर्श ज्ञान नहीं रहता। जो लोग दारू पीते हैं और व्यभिचारी हैं और जिन को गर्मी का रोग हो जाता है उन का शरीर कभी २ अर्धाङ्ग हो जाता है। क्योंकि मदिरा का विष और गर्मी के रोग का विष ये दोनों चेतना तन्तु तारों को मार डालते हैं॥

चेतना यन्त्र की रक्षा।

चेतना यन्त्र स्वास्थ्य दशा में रहे इस के लिये सम्पूर्ण शरीर को हृष्ट पुष्ट और शक्तिमान होना आवश्यक है, अच्छा भोजन, शुद्ध वायु, नीन्द और मानसिक और शरीरिक व्यायाम का यथोचित अभ्यास करने से चेतना यन्त्र भली दशा में रहता है॥

मन का धर्म वा भाव चेतना यन्त्र और सम्पूर्ण शरीर को स्वास्थ्य को अच्छी दशा में रख सकता है, इस बात के बहुत से प्रत्यक्ष प्रमान हैं। जैसे जब कोई मनुष्य संकोच में होता वा लज्जित होता है तो चेतना तन्तु रक्त की नलियों को त्वचा में ढीला करा देती हैं और इस से चहरे की त्वचा लाल पड़ जाती है। घबड़ाहट से हृदय जल्दी २ धड़कता है, कभी २ जब कोई बहुत भयभीत हो जाता है, तो यद्यपि शरीर गर्म भी न हो तब भी पसीना निकलने लगता है। अकस्मात् घटना का समाचार मस्तिष्क को मिलने से अचेत भी हो जाता है। जब कोई जन अति शोकित वा क्रोधित तो कई दिन खाना न खाने पर भी भूक नहीं लगती है। जब कोई जन प्रसन्न चित है तो भूक लगती है और शरीर के प्रत्येक भाग उत्तमता से अपना २ नियत कार्य्य करते हैं। इन सब बातों से प्रत्यक्ष है कि मस्तिष्क का कितना अधिक भाव शरीर पर है। स्वास्थ्य शरीर और स्वास्थ्य चेतना यन्त्र होने के लिये हमें उचित और निर्बल विचार करने अवश्य हैं, दुष्ट विचारों से मस्तिष्क रोगी हो जाता है और फल पागलपन ही होता है॥

मनुष्य की प्रधानता सम्पूर्ण जानवरों पर इसी बात पर निर्भर है कि उस में मस्तिष्क है। और मस्तिष्क होने से वह भले बुरे में अन्तर कर सकता है, मनुष्य ही में केवल ब्रह्म-रन्ध्र वा मस्तिष्क है और इस कारण यही केवल सृष्टि में ऐसा सृजा गया है कि ईश्वर की आराधना और सेवा

करे। जब ईश्वर ने मनुष्य को सृजा तो उसे अन्तः करण सहित रचा कि वह भली बातों का विचार करे और उत्तम विचार सोचे। उस ने चाहा कि मनुष्य ज्ञान और विद्या पढ़ कर अपने अन्तः करण में रक्खे और उपयोगी ज्ञान प्राप्त करे सो ईश्वर की इच्छानुसार प्रत्येक को करने का यत्न करना अवश्य है और अपने अन्तः करण को उचित बातों में लगाये रहना चाहिये। अन्तः करण को अपने अधिकार में रक्खो। क्रोधित विचारों को मन में न आने दो क्योंकि जैसा विष शरीर को नष्ट करता है वैसा ही क्रोध अन्तः करण को हानिकारक है वह जो आत्मसंयमी है उस की अपेक्षा बड़ा है जो नगर को जीतता है। उत्तम उपाय अन्तः करण की वृद्धि और सच्चे ज्ञान और बुद्धि को प्राप्त करने का यह है कि पृथ्वी के सृजनहार ई... विचार करो और ऐसे सोच विचार करो जिन से वह प्रस... करने के लिये हमें ईश्वरीय विचार जो धर्म पुस्तक में हैं ...

अभ्यास।

एक बच्चे का चेतना यन्त्र एक ऐसे कपड़े ... तह न किया गया और न उस में कोई ... तह किया जाता है तो उस में सिकुड़ ... करना सरल है जहां २ पर सिकुड़न ... वहां ... वरन् नई सलवटें बना कर तह कर... ... अति ही बालक है। जैसे ही वह सोच ... ...ार करने लग... ... करने लगता है तो अभ्यास मस्ति... पर हो जाता है, ठीक जैसे कि बार २ तह करने से सलवट ... ... हो जाता है तब उस समय से बाल... लिये विचार करना, बोल... ... काम करना सरल हो जाता है उसी री... जैसा उस ने अभ्यास डाल... और फिर बदलना कठिन हो जाता है॥

प्रथम जब बाजा बजाना प्रारम्भ करते हैं तो सम्पूर्ण ध्यान ... विचार उसी एक बात पर लगाना पड़ता है। पर जब हम उसी को बार २ बजाते हैं तो अभ्यास पड़ जाता है और पहिले के समान ध्यान नहीं लगाना पड़ता है, जैसे वह जिस ने बजाना सीख लिया है बजाते भी जाता है और उसी समय अन्य २ विचार भी करता जाता है॥

प्रायः जो कुछ हम करते हैं चाहे भला अथवा बुरा वह अभ्यास हो जाता है हम अन्तः करण को ऐसा शिक्षित कर सकते हैं कि केवल भली आदतें पड़ें, या वह बुरे विचार सारे समय सोचता रहे और दुर्वचन बार

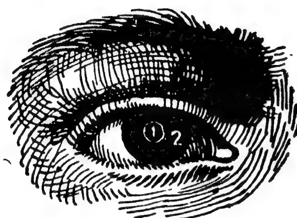
बोलने से दुष्ट कर्म बार २ करने से बुरी आदत पड़ जाती है। २५ वर्ष की आयु होने के पूर्व ही हमारी आदतें पड़ जाती हैं, सो यह कैसी मुख्य बात है कि बालकों और युवाओं को उचित रीति से शिक्षित करें, उन को सच्ची विश्वासी, न्यायी, निर्मल और भली बातों के विषय में सोच विचार करना सिखाना चाहिये, इस प्रकार से उत्तम आचरण हो जायगा, यदि मानसिक और शरीरिक अभ्यास उत्तम होंगे तो रोगों का रोक होगा और लम्बा उपयोगी जीवन अवश्य व्यतीत कर सकोगे ॥

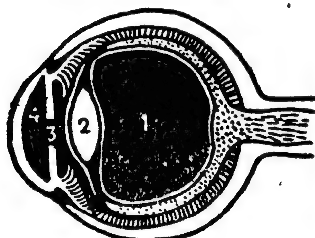


अध्याय १३।

नेत्र और कान।

नेत्र एक विचित्र अवयव हैं। प्रत्येक वस्तु कि जो दृष्टि में आवे चित्र खींच कर नेत्र तन्तु द्वारा मस्तिष्क को इन चित्रों के विषय में बता देता है। नेत्र को अति शीघ्र ही चोट लग सकती है इस कारण वे खोपड़ी के साम्हने के दो गड्ढों में सुरक्षित हैं, और भौं पलकों और पलकों के केश द्वारा रक्षित हैं॥





१. आंख की पुतली २. नेत्र-दर्पण
१. जल रूप रस २. कृष्ण मण्डल
३. कनिका मण्डल ४. भीतरी परत

किसी भी रोगी की दशा ऐसी दुःखित नहीं है जैसे अन्धे की वे न इच्छानुसार चल फिर सकते और न इच्छानुसार कार्य्य कर सकते हैं। जीविका उपार्जन निमित थोड़े से कार्य्य केवल कर सकते हैं और इसी कारण बहुतेरे भीखारी हैं। संसार की रमणीय वस्तुओं को वे देख नहीं सकते उन का जीवन ऐसा है मानों अंधेरे कमरे में वे जीवन भर बन्द हैं। इस कारण कि देख कर पढ़ नहीं सकते सो कठिनाई से उन को शिक्षा दी जाती है, सो यह अति आवश्यक है हम अपने नेत्रों की रक्षा यत्न पूर्वक करें कि अन्धे न हो जायें वा किसी रीति से नेत्रों को जोखिम वा चोट न लगे॥

नेत्रों की रक्षा।

छोटे बालक की आंखों की रक्षा यत्न पूर्वक करना उचित है। पैदा होते ही बोरिक ऐसिड से उस की आंखों को धोओ (उपचार चिकित्सा नम्बर १ अध्याय ५० में देखो) अध्याय २३ में भी सूचना देखो। जब बच्चा सोता हो तो उस को मच्छरदानी से ढांक दो कि मक्खियां उस की आंख पर न बैठने पावें और रोगी न करने पावें, उष्ण ऋतु में जहां कहीं जाओ

तो बच्चों की बहुधा आंखें आई हुई दृष्टि आती हैं मक्खियां इन रोगी नेत्रों पर आती हैं और न केवल इन का पीप खाती हैं पर कुछ उन की टांगों में भी लग जाता है, और वे उड़ जाती हैं और निरोग बच्चे की आंख पर बैठ उस के नेत्रों को अति शीघ्र रोगी कर देती हैं, क्योंकि जब बैठीं तो पीप बच्चे की अच्छी आंख में लग जाता और वह भी आ जाती हैं। इस प्रकार से एक रोगी नेत्रों वाले बालक से २० वा ५० वा १०० बालकों की आंखें आ जाती हैं॥

पाठशाला जहां पर बालक पढ़ते हैं यथोचित् उस में ज्योति होवे बालकों के बैठने की कुर्सियां नीची हों, कि उन के पैर भूमि पर रहें और मेज़ भी नीची हो, ऐसा कि जब पुस्तक मेज़ पर रखी हो और बालक सीधा बैठा हो तो वह नेत्रों से एक फुट की दूरी पर हो। बालक के पढ़ने की पुस्तक के अक्षर बड़े २ छापे के हों और साफ़ छापा हो। बालक जब खसरा माता, बड़ी माता, लाल ज्वर से अच्छा हो जाय तो कई हफ़्तों लों उसे शाला में न भेजो क्योंकि इन रोगों से नेत्रों को जोखिम होता है और नेत्र निर्बल हो जाते हैं॥

जब नेत्रों में कुछ पड़ जाता है तो बहुधा लोग उंगली के छोर से अथवा मैले कपड़े से पोंछते हैं, यह आंखो को रोगी करने की एक निश्चय रीति है क्योंकि उंगली कई मैली वस्तुओं को छूती हैं और कपड़ा नाक साफ़ करने के काम में आता है, और २ मैले कार्य्यों में उस का उपयोग होता है, और उस में पीप उत्पन्न होने के बहुत से कृमि होते हैं जब ये पीप उत्पन्न करनेवाले कृमि आंख में लगते हैं तो ज्वलन और पीड़ा होने लगती है और वह लाल हो जाती है और पानी बहने लगता और थोड़े ही समय में गाद आने लगती है। भोर को नेत्रों के कोनों में बहुत सा गाद जम जाता है। इस कारण कदापि नेत्रों को मैले रुमाल अथवा हाथ से न पोंछो। यदि आंख में धूलि का कण वा कुछ मैल पड़ जाय तो कुछ बून्द बोरिक ऐसिड को डाल कर स्वच्छ कर लो (देखो उपचार चिकित्सा नम्बर १ अध्याय ५०) यदि बोरिक ऐसिड प्राप्त न हो सके तो रुमाल वा कपड़े से पोंछने की अपेक्षा भला होगा कि स्वच्छ पानी से धो डालो॥

तम्बाकू और मदिरा द्वारा नेत्रों को अधिक जोखिम पहुंचती है। तुम ने कदाचित् देखा भी होगा कि दारू पीनेवाले की आंखें लाल रहतीं हैं। और तम्बाकू पीने वाले की आंखें पीली सी दृष्टि होती है। और दारू पीनेवाले और तम्बाकू पीनेवालों का दृष्टि गोचर अच्छा नहीं होता॥

नेत्रों की रक्षा के निमित और उन को हानि अथवा रोगों से रक्षित रखने के लिये जो कुछ वर्णन हो चुका है उस पर और निम्न लिखित बातों पर ध्यान देना उचित है ॥

१. एक कम प्रकाशित स्थान में कभी न पढ़ना चाहिये न चिकनकारी का काम करना चाहिये ॥

२. पढ़ते समय ज्योति की ओर मुंह कर के न बैठो। यह भला होगा कि ज्योति पीछे से कन्धे की ओर से पुस्तक पर पड़े ॥

३. पढ़ते समय वा ऐसा काम करते समय जिस में अधिक ध्यान लगाना अवश्य है कभी २ नेत्रों को विश्राम दो, या तो थोड़े समय लों उन को मून्दो वा खिड़की बाहर आकाश वा हरे वृक्ष वा हरी घास की ओर दो चार मिनट देखो ॥

४. जब धूल के कण वा कोई अन्य पदार्थ नेत्रों में पड़ जाते हैं, तो आंखों को मलना उचित नहीं पर बोरिक ऐसिड के पानी को डाल कर इन अन्य पदार्थों को नेत्र बाहर करो, यदि बोरिक ऐसिड का पानी न मिले तो उबले हुए ठण्डे स्वच्छ पानी का उपयोग करो ॥

५. तौलिया, साबुन, चिलमची, मुंह पोंछने के कपड़े जो दूसरे उपयोग करते हैं उन से अपना काम न करो क्योंकि वे जिन्हों ने इन का उपयोग किया कदाचित उन की आंखें आई हों और यदि यह हो तो तुम्हारी निश्चय आंखें आ जायेंगी ॥

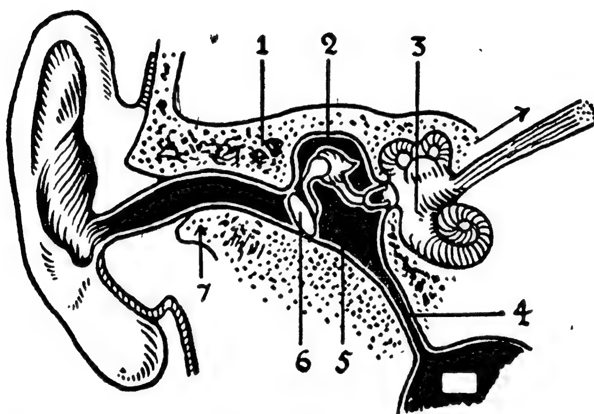
६. धूआं आंखों को अति हानिकारक है। यदि चूल्हा जिस में खाना पकता है उस का धूआं निकलने का निकास न हो तो हानिकारक धूएं से घर भर जायगा, और जब यह घटना प्रति दिन ३ बेर हुआ करेगी तो पूरे घराने के नेत्र बिगड़ जायेंगें। थोड़े ही खर्च से निकास चिमनी बन सकती है और इस से प्रत्येक का दुःख दूर हो जायगा ॥

कान की रक्षा।

इस अध्याय में जो कान का चित्र दिया है, उस को परिक्षा करने से यह विदित होगा कि कान के तीन विभाग हैं वह भाग जो सिर के बाहर दिखाई देता है वह जो बाहरी छेद है वह केवल बीच के कान में जाने का रास्ता है; और भीतरी कान में शब्द आने का मार्ग है मध्य कान में एक नली है जिस का एक सिरा गले से लगा है। यदि यह नली बन्द हो जाय तो बहिरे हो जाते हैं। जब किसी को सर्दी होती है और नाक

और गला कफ़ से भरा हो तो गला और यह नली जो कान और गले से लगी है फूल जाती है और नली बन्द हो जाती है यह बहिरेपन का एक कारण है ॥

जब श्रवण और गले की मध्य की नली बिगड़ जाती है तो श्रवण के भीतरी भाग में भी बिगाड़ हो जाता है। जब गाद मध्य श्रवण में होता है और मैल से कान भर जाता है तो श्रवण पीड़ा होने लगती है। इतना मैल होकर इकत्र हो सकता है कि कान की झिल्ली को दबाता है और उस में छिद्र कर के निकलने लगता है और कान में दोखने लगता है, इन की उपचार चिकित्सा ४४ अध्याय में दी है ॥



१. हड्डी २. मध्य का कान की छोटी हड्डी ३. कान का छिद्र और भीतर की पोल ४. नली जो मध्य कान और गले के भीतर है ५. मध्य कान ६. कान का पर्दा ७. हड्डी

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट विदित होता है कि कान एक अति कोमल अङ्ग है इस की रक्षा निमित कुछ निम्न लिखित मुख्य बातें हैं सो ध्यान पूर्वक पढ़ना उचित है ॥

१. कान का मैल एक मुख्य कार्य्य के लिये है, यह मैल अति कड़वा है इस कारण कोई कीड़ा इस में नहीं जायगा, हां अकस्मात् से कोई पड़ जाय वह दूसरी बात है। कान के मैल को कदापि खोद के न निकालना चाहिये यदि यह मैल कड़ा हो जाय सुनने में बाधा हो तो जैसा नियम निकालने

का ४४ अध्याय में दिया है वह उपयोग करो कान के बाल धूलि और कीड़ों को कान से बाहर रखते हैं, नाई से इन बालों को साफ़ न कराओ॥

२. यदि कोई कीड़ा कान में पड़ जाय तो कुछ बूंद तिल का गर्म तेल डाल कर निकालो, तो यह कीड़ा मर जायगा या बाहर निकल आयगा और तब गर्म पानी की पिचकारी द्वारा बाहर निकल जायगा॥

३. ज़ोर से नाक न छींको, इस से नाक और गले के कीड़े कान और गले की नली द्वारा श्रवण में प्रवेश करेंगे और इस से बहिरापन होगा॥

४. श्रवन पर कभी बालक को न मारो ऐसा करने से श्रवण में छिद्र पड़ेगा और बहिरा होने का भय होगा॥



अध्याय १४।

जननेन्द्रिय यन्त्र और उन की रक्षा।

(पुरुष के अवयव का मुख्य वर्णन।)

शरीर में अनेक प्रकार की क्रियाएं होती हैं। इन में से जनन व्यापार के अवयवों की क्रियाओं के सामान्य ज्ञान का वर्णन इस पुस्तक में इस कारण से किया जाता है कि इन बातों का ज्ञान न होने के कारण से अति घोर और नाशक रोग में मनुष्य जाति फंस जाती है और मनुष्य जाति में नाना प्रकार के दुराचार भी फैल जाते हैं और मनुष्य उन के आधीन हो जाता है॥

जब लड़का १५ वा १६ साल की वय में होता है उस के शरीर में परिवर्तन होना आरम्भ होता है। उस ने युवावस्था प्राप्त की वरन् इस वय में उस ने पुरुषत्व को न पाया क्योंकि नियमानुसार युवावस्था से पुरुषत्व को पहुंचने में ८ वर्ष लगते हैं, इस कारण २४ अथवा २५ वर्ष की अवस्था में पुरुष की मानसिक और शारिक शक्तियां पूर्ण रीति से बढ़ जाती हैं और यह विवाह सम्बन्ध और पिता बनने के योग्य हो जाता है॥

युवावस्था में लड़के में ये परिवर्तन होने लगते हैं कि बगल में मुंह पर और वीर्य्याशय में बाल जमने लगते हैं। ध्वनी बदलती है और शिश्न वा लिङ्ग बढ़ जाता है वृषण वा आंड में वीर्य्य उत्पन्न होने लगता जिस से जननेन्द्रिय क्रिया होती है॥

इस समय यदि पिता और माता और पाठकगण यथोचित प्रकार से शिक्षित और सावधानी लड़के की न करें तो दुष्टाचार का अभ्यास पड़ जावेगा। लड़के को अधिक तर घर से बाहर काम करना और खेलना चाहिये। उस को दुष्ट मित्रों की संगित में न रहने देना चाहिये यह अति योग्य है कि उसे सच्चे ईश्वर का भजन और आराधना कराई जावे और धर्म पुस्तक जो सम्पूर्ण पुस्तकों में से सब से उत्तम पुस्तक है उसे प्रति दिन पढ़ने में उत्कण्ठता डाली जाय युवा मनुष्य का भली आदतों के डालने में धर्म पुस्तक के समान और कोई शिक्षा उत्तम सहायक नहीं हो सकती है॥

पुरुष के अङ्ग और उपाङ्ग का भेद और वर्णन।

पुरुष जाति का वीर्य्य उत्पादक अवयव में शिश्न वा लिङ्ग और वृषण या आंड की थैली है पुरुष अण्ड की दो गोलियां होती हैं, प्रायः लिङ्ग का छोर १ इंच लों स्थूलाकार बना है और यह सुपारी कहलाता है। पतली चमड़ी जो इस सुपारी को और लिङ्ग के अग्र भाग को ढकती है ढीली होती है और खिंची जा सकती है, इस चमड़ी को अग्र भाग की चमड़ी कहते हैं। यदि चमड़ी पूरी २ न खिंच सके कि पूरी सुपारी दिखाई दे, तो अवश्य कोई बिगाड़ है और एक चतुर डाक्टर को दिखाना अवश्य है। चमड़ी के नीचे स्वेत धातु एकत्र हो जाती है और यदि इस को समय २ पर न धोवें तो दुर्गन्धि आने लगेगी और खुजली भी होने लगेगी यह खुजली लिंग के स्वच्छ न रखने के कारण से होती है और असंयम का अभ्यास युवा पुरुषों में पड़ जाता है॥

पुरुष अण्ड की दो गोलियां एक थैली के भीतर होती हैं जिसे वृषण कहते हैं इस में बिन्दु-उत्पादक जन्तु वृद्धि पूर्वक उत्पन्न होते हैं, ये जन्तु संख्या में अधिक हैं और दूरबीन रहित सूक्ष्म होने के कारण दिखाई नहीं दे सकते हैं। बीज-निःसारक समय बिन्दु-उत्पादक जन्तु नली में से हो कर मूत्र मार्ग में जाते हैं और यहां से लिङ्ग में प्रवेश कर बाहर निकलते हैं। स्त्री प्रसङ्ग समय ये बिन्दु-उत्पादक जन्तु स्त्री की योनी में रह जाते हैं और उन में से एक स्त्री-बीज से जो स्त्री से उत्पन्न हुआ मिल जाता है ज्योंहि बिन्दु-उत्पादक जन्तु स्त्री-बीज से मिल जाता है त्योंही वह बढ़ता है और दो सो अस्सी दिनों में पूरा २ बालक बन जाता है॥

वीर्य्याशय निकालना।

दो थैलियां होती हैं (एक वीर्योत्पादक बिन्दु और दूसरा बिन्दु-उत्पादक जन्तु) ये मूत्र मार्ग से लगी हुई है। युवावस्था पश्चात् इन थैलियों में कुछ २ गाढ़ा स्वेत धातु उत्पन्न होता है। एक युवा पुरुष में जिस का विवाह नहीं हुआ और व्यभिचारी नहीं है ये धातु एकत्र हो प्रत्येक १० वा १५ वें दिन बाहर निकलता है। किसी २ युवा पुरुष का माहवारी निकलता और किसी २ का प्रति दो वा तीन मास के अन्तर पर निकलता है। रात्रि के समय में जब युवक सोता हो तब ये निकलता है और कभी स्वप्न भी दीखते हैं इन को बीज-निसारक क्रिया कहते हैं, इस प्रकार का धातु निकलना स्वाभाविक घटना है और युवक को भयभीत न

होना चाहिये। समाचार पत्रों में जो सूचनाएं छपती हैं कि स्वभाविक धातु निकलने से वीर्य्य शक्ति नष्ट हो जायगी ध्यान न दो और न औषधियों का उपयोग इस के लिये करो, यदि यह घटना १० दिन से पूर्व होवे और दूसरे दिन सिर में पीड़ा होवे और सुस्ती आवे तो किसी चतुर डाक्टर को जा कर दिखाओ क्योंकि वह स्वाभाविक नहीं है। ये धातु निकलना केवल ऐसे युवकों का है जो पवित्र जीवन व्यतीत करते हैं, बुरी पुस्तकों को नहीं पढ़ते न निर्लज्ज चित्रों को देखते और न दुष्ट और कामी विचार रखते हैं। असंयमी होने से, कामी विषयी पुस्तकों के बाचने से ये धातु निकलती है और इस से बल भी नष्ट होता है॥

संयमी।

संयम का अर्थ एक बिन ब्याहे युवक के विषय में यह है कि वह स्त्री प्रसङ्ग से बिलकुल ही दूर रहे। और ब्याहे युवक के विषय में संयम से यह अर्थ है कि जब उन में काम की इच्छा होती है तो उसे रोके। युवकों को संयमी जीवन व्यतीत करना चाहिये, प्रत्येक युवक को कभी २ काम-वेगरूप अग्नि विवाह के पूर्व प्रज्वलित होगी, परन्तु यदि वह इस बात का इच्छुक है कि स्वस्थ्य और हृष्ट पुष्ट रहे और उद्योगी, आनन्दित मनुष्य होवे और कभी पत्नी और बालक होवे तो उस को संयमी होना आवश्यक है। ऐसा करने के लिये इन्द्रियों पर अधिकार रखना चाहिये, कितने काम वृति के आधीन हैं: हस्त-मैथुन का प्रचार और अनुचित प्रसङ्ग स्त्री से करते हैं। इन दोनों प्रकार से वे अपने को पतित बनाते हैं॥

हस्त-मैथुन।

हस्त-मैथुन एक दुष्ट लत है और जब बालक छोटा होता है तब यह लत सीखना शुरु करता है। कभी २ बालक के सेवक उस के लिङ्ग को पकड़ कर उसे बहलाते हैं, कुछ समय पश्चात् बालक अपने लिङ्ग से खेलना सीखता है, और उस को यह स्वभाविक लत पड़ जाती है। बालकों को झोली में डाल कर पीठ पर लटकाने से वा टांगें फैलाकर कूल्हे पर बिठाने से उन के लिङ्ग सदैव रगड़ खाते रहते हैं और लिङ्ग के सदैव गति दशा में होने के कारण लड़का हस्त-मैथुन का अभ्यासी हो जाता है। लड़के इस अनिष्ट लत को अपने साथियों से पाठशाला में भी सीख लेते हैं। कभी ऐसा भी होता है कि लिङ्ग के ऊपर का चमड़ा बहुत लम्बा और तंग होता है इस से लिङ्ग के सिरे पर खुजली और जलन होती है,

लड़का उसे मलने लगता है और धीरे २ यह लत पड़ जाती है। इस कारण जब कभी यह देखो कि लड़का अपने लिङ्ग को अथवा उस के निकटवर्त्ती भाग को बहुत मलता और खुजलाया करता है तो जान लो कि उसे किसी चतुर डाक्टर के पास ले जाना चाहिये और उस का 'खतना' कराना चाहिये॥

प्रत्येक बार जब एक युवक हस्त-मैथुन किया करता है, तो अपने जीवन का कुछ अङ्ग और बल फैंकता है ठीक उसी तरह जैसे कि अपनी स्नायु को काट कर कई औंस रक्त बहा देवे, प्रत्येक को यह बात भली भांति ज्ञात है, कि यदि वह प्रति दिन वा दूसरे दिन इस प्रकार से रक्त बहा देवे तो शरीर को बड़ी हानि होगी और जीवन पर भी आक्रमण हो जायगा, परन्तु हस्त-मैथुन से जो आक्रमण होता है वह इस से भी अधिक है। केवल यह ही नहीं पर जो युवक हस्त-मैथुन करता है वह दुराचारी बन जाता है, वह स्वयम् पतित है और निरूपयोगी भी है उस समय तक कि इस दुष्ट लत को छोड़ दे। एक लड़के को इस लत से छुड़ाने के लिये प्रथम उस का खतना कराना चाहिये॥

व्यभिचार।

व्यभिचार एक अति घोर और बड़ा पाप है जो मनुष्य करता है प्रथम तो यह अति नीच पाप है इस से पुरुष और स्त्री दोनों अति नीचे हो के अपमानित होते हैं और पशुओं के तुल्य हो जाते हैं। व्यभिचार ऐसा भयानक पाप है कि कठिन दण्ड के योग्य है और दण्ड का एक भाग यह है कि नपुंसकता के रोग व्यभिचार द्वारा हो जाते हैं और कभी २ एक बार विषय-वासना करने पर रोग लग जाता है जिस के कारण कई वर्ष कष्ट भोगना पड़ता है। यह रोग प्रमेह, धातु दौर्बल्य और गर्मी के रोग हैं। और इस का वर्णन ४१ वें अध्याय में होगा॥

व्यभिचार के विषय में परमेश्वर स्वर्ग से मनुष्यों को चेतावनी और शिक्षा देता है। वह कहता है „धोखा न खाओ, परमेश्वर ठट्ठों में नहीं उड़ाया जाता क्योंकि मनुष्य जो कुछ बोता है वही काटेगा। क्योंकि जो अपने शरीर के लिये बोता है सो शरीर से विनाश की कटनी काटेगा।" गलातियों ६:७,८॥

वेश्याओं के विषय में धर्म-पुस्तक कहती है "क्योंकि बहुत लोग इस के मारे पड़े हैं उस के घात किये हुओं की एक बड़ी संख्या होगी।

उस का घर अधोलोक का मार्ग है पर मृत्यु के घर में पहुंचाता है।" नीति वचन ७:२६,२७॥

प्रथम विषय-वासना के विचार मनुष्य सोचता तब व्यभिचार करता है और इस बात का दृढ़ प्रमाण है कि दुर्विचार का प्रभाव इतना अधिक मनुष्य पर पड़ता है मानों वह कुकर्म कर रहा है इस कारण परमेश्वर मनुष्यों को चिताता है, "तुम ने सुना है कि आगे के लोगों से कहा गया था, कि पर स्त्री गमन मत कर। परन्तु मैं तुम से कहता हूं कि जो कोई किसी स्त्री पर कुइच्छा से दृष्टि करे वह अपने मन में उस से व्यभिचार कर चुका है"। मत्ती ५:२७,२८॥

संयमी कैसे रहें।

एक पुरुष को बिवाह के पूर्व सहवास रहित रहना कठिन नहीं है। और जैसे कोई समझते हैं यह स्वास्थ्य को हानिदायक भी नहीं है, कोई पुरुष ऐसी पत्नी नहीं चाहता जिसका सहवास अन्य पुरुषों से हो चुका है प्रत्येक मनुष्य इच्छुक है कि उस की पत्नी कुवारी शुद्ध और पवित्र स्त्री हो यदि स्त्री संयमी है तो पुरुष को भी अवश्य संयमी होना उचित है। यह पुरुष और स्त्री का यथोचित सदाचार और शुभ प्रसगों के वक्ता हैं॥

काम रुची जैसे बिबाह पहले बन्धेज में रखते थे वैसे बिवाह पश्चात् करना चाहिये, सहवास का मूल अर्थ सन्तानोपत्ति है इस कारण पूरुष को कामाभिलाषा में फंस कर प्रति दिन वा दो दिन पश्चात् सहवास विवाह के बाद न करना चाहिये। सहवास उन लोगों को भी जो बड़े घरानों को पालन कर सकते हैं माह में एक वा दो बार से अधिक न करना चाहिये, (देखो २३ अध्याय) सहवास, रज-स्राव वा गर्भवती होने पर न करना चाहिये और प्रसव होकर कम से कम तीन महीने पश्चात् सहवास करना उचित है। गर्भवती होने पर सहवास करने से बहुधा गर्भ जाता रहता है और यदि हानि भी न हो पर वह स्त्री की चेतना शक्ति को कम करता है और स्त्री की स्वास्थ्य और गर्भाशय के बालक को हानिकारक होता है॥

अविवाहित पुरुष और विवाहित पुरुष को जब सहवास को कामना प्रबल हो तो उन के रोकने के उपाय भी हैं वह मनुष्य जो मानस्कि और मस्तिष्क का बहुत थोड़ा काम करता है, पर अधिक भोजन खाता है, उसे यह कामना अधिक होगी, और वह कामना में फंस कर व्यभिचारी वा अस्वाभिक मैथुन के उपयोग में व्यस्त रहेगा। सो संयमी और सदाचारी

जीवन व्यतीत करने के लिये मसालेदार भोजन और गोश्त अधिक उपयोग न करना चाहिये। भला हो कि गोश्त को बिलकुल ही त्याग दे, फल अन्न और मेवे और साग तरकारी मनुष्य के लिये जो स्वच्छ और पवित्र जीवन व्यतीत करने के इच्छुक हैं उत्तम भोजन हैं॥

बहुधा यह बात देखने में आती है कि वेश्याओं के घरों के निकट दारू की दुकान भी होती हैं, कारण यह है कि दारू पीने का एक प्रभाव यह है कि वह काम रुचि को उत्तेजित करती है सो जहां मदिरा बिकती है वहां पर वेश्या अवश्य ही रहेंगी। और तम्बाकू का भी यही परिणाम है पर उस का प्रभाव दारु से कुछ कम है। चाय और काफ़ी जननेन्द्रिय के स्नायुओं को उत्तेजित करती हैं। संयमी जीवन व्यतीत करने के लिये तम्बाकू और दारू को बिलकुल छूना ही न चाहिये। उपन्यासों में नायका-नायकों का प्रेमालाप पढ़ने से खराब तसवीरें देखने से मित्रों के साथ एकान्त में फ़ोश बातें सुनने से अदम्य कौतूहल और अचलता पैदा हो जाती है॥

प्रति दिन एक बेर पैख़ाना होना अवश्य है यदि न हो, तो मल से विष जम कर जननेन्द्रिय स्नायुओं को उत्तेजित करता है (देखो २१ अध्याय जिस में कैसे प्रति दिन पैख़ाना होने की सूचना दी है॥

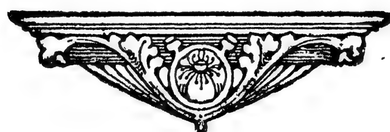
अधिक जल पान करो कि मूत्र हलका हो और मूत्राशय और मूत्रमार्ग को उत्तेजित न करो सोने को ६ बजे जाओ और तड़के उठो, दो घण्टे कम से कम शरीरिक परिश्रम करो और इस प्रकार करो कि पसीना निकले॥

शरीर को स्नान द्वारा स्वच्छ रखो। जननेन्द्रिय के अवयव भी प्रति दिन धोओ, यह तो उस पुरुष को करना चाहिये जिस की लिङ्ग की खलड़ी लम्बी है और अग्र भाग को खुला नहीं छोड़ता है, जब स्त्री प्रसङ्ग की कामना प्रबल हो तो व्यायाम खूब जल्दी २ करने से वा जननेन्द्रिय अवयव को ठंडे पानी से कई क्षण लों धोने से इच्छा जाती रहती है॥

विचारों को स्वाधीन रखने का वर्णन हो ही चुका है। इस बात के विषय में जितना कहा जाय सो सब थोड़ा है। "जैसे मनुष्य अपने हृदय में विचार करता है, वैसा ही वह है" वह मनुष्य जो भोग बिलास और विषय-वासना का केवल विचार करता है और जब २ स्त्री को देखता है उस के मन में कामना और दुर्विचार उत्पन्न होते हैं, तो कभी न कभी दुराचार भी करेगा। वह अपनी मानसिक शक्ति को दुर्बल करता है और

परीक्षा में गिर जाता है। इस लिये पढ़ने में दृत्त-चित्त रहो और स्वच्छ, पवित्र विचार सोचो, इस का प्रयत्न करो कि संसार में उपयोगी मनुष्य बनो, भर सक परिश्रम करो और प्रयत्न भर पढ़ने में परिश्रम करो। काम काज में लगे रहने से विषय वासना की कामना करने को समय न मिलेगा, विचार शक्ति बलवती हो जायगी और सम्पूर्ण शरीर बलिष्ठ और हृष्ट पुष्ट हो जायगा। प्राचीन कहावत स्मरण करो "आलसी मस्तिष्क शैतान का कार्यालय है॥"

कामेन्द्रिय का अधिक उपयोग करना अधिक पाप है जो कि अब अति ही प्रचलित होता जाता है और बहुतेरे भावुक युवकों की उपयोगिता को मिट्टी में मिला देता है। सहवास के सम्बन्ध में नियम-विरुद्ध आचरण करने से अल्प जीवन होता है, यह ऐसा है कि मोमबत्ती को दोनों छोर से जलाना॥



अध्याय १५।

जननेन्द्रिय यन्त्र और उन की रक्षा।

(स्त्री जाति की जननेन्द्रिय का मुख्य वर्णन।)

यद्यपि इस जननेन्द्रिय क्रिया के विचित्र काम में पुरुष और स्त्री दोनों सह-भागी होते हैं परन्तु मुख्य भाग स्त्री के मत्थे पड़ता है। माता के उदर में रक्षित हो कर प्रत्येक बालक के जीवन का आरम्भ होता है। और माता ही की योनी में २८० दिनों लों उस के प्रथम जीवन का पोषण होता है। न केवल २८० दिनों तक उस का जीवन माता पर अवलंबित है पर बहुधा डेढ़ साल लों वह माता की रक्षा और पालन पोषण पर अवलंबित है। माता का दूध छुट जाने पर भी वह कई वर्ष लों माता की रक्षा से ही पोषण होता है॥

इस से यह बात सिद्ध है कि बालक के भविष्य को बनाने में माताका पिता की अपेक्षा अधिक भाग है, इस कारण से कि बालक माता के गर्भ में रहता है और फिर उस का पालन पोषण माता ही के हाथ में है पुरुषों को उचित है कि स्त्री जाति को आदरपूर्वक योग्य महत्व दें क्योंकि बालक के बनाने में शरीरिक और मानसिक शिक्षा सिखाने में और सदाचारी बनाने में माता का मुख्य भाग है। ऐसा भारी काम उस के भाग में होने के कारण उचित है कि वह यथोचित रीति से शिक्षित हो और विद्याभ्यास प्राप्त करे न कि घर के काम धन्धों में फंसी रह कर उस का जीवन दुखःमयी हो जाय और जब उन का शरीर पूरी रीति से पुष्ट बलिष्ट और स्वस्थ हो जाय तब माता बनने का भार उन पर पड़े॥

जनन-व्यापार के अवयव, स्त्री जाति के उत्पत्ति अङ्गों की रचना।

स्त्री-अण्ड-फलकोष और गर्भाशय, स्त्री जाति के जननेन्द्रिय अवयवों में दो मुख्य अवयव हैं। फल-कोष दो छोटी गोलाकार वस्तुएं हैं। वे उदर के निचले भाग में हैं। उन का स्थान अस्थि चित्र (सामने) में देखने से मिल जायगा। फल कोष में दाने उत्पन्न होते हैं। ये दाने इतने सूक्ष्म हैं कि यदि १२५ पास २ रक्खे जांय तो १ इंच लम्बे भी न होंगे॥

फल-वाहिनी नली ४ वा ५ इंच लम्बी होती है और एक छोर पर गर्भाशय से मुड़ी रहती है और दूसरा छोर फल-कोष लों गया है। दाना इस नली द्वारा फल-कोष से गर्भाशय में जाता है॥

गर्भाशय का आकार अस्थि पञ्जर चित्र में दिखाया है। एक कुमारी का गर्भाशय पौने तीन इंच लम्बा और पौने दो इंच चौड़ा होता है। उस का निचला छोर योनि लों लगा है॥

योनि का निचा छेद एक पतली झिल्ली से प्राय: बन्द होता है, यह झिल्ली प्रथम सहवास के समय फट जाती है। झिल्ली में कोई भी छिद्र न हो वा कोई रोग के कारण बन्द हो गया हो, इस दशा में श्वेत जल की तरह पतला पदार्थ योनि में एकत्र होकर फूल जायगा और पीड़ा होगी। जब यह दशा हो तो बालक को उपचार चिकित्सा के लिये चतुर डाक्टर के पास ले जाना चाहिये॥

युवावस्था और रज-स्राव।

एक लड़की १ से १५ वर्ष की अवस्था में युवती स्त्री हो जाती है। इस समय उस के शरीर में वे परिवर्तन होते हैं जो उस के बच्चा जनने योग्य बनाती हैं। उस के बगल में और नाभी के नीचे बाल निकलने लगते हैं। छातियां धीरे २ बढ़ने लगती हैं। उस का सम्पूर्ण शरीर बढ़ने लगता है और रज-स्राव होने लगता है॥

रज-स्राव बहुधा प्रत्येक २८ वें दिन होता है और पांच दिन लों बहुधा रहता है। रज-स्राव के समय गर्भाशय की भीतरी चमड़ी ज़रा २ सी गिर जाती है। रज-स्राव बहुत कर रक्त और धातु का होता है। गर्भवती होने पर रज-स्राव बन्द हो जाता है और जब बालक को दूध पिलाती हैं तब भी बन्द रहता है। रज-स्राव ४५ वर्ष की अवस्था में बन्द हो जाता है। जब यह बन्द हो जाता है तो फिर स्त्री के बच्चे उत्पन्न नहीं हो सकते हैं॥

कई २ लड़कियां पूरी आयु की होने पर भी रज-स्राव से नहीं होतीं, इस के लिये उपचार चिकित्सा ४२ अध्याय में होगा॥

रज-स्राव शीघ्र भी हो सकता है, एक ९ वा १० साल की लड़की को होने लगता है, जैसे रज-स्राव प्रारम्भ हो तो लड़की गर्भवती हो सकती है और बालक उत्पन्न हो सकता है परन्तु यह अस्वाभिक घटना है कि कन्या इस छोटी अवस्था में ब्याही जाय और वह बच्चे जने। १० वर्ष की अवस्था में और १६ वा १७ वर्ष की अवस्था में कन्या केवल बालक ही है

और उस का शरीर और मन यथा योग्य नहीं बढ़ने पाया है, यदि वह गर्भवती हो तो पूर्ण रीति से बढ़ न सकेगी और सदा बौनी रहेगी, और इस लिये कि उस का शरीर पूर्ण रीति से बढ़ा नहीं है तो उस के सन्तान भी पूरे २ बढ़े हुए उत्पन्न न होंगे। किसी स्त्री को २० वर्ष की अवस्था से पूर्व विवाह न करना चाहिये और न बालक उस के पैदा होने चाहियें, २१ साल वा २२ साल में गर्भवती होना अच्छा है शरीरिक बढ़ती के विचार से बाल-विवाह निन्दनीय है। यह एक ऐसा रिवाज है कि सदाचार के निमित्त और कई एक और २ बातों में निकृष्ट है॥

स्वास्थ्य।

प्रत्येक माता को जननेन्द्रिय यन्त्र के अवयव के विषय में ज्ञान होना चाहिये और यह भी जानना अवश्यक है कैसे इन की सावधानी करें। उस को उचित है कि अपनी बेटियों को पुरुष और स्त्री के सहवास में जहां तक वह समझ सकें बतावे, उन को बता देने से उन की रक्षा होगी और स्वास्थ्य भी भली रहेगी। बहुधा बालक इन बातों से अज्ञान रहते हैं और इन का ज्ञान उन को दुराचारी साथी द्वारा प्राप्त होता है और उन से वे बुरे अभ्यास सीख लेते हैं॥

कन्या की नाभी के नीचे के अङ्ग बार २ स्नान द्वारा साफ़ और स्वच्छ रखने चाहियें कन्या कितनी छोटी क्यों न हो, नहीं तो वे मैले हो जावेंगे और दुर्गन्धि आने लगेगी और इस से खुजली आने लगेगी और बालक मलने लगेगा और मलते २ हस्त-मैथुन करना सीख जायगा॥

बालक को नंगा फिरने देना एक अति नीच रिवाज है और जिस देश के लोगों में ये बातें प्रचलित हैं उन के सदाचार कभी उत्तम नहीं हो सकते, जापान में कई वर्ष बीते यह नियम निकला कि बालकों को ऐसे वस्त्र न पहिनावें कि उन के नाभी के नीचे के अवयव दिखाई दें॥

लड़का और लड़की दोनों को एक ही पलंग पर न सोने देना चाहिये, बालक होने पर भी संग सोने से दुष्ट आदतें सीख लेंगे॥

छुटपन ही से बालकों को निचले अङ्गों को मलने वा छूने न देना चाहिये क्योंकि इस के कारण हस्त-मैथुन सीख लेते हैं॥

जब कन्या युवा होती है और रज-स्राव शुरू हुआ तो माता को बताना चाहिये कि इस समय सर्दी शीघ्र लग जाती है और इस कारण उसे अपनी स्वास्थ्य की रक्षा करनी चाहिये। इस अवस्था में कन्या से अधिक परिश्रम न कराना चाहिये और ६ बजे वा १० बजे से अधिक रात को न जगना चाहिये॥

रज-स्राव के समय स्वच्छ श्वेत कपड़ा वा रूई पतले कपड़े में लपेट के रखना चाहिये कि रज-स्राव को सोख ले। मैले चिथड़े वा मोटे भूरे काग़ज़ इस के लिये उपयोग करना स्वास्थ्य को बिगाड़ना है, इस से जलन पैदा होती है और प्राय: भीतरी अवयव रोगी भी हो जाते हैं॥

रज-स्राव के दिनों में बार २ स्नान करना उचित है, यदि गर्म पानी का उपयोग करो और शरीर को शीघ्र तौलिया से पोंछ डालो तो सर्दी लगने का डर जाता रहेगा। प्रत्येक स्त्री को रज-स्राव के समय अपने शरीर को स्वच्छ रखना चाहिये॥



अध्याय १६।

नशेवाली वस्तुओं का उपयोग।

कुछ वर्ष बीते कि कई फ्रांसीसी देश भक्त महाशयों ने यह बात देखी कि उन के देश के लोगों की संख्या बढ़ने की अपेक्षा घटती जाती थी। उन्हों ने निर्णय किया कि इन का कारण ढूंड निकालें कि क्यों फ्रांस में प्रति वर्ष अधिक मरते हैं और थोड़े पैदा होते हैं। जब उन्हों ने प्रयत्न पूर्वक ढूंढा तो कई कारण निकले पर उन में से सब से बड़ा और मुख्य कारण शराब पीना था। जो रिपोर्ट इन लोगों ने दी उस में और २ बातें भी थी, पर उन में से एक यह थी :—

"अंगूर की मदिरा पान करने से मनुष्य का स्वाभाविक प्रेम खो जाता है और वह अपना कर्तव्य कर्म बेटा और पति और पिता का भूल जाता है कि बेटा को क्या उचित है, पति को क्या उचित है पिता को क्या उचित है। वह अपने काम को उत्तमता पूर्वक नहीं कर सकता इस लिये चोरी और डाका मारने लगता है और स्वाभाविक दुराचारी बन जाता है। केवल यही नहीं होता है पर अंगूर की मदिरा पान से कई भीषण रोग हो जाते हैं जैसे लकुवा का मारना, आमाशय का फूलना, कलेजा, गुर्दे का फूलना, तपेदिक़, निमोनिया और पागलपन, रक्ताशय के स्नायु के रोग मदिरा पीने से होते हैं। न केवल मदिरा पान द्वारा ये रोग होते हैं पर डाक्टर लोगों का इस बात पर एक मत है कि जब ये रोग उसे लगते हैं जो नाम मात्र भी नहीं पीते हैं तो उस के चंगा होने की आशा है परन्तु शराबी को जब ये लगते हैं तो उस के बचने की अति ही थोड़ी आशा है॥"

जो ऊपर लिख चुके हैं उस से यह विदित है कि अंगूर की मदिरा शरीर को केवल हानि ही नहीं पहुंचाती है पर कुछ लाभ नहीं पहुंचाती। ग्लेडस्टन ने, जो इङ्गलिस्तान का प्रधान मंत्री था, कहा है "कि तीन बड़ी बलाएं: युद्ध, अकाल, मरी-यह मिला कर इतनी नाशक नहीं हैं जितना कि अंगूर की मदिरा का पान भयंकर नाशक है॥"

भिन्न २ प्रकार के नशे।

स्वाभाविक रचना से मदिरा उत्पन्न नहीं होती है। यह सड़ा कर बनाई जाती है। वह गेहूं, मक्का, ज्वार, चांवल और महुआ, अंगूर और खजूर आदि के रस से बनाई जाती है। खमीर जो इस के सड़ाने में उपयोग लगता है, अनाज और फलों के श्वेतसार और शक्कर को सुरासार (अलकोहाल) बना देता है इस प्रकार की मदिरा, चाहे दारू, जिन, बीयर, बेरन्डी, विस्की और ताड़ी इन सब में सुरासार है। १०० औंस में किसी किसी में ५ औंस और किसी २ में १० औंस है और किसी २ में १०० औंस में ५० औंस वा ७० औंस सुरासार है॥

सुरासार विषम विष है, बहुत सा निर्मल सुरासार एक मनुष्य को एक दम मारने के लिये थोड़ा सा पर्याप्त है, यदि एक शराबी से कहा जाय कि वह विष पीता है वह बिश्वास न करेगा, परन्तु कई प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध है कि यह सच है। यदि एक कीड़ा वा मछली पानी में डाली जाय जिस में १/१०० औंस अलकोहाल है तो वह तुरन्त मर जायगी। यदि अण्डे की सफ़ेदी अलकोहाल में डालो तो वह तुरन्त सिमट जाती है और कड़ी हो जाती है जैसे कि गर्म लोहे पर वा उबलते पानी पर होती है। फिर जब हम यह स्मरण करते हैं कि आमाशय, हृदय, कलेजा, गुरदे और स्नायु उसी पदार्थ से बने हैं जिस से अण्डे की सफ़ेदी तो विदित होगा कि उन पर भी वही प्रभाव होगा॥

मदिरा भोजन नहीं है।

क्या सुरासार भोजन है? इस के उत्तर में उचित है कि भोजन शब्द की परिभाषा हो। भोजन ऐसा पदार्थ है कि जब शरीर में जाता है तो उसे हानि नहीं पहुंचाता है, परन्तु गर्मी उत्तेजना, और बढ़ने और ठीक करने के लिये पदार्थ देता है। मदिरा भोजन नहीं है क्योंकि यह महास्रोत में प्रवेश हो कर पचता तो नहीं और न कुछ परिवर्तन होता है पर रक्त में मद रूप ही प्रवेश करता है। यह भी विदित है कि जिस किसी भाग में शरीर के यह प्रवेश करता है उसे सिकोड़ देता है और शरीर को बल भी नहीं देता अतएव जब आमाशय आरोग्य है, और साधारण भोजन खाया जाता है, तो आमाशय उसे ग्रहण करता है, पर जब पहिले पहल मदिरा पान किया जाता है, तो आमाशय बहुधा उलटी द्वारा उसे निकाल देता है। आमाशय मदिरा को शत्रु जानता है और उसे जितनी शीघ्रता पूर्वक मोक्ष मिले उसी

का यत्न करता है। भोजन द्वारा शरीर बढ़ता और उन्नति करता है परन्तु मदिरा बढ़ना रोकता है और बिलकुल बढ़ना इस से बन्द हो जाता है। बालक जो मदिरा पीते हैं उन के शरीर पूर्ण प्रकार से नहीं बढ़ते हैं॥

मदिरा स्नायुओं को बल नहीं देता है।

कुश्ती लड़ने वाले और वे लोग जो बल और सहन में बाज़ी जीतने का यत्न करते हैं वे बिलकुल मदिरा पान नहीं करते हैं। डाक्टर लोग संसार में प्रत्येक भाग में यह बताते हैं कि मदिरा द्वारा स्नायु निर्बल हो जाते हैं। इस कारण से बहुत लोग यह सोचते हैं कि मदिरा पान करने से बल बढ़ता है क्योंकि मदिरा पीने के पश्चात् मस्तिष्क सुन हो जाता है और वे अपने बल का धोखा खाते हैं। यह बहुत बेर प्रमाण हो चुका कि वे सिपाही जिन्हों ने भोर को मद्यपान किया उतनी दूर कूच न कर सके जितनी दूर वे सिपाही चल सके जिन्हों ने कुछ न पिया था॥

मदिरा का प्रभाव मस्तिष्क पर।

वह मनुष्य जो मदिरा पीता है सोचता है कि उस से उस को विचार करने में सहायता मिलती है। मुख्य बात तो यह है कि थोड़ी मदिरा पीने के १० मिनट वा १५ मिनट मस्तिष्क में विचार पूर्वक आने लगते हैं और काम में फंसा मालूम होता है, पर विचार और शब्द मिले जुले और मुर्खता के से होते हैं। क्योंकि वह मनुष्य जो साधारण आचारण में भला है और शब्द और कार्य्य में बुद्धिमान है, मदिरा खूब पी कर दूसरा ही आचारण और चरित्र प्रगट करता है। वह जो कम वार्त्तालाप करने वाला है, अब बक २ करने वाला बन जाता है। और बोलने का ढंग खो कर ऐसी दुराचारी बातें और कार्य्य करता है, जो कि बुद्धि और सभ्यता के बाहिर हैं, कुछ समय पश्चात् वह जिस ने खूब मदिरा पी है अपने सिर में भारीपन ज्ञान करने लगता है, तब चुप हो जाता है और लेट जाने और सोने का इच्छुक है, यह इस कारण से है कि मदिरा मस्तिष्क को सुन कर देती है॥

एक डाक्टर ने मदिरा का प्रभाव मस्तिष्क पर जो होता है उस की परिक्षा की, १२ दिन लों उस ने प्रति दिन ३ औंस मदिरा पी, १२ दिन उस की मस्तिष्क शक्ति पहले से बहुत ही कम थी, पूर्व वह ४० खानों तक की संख्याओं को १ मिनट में जोड़ता था, अब १२ दिनों लों ३ औंस

मदिरा पीने के पश्चात् वह केवल २४ खाने तक की संख्या को १ मिनट में जोड़ सका, एक पद जिसे वह मदिरा पीने के पूर्व २ मिनट में कण्ठ कर लेता था, अब १२ दिन मद पान करने से ६ मिनट में कण्ठ कर सका। एक और प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि मदिरा मस्तिष्क को नाश करती है, कि यह पागलपन का साधारण कारण है॥

मनुष्य को विवेक ज्ञान दिया गया है जिस से वह भले और बुरे में अन्तर कर सकता है। मदिरा पीने से वह विवेक ज्ञान नाश हो जाता है। प्रायः सब बुरे कर्म जो मनुष्य करता है, और जिन से बन्दीगृह में बन्द होते हैं जैसे लड़ाई दंगा, खून, व्यभिचार इत्यादि ये कर्म मदिरा पीने के प्रभाव से किये जाते हैं, फ़ौजदारी कचहरी के सूचीपत्रों से यह विदित होता है कि वे जिन को भारी दण्ड दिये जाते हैं उन लोगों ने ये अत्याचार शराब के नशे में किये थे॥

मदिरा पीने से रोग होते हैं।

एक मनुष्य जो प्रति दिन थोड़ा २ मद पान करता है यह सोचता है कि उसे तो अधिक हानि नहीं हो रही है, परन्तु यदि वह अपने भीतर कलेजा, गुरदे, फेफड़े, आमाशय, और रक्त स्नायुओं को देख सकता तो यह देखता कि यह अवयव धीरे २ बिगड़ रहे हैं। स्वाभाविक प्रकार से शरीर में उन रोग-कृमि को जो उस में प्रवेश करें नाश करने की शक्ति है। मदिरा इस नाश करनेवाली शक्ति को बिगाड़ देता है, और उस के अवयव बिगड़ जाते हैं इस लिये शराबी को निमोनिया, शीत, तपेदिक़, क्षय ब्राईट डीज़ीज़, हैज़ा, महा मारी और आमाशय, गुर्दे और मुंह पर मुख्य कर नेत्रों के पपोटे सूज जाते हैं और मूत्र में चवा आना संग्रहणी शीघ्र लग जाती है। वरन् मदिरा पान करने से कोई न कोई रोग बड़ी सुगमता से उत्पन्न हो जाते हैं और जब वह रोगी होता है तो उस के बचने की कम आशा है उस की अपेक्षा जो संयमी है॥

मदिरा पान की हानि केवल जो पीता है उस को ही नहीं वरन् उस की सन्तान को भी होती है। ऐसे अस्पताल जहां निर्बल मस्तिष्क वाले बालकों का पोषण होता है यह देखा गया है कि १०० में से ४१ बच्चे ऐसे हैं जिन के माता पिता शराबी थे॥

मदिरा पान से अल्प जीवन होता है।

बीमा वाली कम्पनियों ने सब देशों में यह पाया है कि वे लोग जो शराबी हैं उतनी अवस्था लों नहीं पहुंचते जितनी कि वे जो उस का उपयोग नहीं करते हैं। ये बीमा वाली कम्पनियां कहती हैं कि शराबियों में संयमी की अपेक्षा दूनी बीमारियां होती हैं और शराबी संयमी की अपेक्षा अधिक मरते हैं। जैसे यदि एक सभा १००० शराबियों की है और दूसरी १००० संयमी की तो जब शराबियों में ३ मृत्यु होती हैं तो संयमी में २ मृत्यु होती हैं यह पूरा सच्चा प्रमाण है जो संसार की सब बड़ी बीमा वाली कम्पनियां बताती हैं। इस से यह बात विदित है कि शराबी अपने जीवन में से ४ वर्ष से ले के १० वर्ष तक कम कर डालता है॥

क्या मदिरा उपयोगी औषधि है?

कुछ समय बीता कि डाक्टर लोग रोगी को इस विचार से मदिरा पिलाते थे कि रोग को लाभदायक होगी, परन्तु वर्त्तमान काल के डाक्टर अति ही थोड़ी मदिरा का औषधि की रीति पर उपयोग करते हैं। अब यह विदित हो गया है कि मदिरा रोग को लाभ तो नहीं करती परन्तु उस के उपरान्त रोग को और बढ़ा देती है। सच मुच में मदिरा केवल कोई २ रोगों में ऊपर से मलने में ही लाभकारी है समाचार पत्रों में विस्तार पूर्वक सूचना वा इश्तिहार कोई नई प्रकार की मदिरा का दिया जाता है कि वह पाचन क्रिया को सहायक है और शरीर को उत्तेजना देती है। ऐसी सूचना वा इश्तिहार बिलकुल झूटे हैं, रोगी को यह नियमानुसार चलना उचित है कि सब नशे की वस्तु से दूर रहे॥

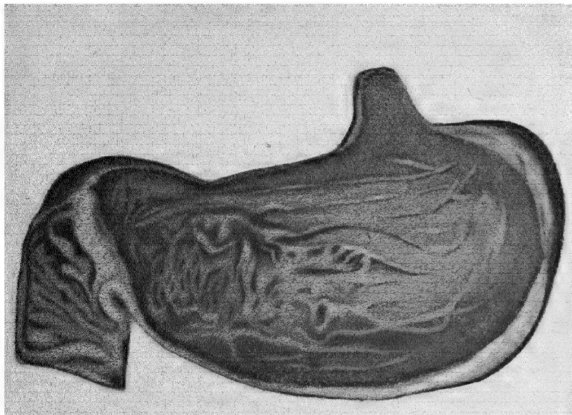
मदिरा पान कैसे छूट सकता है।

मुख्य बात तो यह है कि प्रथम दृढ़ विचार बांधना चाहिये कि इस दुष्ट अभ्यास पर विजयी हूं। यदि मनुष्य स्वर्ग के ईश्वर की सहायता ढूंढना चाहता है, तो वह उसे इस दुष्ट अभ्यास को छोड़ने में सहायता देगा और मदिरा पीने की चाह को पराजित करेगा॥

यह बात भी प्रगट है कि कोई २ प्रकार के भोजनों से भी मदिरा पीने की इच्छा होती है। इस लिये वह मनुष्य जो मदिरा त्यागने चाहता है सदा मांस और मसालेवाले आहार न खावे। मदिरा त्यागने के लिये यह भी आवश्यक है कि तम्बाकू का कण भर भी उपयोग न किया जाय। क्योंकि

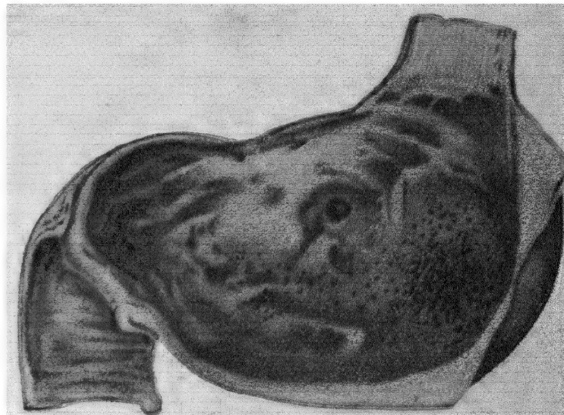
प्रायः प्रत्येक देश में यह देखा गया है कि तम्बाकू पीने से मदिरा पीने की भी इच्छा पैदा हुई है। खूब अधिकता से ताज़े फल खाओ, खूब अधिक निर्मल जल पान करो। चाय वा काफ़ी न पीओ। प्रति दिन गर्म पानी से स्नान करो, गर्म पानी से निकल कर तुरन्त सम्पूर्ण शरीर पर ठण्डा पानी डालो और शीघ्रता से शरीर पोंछ डालो। खुली वायु में जितना हो सके रहो। व्यायाम प्रति दिन करो कि खूब पसीना निकले। घर में कुछ भी मदिरा न रखो और न कलवार की दुकान पर जाओ। यदि कोई मनुष्य सच मुच मदिरा पीना छोड़ने चाहता है, उक्त लिखित बातों का ध्यान पूर्वक पालन करने से मदिरा पान का अभ्यास छुट जायगा॥





इस चित्र में स्वस्थ आमाशय की भीतरी दशा दिखाई गई है। झिल्ली की तहें हैं, गढ़े भी पड़े हैं और स्वस्थ रंग है ॥

यही स्वस्थ आमाशय मदिरा पीने से बिगड़ कर रोगी हो जाता है जो साथ के चित्र से विदित है॥



इस चित्र में अजीर्ण और कोष्ट वद्ध जो मदिरा द्वारा होता है, धब्बों से विदित होता है। दूसरे चित्र पर ध्यान देने और समता करने से इस की रोगी दशा स्पष्ट रूप से विदित होती है ॥

पृष्ट नं. ८६ पर इस का वर्णन देखिये ।

अध्याय १७।

तम्बाकू का उपयोग।

संसार में बहुत प्रकार के वृक्ष होते हैं। उन में से कुछ मनुष्य के भोजन के उपयोग में आते हैं। कुछ पशुओं के उपयोग में आते हैं। कोई २ मनुष्यों के वस्त्र और बर्तन बनाने के उपयोग में आते हैं। पर कुछ ऐसे भी हैं जिन का कुछ मुख्य उपयोग नहीं है केवल यह कि उन के उपयोग से हानिकारक कृमि और पशु विष के समान नाश हो जाते हैं। इस पिछले प्रकार के वृक्ष में तम्बाकू का पेड़ है, न तो बिल्ली, कुत्ता, घोड़ा, गाय न और कोई पशु को फुसला सकते हैं कि इस का धुआं सूंघें। जीवधारी में केवल मनुष्य ही इस अद्भुत अभ्यास में प्रवृत्त हैं॥

तम्बाकू एक ऐसा पदार्थ नहीं है कि स्वस्थ्य दशा में रहने के लिये शरीर को आवश्यक हो, क्योंकि यह माना जाता है कि वह लोग जो इस का उपयोग नहीं करते भली स्वस्थ्य दशा में हैं। जब पश्चिम के देशों में पहिले पहल तम्बाकू उपयोग की गई, तो देश अध्यक्षों ने इस को हानिकारक विष माना, और इस के उपयोग को वर्जने के लिये नियम प्रचार किये, ठीक जैसे कि चीन देश में अफ़ीम पीने को वर्जित करने के लिये नियम है। तथैव वर्तमान काल में अध्यक्ष इस का उपयोग करते हैं इस लिये इस नियम पर ज़ोर नहीं दिया जाता है अथवा उस नियमानुसार कोई नहीं चलता है॥

तम्बाकू एक विष है।

प्रत्येक १०० औंस तम्बाकू की सूखी पत्तियों में २ औंस विषम विष 'निकोटीन' का होता है। संखिया से भी अधिक मृत्यु दायक विष निकोटीन का होता है। यह इतना तीक्ष्ण है कि यदि एक बून्द एक खरगोश की त्वचा पर डालो तो वह तुरन्त मर जायगा, और इस के दो बून्द कुत्ते या बिल्ली की जीभ पर डालने से तत्काल मृत्यु होगी, मनुष्य भी तम्बाकू निगलने द्वारा मर गये हैं। चीन देश में आत्महत्या करने की साधारण रीति यह है कि हुक्के का पानी पी लते हैं जिस में निकोटीन है॥

बहुधा जब कोई पहिली बार तम्बाकू पीता है तो उसे उलटी होती है इन प्रमाणों से सिद्ध है कि तम्बाकू एक नाशक विष है ॥

तम्बाकू किसी भी प्रकार से उपयोग करो वह शरीर को विष देती है कुछ लोगों का विचार है कि सिगरेट व बीड़ी, चुरुट और पाइप की अपेक्षा कम हानिकारक हैं और कोई २ लोगों का यह विचार है कि हुक्का पीने से और भी कम हानि शरीर को पहुंचती है। पर तम्बाकू किसी भी प्रकार से उपयोग की जाय, अति हानिकारक है। जितनी अधिक तम्बाकू पीओगे उतनी ही अधिक हानि शरीर को होगी। कोई २ तम्बाकू चबा के खाते हैं और कोई इसे नाक में लगा कर सूंघते भी हैं, अर्थात् (नास लेते हैं) पर यह भी उतना ही हानिकारक है जितना पीना। बहुत करके वह लोग जो सिगरेट व हुक्का पीते हैं और उस का धुआं लेते हैं, अर्थात् वे इस के धुएं को श्वास द्वारा फेफड़ों में लेते हैं और नाक द्वारा बाहर निकाल देते हैं, जब इस प्रकार से किया जाता है तो पीने की अपेक्षा अधिक विष रक्त में प्रवेश करता है ॥

लोग तम्बाकू क्यों पीते हैं।

तम्बाकू भी अफ़ीम व कोकेन के समान ऐसा विष है कि जिस के उपयोग का अभ्यास लोगों को पड़ जाता है। पहिले पहल जब यह पीते हैं तो बहुधा तम्बाकू पीने वाला रोगी हो जाता हैं, दुसरी बार पीने से इतना बुरा नहीं लगता है, और फिर कई बार पीने से इस का प्रसन्नता दायक प्रभाव मालूम पड़ता है। और जितना अधिक इस का उपयोग करते हैं उतना ही इस को छोड़ना कठिन लगता है। तम्बाकू स्नायु और मस्तिष्क को सुन्न कर देता है। जब मनुष्य थका हुआ है और खेदित है तो वह तम्बाकू पी कर तुरन्त विश्राम पाता है और उसे भला लगने लगता है। मुख्य बात तो यह है कि निश्चय वह भला तो न हुआ परन्तु उस के पीने से मस्तिष्क और स्नायु सुन्न पड़ गये और इस कारण मालूम नहीं पड़ता, और अब उसे थकान, पीड़ा, खेद और असन्तुष्टता ज्ञात नहीं होते, पीड़ा और खेद तो जैसे के तैसे हैं पर ज्ञात नहीं होते हैं ॥

क्यों सम्पूर्ण तम्बाकू पीने वाले शीघ्र नहीं मरते?

यदि ऐसा न होता कि तम्बाकू पीते समय कुछ विष जल न जाता, तो तम्बाकू पीने वाले अति शीघ्र मर जाते। परन्तु सम्पूर्ण विष तो जल नहीं जाता है, अधिकांश भाग (१०० में ३० से १५ भाग लों) उस में रह जाता है और रुधिर में एक तत्व हो जाता है, धीरे २ शरीर को इस



तम्बाकू की शोचनीय दासता।

विष का अभ्यास हो जाता है ठीक जैसे कि उसे किसी हानिकारक पदार्थ का अभ्यास पड़ जाता है। उदाहरण के लिये:—रेशम के कारखाने में से जो लोग रेशम के धागे को खोलते हैं उन की उंगलियां गर्म पानी की इतनी अभ्यासी हो जाती हैं कि वह उबलते पानी में हाथ डाल सकते हैं। यद्यपि शरीर को कुछ हानिकारक वस्तु का अभ्यास हो जाय, तो इस से यह प्रमाण नहीं होता कि शरीर को कुछ हानि हुई ही नहीं है॥

तम्बाकू पीने से मदिरा पीने की इच्छा उत्पन्न होती है।

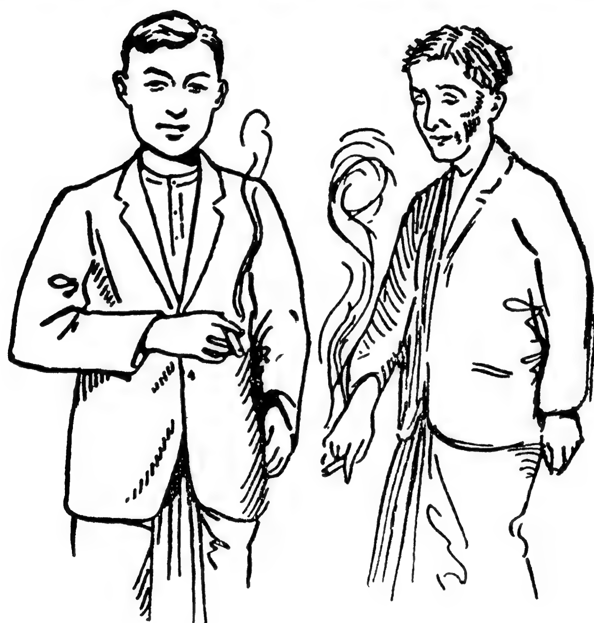
प्रत्येक तम्बाकू पीने वाले की नाक और गला भीतर से सूजे होते हैं इस कारण से उसे खांसी अधिक आती है, नाक की परत को जोखिम होती है, इस कारण से घ्राणेन्द्रिय की शक्ति इतनी तीक्ष्ण नहीं रहती है। जीभ तम्बाकू के धुंए से झुलस जाती है, और साधारण भोजन भी स्वाद रहित हो जाता है; यही कारण है कि तम्बाकू पीने वाले लोग अपने भोजन में तीखा मसाला पसन्द करते हैं। तम्बाकू के धुएं से मुंह और गला सूखा रहता है, उस से ऐसी तीक्ष्ण प्यास लगती है जो जल से संतुष्ट नहीं हो सकती, इस तीक्ष्ण तृष्णा को केवल एक ही वस्तु संतुष्ट करती है अर्थात् किसी प्रकार की मदिरा संतुष्ट करती है यही कारण है कि अति थोड़े तम्बाकू पीने वाले ऐसे होंगे जो मदिरा का उपयोग नहीं करते हैं॥

तम्बाकू का मारा हृदय।

तम्बाकू का सब से अधिक प्रभाव हृदय पर पड़ता है, एक रोग है जिसे 'तम्बाकू मारा हृदय' कहते हैं, और जितने लोग अधिक तम्बाकू पीते हैं उन्हें यह रोग होता है। इस रोग में रक्ताशय थोड़ी देर लों शीघ्रता पूर्वक धड़कता है, फिर एक वा दो धड़कन पर ठहर जाता है तब अति धीरे २ धड़कता है, जब यह रोग रक्ताशय में हो जाता है तो मनुष्य हांफने लगता है, तम्बाकू पीने वालों का दम शीघ्र फूलता है, यही कारण है, कि व्यायाम करनेवाले लोग और वे जो अपने स्नायुओं को बलवन्त करने का यत्न करते हैं, कभी तम्बाकू का उपयोग नहीं करते हैं, प्रायः प्रत्येक युवक का जो सिगरेट पीता है, उस का तम्बाकू मारा हृदय होता है। थोड़े वर्ष बीते, ४१२ युवकों ने सामुद्रिक सेना शिक्षालय में भरती होने को निवेदन पत्र भेजा, जब अमेरिकन अध्यक्षों ने उन की परीक्षा की तो उन में से २१८ नाकारे ठहराये गये, क्योंकि तम्बाकू पीने से उन के हृदय और शरीर की मुख्य इन्द्रियां सदा के लिये बिगड़ गई थीं॥

तम्बाकू शरीर को यथायोग्य बढ़ने नहीं देता है।

शरीर का बढ़ना भोजन पर अवलम्बित है, परन्तु भोजन को आमाशय में खूब भली भांति पाचन होना आवश्यक है तब वह शरीर के बढ़ने का सार-पदार्थ हो सकता है। हम तीसरे अध्याय में पढ़ चुके हैं कि भोजन की इस प्रकार की पाचन क्रिया महास्रोत नली (एलीमेण्टरी केनाल) में होती है। तम्बाकू महास्रोत को जोखिमदायक है, और यूं वह भोजन पाचन क्रिया भली भांति नहीं कर सकती है। फलतः शरीर को पूरा २ सार



तम्बाकू पीने के परिणाम।

पदार्थ बढ़ने के लिये नहीं मिलता है। केवल यही नहीं होता पर तम्बाकू शरीर के बढ़ने वाले अङ्गों को सुन्न कर देती है। और यूं बढ़ने में बाधा डालने वाली है। यह प्रभाव कुछ ऐसा ही है, जैसा एक बढ़ते पौधे की जड़ के निकट बर्फ़ के टुकड़े रख दिये जांय, इस से जड़ों को शीत लगेगी और पौधा बढ़ना रुक जायगा, परन्तु यदि हिम के अधिक टुकड़े न डाले जांय तो पौधा जीवित तो रहेगा परन्तु वह बौना रहेगा॥

तम्बाकू अल्प जीवन करता है।

अमेरिका की एक बड़ी बीमा कम्पनी जिस ने साठ वर्ष के समय में एक लाख अस्सी हज़ार मनुष्यों को ग्राहक बनाया, और उन्हों ने यह ज्ञात किया कि उन सब लोगों में तम्बाकू पीने वालों की आयु उन लोगों की अपेक्षा जो तम्बाकू नहीं पीते कम होती थी, उदाहरण के लिये यह बताते हैं कि जब तम्बाकू पीने वाले ४० वर्ष की अवस्था में ५ मरते थे तो तम्बाकू न पीने वालों में से उसी आयु के केवल ४ ही मरते थे॥

डाक्टर बताते हैं कि बहुत से चीर फाड़ के कार्य्य में तम्बाकू पीने वालों की मृत्यु हो जाती है जब कि वैसी ही चीर फाड़ के कार्य्य में तम्बाकू न पीने वाले शीघ्रता से स्वास्थ्य प्राप्त करते हैं। कुछ वर्ष बीते कि अमेरिका के संयुक्त प्रदेशों के सभा अध्यक्ष के गोली लगी और वह थोड़ी देर में ही परलोक सिधारे। जिन डाक्टरों ने उन की चिकित्सा की वे यह कहते हैं कि यदि यह सभा अध्यक्ष इतनी तम्बाकू का उपयोग न करता होता तो वह अवश्य आरोग्य हो जाता॥

तम्बाकू से अन्धापन आ जाता है, इस से जीभ, होंठ और गले में नासूर हो जाता है॥

तम्बाकू का प्रभाव मानसिक शक्तियों पर।

वह मनुष्य जो थकित है तम्बाकू पीने के पश्चात् अपनी थकावट भूल जाता है। वह जो शोकित है तम्बाकू पी कर अपने दुःख को भूल जाता है, यह बता चुके हैं कि यह इस कारण से है कि तम्बाकू मस्तिष्क और स्नायु को सुन्न कर देती है, यही कारण है कि लड़के लड़कियां जो तम्बाकू का उपयोग करते हैं पढ़ने लिखने में आलसी होते हैं, पाठ-शालाओं, विश्वविद्यालयों में जहां तम्बाकू पीने वाले और न पीने वाले लड़के लड़कियां एक ही कक्षा में पढ़ते हैं वहां यह पाया जाता है कि तम्बाकू पीने वालों के नम्बर, न पीनेवालों के नम्बरों से २० प्रति सैकड़ा कम होते हैं। अमेरिका के एक बड़े नगर में दस बड़े २ पाठशालाओं में से जांच की गई। प्रत्येक पाठशाला में से २० लड़के ऐसे चुने गये थे जो तम्बाकू का उपयोग करते थे और २० लड़के ऐसे चुने गये जो तम्बाकू का उपयोग नहीं करते थे और इस जांच का यह फल हुआ, उन २० लड़कों में से जो तम्बाकू पीते थे प्रत्येक १४ लड़कों को चेतना यन्त्र का कोई न कोई रोग था, जब कि तम्बाकू न पीने वाले २० लड़कों में से केवल एक ही को यह रोग था।

तम्बाकू पीने वाले प्रत्येक २० लड़कों में से १८ मूर्ख और भद्दे थे, जब कि हर २० लड़कों में से जो तम्बाकू न पीते थे केवल एक ही मूर्ख और भद्दा था ॥

अधिक बुरी बात तो यह है कि तम्बाकू पीने से लड़का झूठा, चोर दुराचारी होता जाता है और जो लड़का तम्बाकू पीता है, उस को सिगरेट प्राप्त करने के लिये बहुधा झूठ बोलना वा चोरी करनी पड़ती है ॥

तम्बाकू पीने का अभ्यास कैसे छूट सकता है।

वे लोग जो तम्बाकू नहीं पीते उन्हें कभी पीना भी न चाहिये, यह देख कर कि तम्बाकू से कितनी अधिक हानि होती है। जो लोग दीर्घायु और उपयोगी और सुखदाई जीवन के इच्छुक हैं और तम्बाकू पीते हैं वे तम्बाकू पीना छोड़ दें। तम्बाकू पीना छोड़ने का अति उत्तम उपाय यह नहीं कि धीरे २ उस को कम करें वरन् यह कि एक दम छोड़दें। इसको करने के लिये दृढ़ मानसिक शक्ति और दृढ़ विचार की आवश्यकता है। वे उपाय जो इस पुस्तक में मदिरा त्यागने के लिये बताये गये हैं वही तम्बाकू पीने की इच्छा को रोकने के लिये लाभदायक होंगे। दूसरा उत्तम उपाय यह है कि प्रति दिन खूब अधिक पसीना निकाला जाय क्योंकि इस से शरीर में से तम्बाकू का विष निकल जाता है ॥



अध्याय १८।

इश्तिहारी औषधियां।

समाचार पत्रों में जो इश्तिहार देखे जाते हैं उन में औषधियों के सब से अधिक इश्तिहार होते हैं। नई और अद्भुत "औषधियों" के इश्तिहार प्रति दिन निकलते हैं, इश्तिहारी औषधि बेचने वाले इस बात का पूर्ण २ लाभ प्राप्त करते हैं जो उन को ज्ञात है, अर्थात् यह कि सर्व साधारण लोग रोगी पड़ते हैं तो उन का विचार यह होता है कि स्वस्थ्य दशा में होने के लिये केवल २ वा ३ गोली खा लेना अथवा दो चार बार औषधि पी लेना ही ठीक है। कई सौ वर्ष बीते कि डाक्टर लोग भी ठीक २ रीति से रोग को न समझते थे और न उस का कारण जानते थे। उन का विचार था कि रोग किसी गुप्त दुष्टात्मा के प्रभाव से होते हैं। इस कारण कि वे रोग के कारण को न जानते थे इस लिये उस की उपचार चिकित्सा की रीति भी नहीं समझते थे। उन दिनों में डाक्टर बनने के लिये यह आवश्यक नहीं था कि मनुष्य कालेज में जा कर वर्षों मानुषी अंग और फ़ीज़ीओलोजी इत्यादि सीखा करे। बस इतना ही उचित था कि अपने पिता वा दादा से दो चार गुप्त औषधियों का बनाना सीख लेवे। रोगी लोगों का यह विश्वास था कि उन का रोग किसी गुप्त कारण से हुआ है सो जितनी गुप्त और गूढ़ औषधि उतनी ही लाभदायक भी होगी, इस प्रकार के भूत काल के विचार थे, और शोक की बात है ऐसे विचार अब भी एशिया के अधिकांश निवासियों के हैं॥

यह मूर्खता की बात है की रोगी ऐसी औषधि मोल ले लेवे जिस के मिश्रित भागों के विषय में वह अज्ञात है। और उसे अपने शरीर में ग्रहण करे जबकि वह अपने शरीर की रचना और उस के कार्य्यों के विषय में बिलकुल अज्ञान हो। जब किसी प्रकार के घोर रोग से ग्रसित हो तो औषधालय अवश्य जाओ क्योंकि वहां चतुर डाक्टर है जिस ने शरीर और उस के रोगों के विषय में विशेष शिक्षा प्राप्त की है। वह सम्मति देगा कि रोग से चंगा होने के लिये क्या करना उचित है। अंग्रेज़ी में एक कहावत है कि जब कभी कोइ रोग ग्रस्त हो के अपनी आप ही औषधि करना चाहे मूर्ख

रोगी और मूर्ख डाक्टर भी बनता है। यह कहावत उन के विषय में विशेष कर के सत्य है जो पेटेन्ट औषधियों का उपयोग करते हैं॥

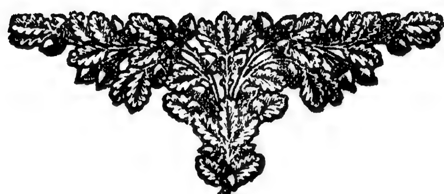
वे लोग जो इश्तिहारी औषधियां बनाते हैं भली भांति जानते हैं कि किसी न किसी समय कमर और सिर में पीड़ा होती है अथवा खांसी आती है, सो वे प्रत्येक रूप से लोगों को भयभीत करते हैं, और उन्हें विश्वास दिलाते हैं कि यदि उन को इस २ प्रकार के लक्षण होते हैं तो उन को कोई कठिन रोग हो गया है। लोगों को इस प्रकार भयभीत कर के वे उन को फिर यह बताते हैं कि उन के पास एक ऐसी गूढ़ औषधि है जिस से वह रोग सम्पूर्ण नष्ट हो जायगा॥

बहुत करके इश्तिहारी औषधियां अति सस्ती वस्तुओं से बनी हुई होती हैं। औषधि बनानेवाला कदाचित् ४ आने की मदिरा मोल लेता है और उस में जल मिश्रत कर फिर उस में कुछ रंग और सुगन्धि डाल देता है, बोतल समेत इस औषधि का मूल्य आठ आना भी नहीं होता परन्तु वह ६ रुपये बोतल के भाव से बेची जाती है॥

समाचार पत्रों के झूठे वर्णनों से जो कि इश्तिहारों में छपते हैं लोग धोखा खाते हैं वे किसी औषधि की एक बोतल मोल लेते हैं। बहुत सी बड़ी इश्तिहारी औषधियां मदिरा, अफ़ीम का सत वा कोकेन के मिश्रण से बनी हुई हैं। यह बात सिद्ध हो चुकी है कि जब कोई इन औषधियों में से एक को पीना आरम्भ करता है तो अभ्यास शीघ्र पड़ जाता है सो जितना अधिक वह उपयोग करता है उतना ही अधिक वह और उस का इच्छुक होता है। पेटेन्ट औषधि बेचने वाला और कच्चा डाक्टर इस बात को भली भांति जानते हैं। वे जानते हैं कि जब रोगी ने एक बोतल मोल ली है तो दूसरी भी अवश्य लेगा, सो फन्दे में फांसने के लिये वे पहली बोतल सेत मेत, मुफ़्त दे देते हैं, सो झूठी सूचनाओं द्वारा जो समाचार पत्रों में छपती हैं धोखा मत खाओ। और उन लोगों के सर्टिफिकेट पढ़ कर जो इन विज्ञापन औषधि द्वारा चंगे हुए हैं पूर्ण विश्वास न करो, जो बताते हैं कि वे चंगे हो गये हैं॥

कोई २ कहेंगे कि निस्सन्देह वे समाचार पत्र के विज्ञापन की औषधि द्वारा चंगे हुए हैं। तो यदि यह कुछ भी औषधि न लेता तो कुछ समय के पश्चात् चंगा हो जाता। यूरोप और अमेरिका में जो जांच और परीक्षा कुछ वर्ष बीते हुई थी, उस से यह सिद्ध हुआ कि बहुत से लोग और बालक पेटेन्ट

औषधि के विष द्वारा काल-ग्रास हुए। वे लोग जो पेटेन्ट औषधि का उपयोग करते हैं उस मनुष्य के समान हैं जो अंधेरे में औषधालय में जाकर ताक़ में से पहली बोतल जो पाता है उठाता है और उसे पीने लगता है। प्रत्येक ऐसे मनुष्य को अति मूर्ख कहेंगे क्योंकि वह जोखिम का काम करता है, तो भी प्रत्येक विज्ञापन की प्रत्येक पेटेन्ट औषधि उपयोग करने वाला बार २ जोखिम का काम करता है॥



अध्याय ११।

स्वास्थ्य दायक शक्ति का सोता।

भारत वर्ष में आज १० लाख रोगी हैं, इन १० लाख रोगियों में से प्रत्येक आरोग्य होने का इच्छुक है, तो रोगियों का निरोग होने का प्रश्न अत्यन्त ही मुख्य है ॥

रोगों को चंगा करनेके पूर्व रोग के कारण को दूर करना चाहिये।

पहिले अध्याय में कहा गया है कि बहुत से रोग कृमि के शरीर में प्रवेश करने द्वारा होते हैं। परन्तु कोई कारण क्यों न हो ८ वा ९ प्रत्येक १० रोगों में से ऐसे हैं कि जिन से बच सकते हैं। क्योंकि यह स्वास्थ्य के नियमों को तोड़ने के कारण से होते हैं। इस कारण बीमारी में प्रथम कार्य्य जो करना उचित है यह है कि इन कारणों को दूर करें॥

स्वभाविक चेतनाएं।

यदि हाथ में एक कांटा चुभ जाय और पक जाय और हाथ सूज जाय, लाल पड़ जाय और पीड़ित हो तो कोई भी इस बात का विश्वास न करेगा कि कांटा निकालने के पूर्व हाथ अच्छा हो जायगा। तो भी एक मनुष्य जिस के आमाशय में पीड़ा है और जिस को खट्टी डकारें आती हैं, अर्थात् खट्टा रस मुंह में आता है, और जिस का कारण यह होता है कि उस ने अपना भोजन शीघ्र बिना अच्छी रीति से चबाये खाया था, ऐसा रोगी यह विचार करता है, कि दो वा तीन बार औषधिपान करने से उस की आमाशय की पीड़ा भली हो जायगी उसे यह समझ लेना चाहिये कि बिना आमाशय की पीड़ा का कारण हटाये उस का स्वस्थ्य होना ऐसा असम्भव है जैसे कि उस के हाथ की सूजन और पीड़ा का मिट जाना असम्भव है बिना कांटे को निकाले। यदि कांटा पहिले निकाल लिया जाय हाथ आप ही से शीघ्र अच्छा हो जायगा, और किसी औषधि की आवश्यकता न होगी वैसे ही जिस को आमाशय की पीड़ा हो, यदि वह चांवल को अच्छी रीति से गला कर पकावे फिर धीरे २ एक २ कौर को भली भांति चबा कर खावे तो उस का आमाशय स्वयं अच्छा हो जायगा और उसे एक बार भी औषधि पीने की आवश्यकता न होगी॥

जो आदि नियम हम ने हाथ की पीड़ा के विषय में बताया वही सब रोगों में लागू है। प्रथम रोग के कारण को दूर करो तब शेष स्वास्थ्य का कार्य्य रक्त स्वयं ही करने लगेगा, प्रत्येक दशा में जब कभी सूजन, ज्वर और पीड़ा होती है तो मानो यह ऐसा है कि शरीर तुम को यह कहने का यत्न करता है कि कुछ गड़बड़ हो गई है और तुम को उचित है कि उस का कारण खोज कर उस को शरीर से निकालदो। जब कभी किसी को ज्वर आवे तो ज्वर भला है और उपयोगी है क्योंकि ज्वर के द्वारा शरीर उस विषैले पदार्थ को जिस से ज्वर पैदा होता है, जला डालने का यत्न करता है। कभी २ जब सड़ा हुआ वा सख्त भोजन खाने से आमाशय में पीड़ा वा दस्त आने लगते है। तो यह पीड़ा वा दस्त बड़ी सुगमता से अफ़ीम और अफ़ीम के सत को एक बार पीने से अच्छा हो जा सकता है। पर यह करना मूर्खता है, क्योंकि आंतें तुम को इस कारण से पीड़ा देती हैं कि तुम को ज्ञान होजाय कि आंतों में कुछ गड़बड़ है और तुम को यह उचित है कि शान्त होकर लेटे रहो और कुछ न खाओ। दस्त आना आंतों का यह प्रयत्न करना है कि जो अपथ्य भोजन उन में पहुंचा है उसे निकाल बाहर करे। अफ़ीम खाने से (समाचार पत्रों में जितनी औषधि दस्त बन्द करने वा पीड़ा शान्त करने की विज्ञापनों द्वारा छपती हैं उन सब में अफ़ीम होती है) तन्तुएं सुन्न हो जाते हैं इस कारण पीड़ा फिर ज्ञात नहीं होती है। और जब तन्तुएं सुन्न हो जाते हैं तो दस्त भी बन्द हो जाते है तद् पश्चात् तुम अपने सर्व साधारण काम में फंस जाते हो और जो मन में आता है खा लेते हो। परन्तु इस सम्पूर्ण समय आंतों को अधिक हानि हो जाती है, और विष रक्त में उस अपथ्य भोजन से जो आंतों में है प्रवेश करते रहते हैं। और ज्यूंही तुम अफ़ीम वाली औषधि खाना बन्द कर दोगे, तो तुम को फिर ज्ञात होगा कि तुम्हारा रोग इस समय इतना असाध्य हो गया है कि अब तुम को अवश्य पलंग पर पड़े रहना होगा और सप्ताहों लों रोग की चिकित्सा करनी पड़ेगी। और बहुत सी दशाओं में रोग इतना असाध्य हो जाता है कि मृत्यु होती है॥

सृष्टि शक्ति ही से स्वास्थ्य शक्ति है।

शरीर की स्वभाविक प्रकृति है कि स्वयम् चंगा कर लेवे, कभी २ अकस्मात् हमारे हाथ का चमड़ा कट वा छिल जाता है, यदि घाव गहरा न हो और यदि उस में रोग क्रमि ने प्रवेश न किया हो तो अल्प समय में

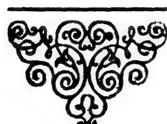
घाव भर जायगा यदि कोई औषधि भी उपयोग न की जाय। यदि बाजू की हड्डी टूट जाय और यदि बाजू को इस प्रकार से सीधा रखें कि टूटी हड्डी के दोनों छोर पूर्णतः एक दूसरे से संगम हों और पट्टी बांध दी जाय तो प्रायः तीन सप्ताह में टूटी हुई हड्डी बिलकुल जुड़ जायगी। टूटी हड्डी स्वयं बिना कुछ औषधि पिये वा मले अच्छी हो जाती है। क्या इस से यह सिद्धान्त सिद्ध नहीं है कि हमारे शरीर में चंगा होने की शक्ति उपस्थित है। सातवें अध्याय में यह वर्णन किया गया था कि रक्त द्वारा चंगा होते और मरम्मत होते हैं। रक्त ही द्वारा प्राण वायु और पचा हुआ भोजन शरीर के प्रत्येक भाग में पहुंचाया जाता है और इसी पचे भोजन और प्राण-वायु से टूटे फूटे अंगों को ठीक करने का पदार्थ प्राप्त होता है। शरीर का जीवन मूल रक्त ही है। ये जीवन जो रक्त में होता है उस बड़े जीवन दाता परमेश्वर की ओर से आता है। क्योंकि उसी ने सकल सृष्टि को रचा और सब को जीवन और श्वास दिया है॥

दाऊद ने जो कि एक महान राजा था यह कहा है कि "हे मेरे मन यहोवा को धन्य कह और उस के किसी उपकार को न बिसारना, वही है जो तेरे सारे अधर्म को क्षमा करता है और तेरे सब रोगों को चंगा करता है"। प्रथम विचार करने में यह अति ही अद्भुत लगता है कि ईश्वर जो सकल वस्तुओं का सृजनहार है और जिस के आधीन सकल पदार्थ हैं वही हमारे रोगों को चंगा करता है, तो भी यह यथोचित बात है कि वह यह करे क्योंकि वह ही महान कारीगर है जिस ने हमारे इन शरीरों को सृजा और वह ही हमारे शरीर की प्रत्येक आवश्यकता को सम्पूर्ण रीति से जानता है। उसी को यह भी ज्ञात है कि हमारे शरीर का जब कोई भाग बिगड़ जाय तो कैसे ठीक हो सकता है। यदि तुम पूछो कि ईश्वर ऐसा क्यूं करता है तो यह उत्तर है कि वह इस रीति से हमारी रक्षा इस लिये करता है कि अपने प्रेम को हम पर प्रगट करे॥

शारीरिक रोगों को चंगा करने से ईश्वर चाहता है कि हम अपने मन के रोगों की स्वास्थ्य के लिये उसी पर अवलम्बित होवें, अर्थात उस की यह इच्छा है कि हम उसी पर आधार रक्खें कि हमारे पापों को क्षमा करे। संसार भर में कोई मनुष्य ऐसा नहीं है जिस के शरीर में कोई रोग वा पीड़ा न हुई हो और न कोई मनुष्य पवित्र है। हम प्रति दिन वरन् प्रत्येक घण्टे ईश्वर पर अपने जीवन और स्वास्थ्य के लिये आधार करते हैं और

इसी प्रकार से हम अपने आत्मिक जीवन और स्वास्थ्य के लिये उसी पर आधार करते हैं ॥

जब प्रभु ईशु संसार में मनुष्यों के मध्य में थे एक बार उन के पास एक अर्धाङ्गी को लाये, उस रोगी में विश्वास था, यह देख प्रभु ने उस से कहा। "हे मनुष्य तेरे पाप क्षमा हुए" प्रभु ने यह प्रमाण देने के कारण कि प्रभु में पाप क्षमा करने की शक्ति है। उन्हों ने उस अर्द्धाङ्गी से कहा "उठ अपनी खाट उठा ले और अपने घर चला जा"। ज्यूंही यह वचन कहे गये थे तुरन्त ही अर्द्धाङ्गी मनुष्य चंगा और स्वस्थ्य हो गया वह अपने पैरों पर खड़ा हो कर चल दिया, यह इस से सिद्ध होता है कि ईश्वर हमारी निर्बलताओं को जानता है चाहे ये निर्बलताएं शारीरिक हों चाहे आत्मिक हों ॥



अध्याय २०।

चिकित्साएं जिन का सेवन लाभदायक है।

पिछले पर्व में जो २ बातें सिद्ध हुई हैं उन पर ध्यान पूर्वक विचार करने से यह दृश्य होता है कि मनुष्य में अपने को चंगा करने की शक्ति नहीं है। यद्यपि यह सच है तिस पर भी बहुत कुछ वह कर सकता है जिस से चंगा होने की विधि को या तो सहायता मिलेगी वा बाधा होगी और इस पुस्तक का मुख्य आशय यह है कि बहुत सी ऐसी विधियां बतावें जिस से चंगा करने की विधि को लाभ पहुंचे॥

स्वाभाविक चिकित्साएं।

इस अध्याय में वे चिकित्साएं बताई जायेंगी जो कि अत्यन्त ही उपयोगी हैं और सच पूछो तो प्रायः प्रत्येक रोग में उन का उपचार लाभकारी होता है। वे स्वाभाविक चिकित्साएं कहलाती हैं क्योंकि उन में विषैली औषधें मिश्रित नहीं है, परन्तु वे वस्तुएं जिन से शरीर को स्वाभाविक रीति से बल और स्वास्थ्य प्राप्त होता है। कोई २ तो उन में से अति साधारण हैं और अति सस्ती भी हैं, परन्तु अति लाभ दायक है॥

सूर्य्य की ज्योति।

सूर्य्य की ज्योति का स्वास्थ्य के साथ जो गूढ़ सम्बन्ध है इस प्रकार से प्रगट होता है कि जब पौधे और पशु सूर्य्य की ज्योति से गुप्त रहते हैं तो उन की कैसी दशा हो जाती है। यदि एक पौधे को सूर्य्य ज्योति के प्रकाश वाले स्थान से उठा कर अंधेरे स्थान पर रख दो तो वह शीघ्र पीला और रोगी हो जायगा। पशु भी अन्धेरे स्थान में रहने से निर्बल और रोगी हो जाते हैं॥

सूर्य्य की ज्योति द्वारा हमारे शरीर बलिष्ठ होते हैं। जैसे पौधे सूर्य्य ज्योति से हृष्ट पुष्ट होते हैं। सूर्य्य की ज्योति अल्प समय में रोग कृमि को नाश कर देती है। शरीर के वे भाग जहां पर सूर्य्य की ज्योति खूब लगती है, और खुले रहते हैं उन में त्वचा के रोग फोड़ा फुंसी इत्यादि कम होते हैं। अस्पतालों में यह बात बार २ सिद्ध हुई है कि वे रोगी जो बरामदे में

और ऐसे कमरे में हैं जिसका सामना सूर्य्य ज्योति की ओर है उन की अपेक्षा जो कम ज्योति वाले कमरों में हैं शीघ्र चंगे हो जाते हैं। तपेदिक़ के रोग में सूर्य्य की ज्योति मुख्य और अति ही उपयोगी चिकित्सा बताई जाती है जिस की ऐसे रोगी को अत्यन्त ही आवश्यकता है। चाहे किसी प्रकार का रोग हो, रोगी को पूर्ण प्रकाशित कमरे में रहना अवश्य है और भी भली बात यह होगी कि एक जा फ़र्शदार झाड़ में बिलकुल बाहर रहे वा बाहर किसी छाया में रहे। सूर्य्य संसार में ज्योति, गर्मी और उत्साह का मूल है। यह जीवन दायक है। यह करना उचित है कि घर का प्रत्येक कमरा प्रकाशित होवे। वे लोग जो कम प्रकाशित स्थानों में वास करते हैं बहुधा रोग ग्रस्त हो जाते हैं॥

निर्मल वायु।

यदि किसी को वायु मिलना बन्द हो जाय तो वह केवल कुछ क्षण में मृत्यु भक्ष्य होगा। अग्नि को यदि वायु न मिले तो वह नहीं जलेगी, हमारे शरीर में यथायोग्य गर्मी और उत्साह स्वास्थ्य दशा में होने के लिये नहीं हो सकेगा यदि हम निर्मल वायु में श्वास न लें। निरोग की अपेक्षा रोगी को निर्मल वायु की अधिक आवश्यकता है। इस पुस्तक के ६ पर्व्व में लगातार निर्मल वायु के संचार के विषय में ज़ोर दिया गया है॥

पानी।

संसार में पानी एक अति साधारण वस्तु है, और यह सब से सस्ती भी है, न कोई पौधा न कोई पशु जल बिना जी सकता है। हमारे शरीर के वज़न में दो तिहाई भाग पानी का है॥

यदि प्रति दिन किसी मनुष्य को यथोचित पानी भोजन और पीने को न मिले, तो उस की शक्ति शीघ्र ही कम हो जायगी, ८ और ९ अध्याय में यह बताया गया है कि अधिक पानी पीना अच्छा और अवश्य है क्योंकि यह त्वचा और गुर्दों की सहायता करता है कि शरीर से विष निकाले जो लगातार शरीर के प्रत्येक भाग में उत्पन्न होते जाते हैं। पानी पीने से शरीर भीतर से स्वच्छ होता है, ठीक जैसे स्नान द्वारा शरीर ऊपर से स्वच्छ होता है॥

जल प्रायः प्रत्येक रोग में जो मनुष्य को होता है एक उपयोगी चिकित्सा है। इस के पूर्व कि कोई औषधि बनी थी जल औषधि की रीति पर उपयोग किया जाता था, और यह चिकित्सा और किसी जानकार औषधि

की अपेक्षा अधिक उपयोगी और लाभदायक थी। एक पूर्ण मनुष्य को ढाई सेर से साढ़े तीन सेर लों पानी प्रति दिन पीना चाहिये, हमेशा पानी पीने के पूर्व उबाला जावे। पीने का पानी अति ठण्डा होवे, बर्फ़ का पानी मत पीओ, सब रोगियों को बहुत पानी पीना चाहिये। और वे रोगी जिन को ज्वर आता हो, उन्हें उचित है कि अधिक ठण्डा पानी पीवें, जब आमाशय में पीड़ा हो और खट्टा रस थूक में निकलता हो, तो गर्म पानी पीने से पीड़ा जाती रहेगी। प्रत्येक नन्हे बच्चे को थोड़ा सा गर्म पानी (जो उबला हुआ हो) दिन में कई बेर दो। कभी २ नन्हा बच्चा रोता है तो वह पानी के लिये रोता है खाने के लिये नहीं रोता॥

पानी को रोगों से चंगा होने के लिये कैसे उपयोग करें।

रक्त ही है जो चंगा करता है। यह अध्याय ७ और १२ में सिद्ध हो चुका है। रक्त शरीर को गर्म रखता है, रोग कृमि को नाश करता है बिगड़े वा चोट लगे भागों को स्वस्थ्य करता है। इस दशा पर शरीर के किसी रोगी भाग को चंगा करने का आशय यह है कि शरीर के उस भाग में रुधिर-भिसरण का काम ठीक रीति से होवे। गर्म अथवा ठण्डे पानी से शरीर के किसी भी भाग में रुधराभिसरण का कार्य्य यथोचित हो सकता है। शरीर के किसी भी अंग में ठण्डे व गर्म पानी से सेकने से रक्त में अति गति आ जायगी। गर्म सेकन जो दो मिनिट लों होना अवश्य है, उस भाग में जहां कि सेवन किया जाता है, वहां की नसों को ढीला कर देता है ज्योंही वे ढीले पड़ें शरीर के अन्य भागों से रक्त दौरान करने लगता है और इन नसों को रक्त से पूर्ण कर देता है। यदि अब ठण्डे पानी का सेकन १० से २० सेकण्ड लों करो तो यह ढीली नसें संकुचित हो जाती हैं और ज्यूंही संकुचित हुई रक्त शरीर के दूसरे भागों की नसों में दौरान करने लगता है इस प्रकार के गर्म और ठण्डे सेकन के सेवन करने से संकुचित और ढीली होने की विधि होती है और इस द्वारा रोगी भाग में रक्त संचार यथायोग्य होता है॥

सेकना।

सेकना, पानी की चिकित्सा, जो रोगो में की जाती है एक अति उपयोगी सेवन है। सेकन के लिये उत्तम कपड़ा मोटी फ़लालेन के टुकड़े हैं। एक इकहरे फ़लालेन के कम्बल से दो जोड़ी सेकने के टुकड़े निकल सकते हैं। फ़लालेन के स्थान पर कोई ऊनी वस्त्र का उपयोग हो सकता है। सेकन

के कपड़े सब दशाओं में उपयोग होने के लिये तीन फ़िट लम्बे और प्राय: उतने ही चौड़े होवें॥

सेकने के लिये आधी बालटी उबलते पानी की आवश्यकता है। एक टीन की बालटी या लोहे की चादर की बालटी इस के लिये ठीक होगी। क्योंकि आग पर रख के या कोयले की अग्गीठी वा स्टोव पर इस को इच्छानुसार गर्म कर सकते हैं। उत्तम लाभदायक परिणाम के लिये ३ सेकने के कपड़े लो परन्तु यदि ३ न हों तो २ ही बस हैं। एक कपड़े को ले कर मेज़ वा पलंग पर फैलाओ। और दूसरे कपड़ों में से एक को लो और तीन लपेटन में तह करो इस तह किये हुए कपड़े के दोनों छोर पकड़ो और उबलते पानी में डुबा दो। जब यह गर्म पानी में खूब भीग जाय तो उसे खूब निचोड़ो, यह ऐसे करो कि दोनों छोरों को उलटी ओर से शीघ्रता पूर्वक मोड़ो और बालटी के ऊपर खींचो, तब दोनों छोरों को फिर मोड़ो और पूर्व की नाईं खींचो इस प्रकार से कपड़े का पानी निकल आयगा और तुम्हारे हाथ भी न जलेंगे। इस कपड़े को तह किये हुए कपड़े में लपेट कर रोगी अवयव पर सेवन करो। पहिली बार लगाने के लिये दुहरा लपेटन फ़लालेन का गर्म गीले कपड़े और त्वचा के मध्य में होनी चाहिये फिर जब इस से सेकन सेवन का अभ्यास हो जाता है तब एकहरी ही ठीक होगी, सावधानी करो कि त्वचा न जल जाय जितना अधिक पानी कपड़े में होगा उतना ही अधिक गर्म लगेगा॥

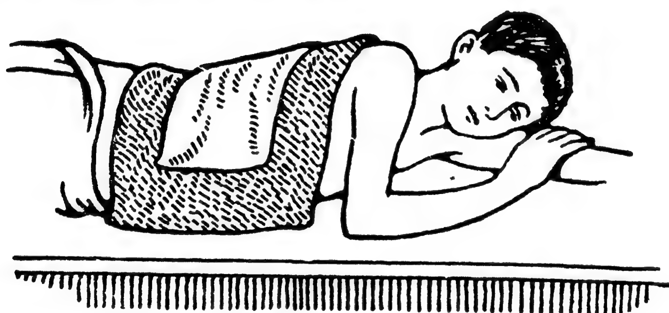


उचित रीति सेकने के कपड़े को निचोड़ने की यह है।

रीढ़ वा मेरुदण्ड में सेकन सेवन के लिये सेकन का कपड़ा प्राय: ६ वा ८ इंच चौड़ा और इतना लम्बा हो कि पूरी रीढ़ लों पहुंच सके। छाती

आमाशय, कलेजा वा आंतों के लिये छोटा व चौड़ा लपेटो। यदि सेंकन अधिक गर्म हो तो एक सेकण्ड के लिये उसे उठाओ इतनी देर लों कि तौलिया से शरीर की सतह को पोछो और तब सेकन सेवन तुरन्त अच्छी रीति से करो। सेकन को तब लो रहने दो जब लों अच्छा लगता है। तब उसे फिर करो, सूखे कपड़े की तह को खोलो और उसे रोगी स्थान पर रहने दो पर गीली फ़लालेन फिर गर्म पानी में डाल कर पहिले के समान निचोड़ो और फिर वैसे ही सेवन करो॥

साधारण रीति से प्रत्येक ३ व ५ मिनिट में सेकन का कपड़ा बदलना चाहिये और यह सेकन सेवन १५ मिनिट से २० मिनिट लों होना चाहिये। परन्तु जब पीड़ा मिटाने के लिये सेवन किया जाता है तो आवश्यक होता है कि ३० मिनिट से ले के ६० मिनट लों सेवन किया जाय। पर सब दशाओं में सेकन अति गर्म होना चाहिये।



पीठ की सेकन सेवन।

सेकन ही से प्रायः सब प्रकार की पीड़ा अच्छी हो जायगी और इस के उपयोग में कुछ भय नहीं है। यह मालिश के तेल और मरहमों की अपेक्षा अति गुणकारी है। जब २ सेकन सेवन की जाती है, तो उन का प्रभाव इस रीति से और भी तीक्ष्ण हो सकता है कि हर सेकन के पश्चात् कुछ थोड़ी सी ठंडक पहुंचाई जाय, विधि यह है। किसी पतले कपड़े जैसे रूमाल वा तौलिया की दो तह कर के उसे ठण्डे पानी में भिगो कर निचोड़ो तब उसे सेके हुए अवयव पर लगाओ, इस को लगा कर शीघ्र २ उठा लो और प्रत्येक बार अंग को सुखा लो, फिर तुरन्त ही सेकन लगाना उचित है॥

प्रत्येक बार सेकन के पश्चात् अवयव पर कुछ सेकण्ड के लिये ठण्डक अवश्य पहुंचाओ तब तौलिया से पोंछ कर सुखा लो॥

उन अध्यायों में जहां भिन्न २ रोगों की चिकित्सा का वर्णन किया है, उन रोगों का भी वर्णन होगा जिन में सेकन, गर्म पानी में पैर डालना, गर्म पानी में बैठना और पिचकारी लेने से लाभ होता है॥

पैर गर्म पानी में डालना।

पैर गर्म पानी में डालने के लिये एक बड़ी लकड़ी की बालटी, टब, चिलमची उपयोग हो सकती है, पैर गर्म पानी में रखने के समय पानी टखनों से कुछ ऊपर होना चाहिये और १०५ डिग्री की गर्मी प्रारम्भ में आवश्यक है। पैर में गर्मी शीघ्र ज्ञात होती है। पानी में पैर डालते ही बालटी में इतना और गर्म पानी थोड़ा २ कर के डालना चाहिये कि उष्णता इतनी बढ़े कि पैर सहन कर सकें, इस प्रकार गर्म पानी में ५ मिनिट से १० मिनिट लों रहना चाहिये, पैरों को गर्म पानी में रखते समय एक ठण्डे पानी का भीगा कपड़ा निचोड़ कर रोगी के माथे पर रक्खो और इसे समय २ पर बदलो। इस ठण्डे कपड़े से सिर की पीड़ा और सिर का घूमना बन्द रहता है॥



पैरों का गर्म जल में रखना

१५ वा २० मिनट लों यदि पांओं को गर्म पानी में रक्खा जाय तो इस से खूब पसीना आता है। यदि पसीना लाना आवश्यक हो तो रोगी को कम्बल उढ़ा देना चाहिये, और जब लों उस के पैर गर्म पानी में रहें, तो उस को उष्ण जल या नीबू का पानी पिलाना चाहिये। रोगी के सिर को ठण्डा रखो, तब उसे पलंग पर लिटा कर खूब उढ़ा दो और खूब पसीना आने दो॥

गर्म पानी में पैर रखने से सिर की पीड़ा भली भांति जाती रहती है ज्वर के आरम्भ में भी अति लाभदायक है, जननेन्द्रिय के अवयवों की सूजन व पेड़ू की सूजन, ठण्ड और शीत लगना, पैर की पीड़ा खल्लियां पड़ जाने के लिये अति उपयोगी है। और इस से पसीना भली भांति निकलता है॥

यदि एक या दो छोटे चमचे पीसी हुई राई को उष्ण जल में डाल देवें

तो उस जल का प्रभाव तीक्ष्ण हो जायगा। ज्वर में और जब रोगी अति निर्बल हो गर्म जल में पैर रोगी को लिटा कर देना चाहिये॥

जल-बैठक।

इस स्नान के लिये साधारण टब उपयोग हो सकता है। इस स्नान के लिये उष्णता जल की १०४ से ११५ F. डिग्री लों होनी चाहिये। यह इस प्रकार के बैठक की लाभदायक रीति है और साधारण रीति से इस में ५ से १५ मिनिट लगते हैं॥

जब जल बैठक की जावे तो पैरों को पृथक उष्ण जल के एक छोटे टब में रखना चाहिये। रोगी के ऊपर के अंग को कम्बल अथवा किसी और कपड़े से बचा रखना चाहिये और माथे पर ठण्डे पानी का कपड़ा भिगो कर लगा रखना चाहिये॥ गर्भाशय, फलकोष, योनि और मूत्राशय की सूजन से जो पेडू में पीड़ा होती है उस के लिये भी ऐसी जल बैठक अति उपयोगी होती है। रज-स्राव वा उस से प्रथम जो पीड़ा होती है वह भी इसके सेवन से मिट जाती है, जब रज-स्राव में देर होती है, तो उस के लिये भी इस का सेवन प्रति दिन दो वा तीन बेर करना उपकारी है। कूल्हे की पीड़ा भी इस से मिट जाती है॥



उष्ण जल में बैठना

उष्ण-जल-बैठक के पश्चात् जो २ अवयव उष्ण जल मे डूबे रहे थे, उन को ठण्डी गीली तैलिया से मल कर सूखे तौलिया से पोछ कर खूब सुखा लेना चाहिये॥

ठण्डे जल को दस्ताने से रगड़ के मलना।

ठण्डे जल से रगड़ कर मलने के लिये एक बालटी वा बर्तन ठण्डे पानीका आवश्यक है। और रगड़ने का दस्ताने का कपड़ा वा तो मोटी खदड़ी तैलिया का वा अलपाका का बनना चाहिये, इस दस्ताने को हाथ में पहिन कर पानी में डुबोओ और दूसरे हाथ से रोगी का हाथ थांमे रहो, फिर दस्ताने को निचोड़ डालो, फिर शीघ्रता से रोगी के कन्धे से ऊंगली लों हाथ फेरो और फिर वैसे ही करो। तब फिर जोर २ मे जल्दी २ रगड़ना आरम्भ करो जैसा कि रोगी को अनुकूल हो। इस को दो तीन बेर करो,

तब मोटी तौलिया से शीघ्रता पूर्वक मल कर सुखा डालो तब दूसरे हाथ को ऐसा ही करो, फिर छाती, उदर, टांगों को और पीठ को इसी प्रकार से करो, इस को करने में १२ से १५ मिनिट से अधिक न लगने पावे। इस सेवन का प्रभाव ज़ोर से मलने पर अवलम्बित है, पर यदि आंतों में पथरी पड़ी हो वा मोतीझरा ज्वर हो तो उदर को न मलना।

बहुधा ठण्डी मालिश अति लाभकारी होती है जब उष्ण सेकन से सेवन की जाय॥

प्रति दिन में एक दो वा तीन बार गर्म जल से सेकन सेवन कर ठण्डी मालिश रोगियों को नवीन जीवन दायक हो जाती है॥

त्वचा के रोगो में फोड़े फुँसी जब शरीर पर निकलें तब किसी प्रकार का मलना उचित नहीं है॥

वे जो ठण्डे जल का सहन नहीं कर सकते और निर्बल और बूढों के लिये सहन योग्य उष्णता का अर्थात ८० डिग्री की उष्णता का जल उपयोग करना चाहिये और धीरे २ प्रति दिन और ठण्डा करते आओ॥

योनी की पिचकारी

टीन अथवा नालीदार जस्ते से ढका हुआ लोहा जो गोलाई में ५ इंच हो और प्रायः १० वा ११ इंच ऊंचा हो और पेन्दी में एक छोटा छिद्र हो जिस में एक टोंटी लग सकती है लेकर बनाओ इस टोंटी में चार वा अधिक फ़िट की रबर की नली लगाओ और रबर की नली के छोर पर एक कांच की वा रबरकी नली लगाओ॥ (देखो चित्र)


पिचकारी

रोगी को स्नान टब में चित लिटाओ, वा एक (योनी की पिचकारी का बर्तन) कूल्हे के नीचे रक्खो, नली कांच वा रबर की होनी आवश्यक है और इसमें चार पांच छिद्र हों और यह ६ इंच लम्बी हो, इस नली को योनी में घुसा दो और सदा नीचे और पीछे की ओर योनी के नीचे के भाग ओर रखो। जिस में पानी रखते है ३ फ़िट कूल्हे से ऊंचा होना चाहिये॥

साधारण स्वच्छता के काम निमित्त पानी गर्म हो अर्थात् १०० F. डिग्री की उष्णता हो॥

पेडू की पीड़ा को मिटाने के लिये पानी की उष्णता ११० F. से ११५ डिग्री लों होनी आवश्यक है और परिमाण में कम से कम ३, ४ सेर होना चाहिये॥

रज-स्राव को स्थापित करने के लिये कई सेर पानी १०३ F. डिग्री की उष्णता का उपयोग करो। और इस सेवन को दो वा तीन बार दिन में करो॥

ठण्डे और उष्ण जल में बारी २ से डुबकी देना।

हाथ वा पैर के किसी रोग के लिये जैसे खुली चोट वा फोड़ा हो सब से उत्तम चिकित्सा यह है कि उस को बारी २ से उष्ण और ठण्डा सेकन दिया जावे। एक बालटी में खूब उष्ण जल लो वा दूसरी बालटी में शीत जल। रोगी अवयव को हाथ हो या पांव एक क्षण भर के लिये पहिले गर्म जल में डालो और तब निकाल कर एक वा दो सेकण्ड के लिये शीत जल में डालो इसी बिधी से आधे घण्टे लों सेवन करो यह चिकित्सा यदि आधे २ घण्टे लों दिन में तीन बार की जाय तो रोग के घाव वा खुली चोट को चंगा करने में अद्भुत प्रभाव प्रगट करेगा। इस का प्रभाव बढ़ जायगा यदि उष्ण जल के २०० भागों में एक भाग लाइसोल मिला लिया जाय॥

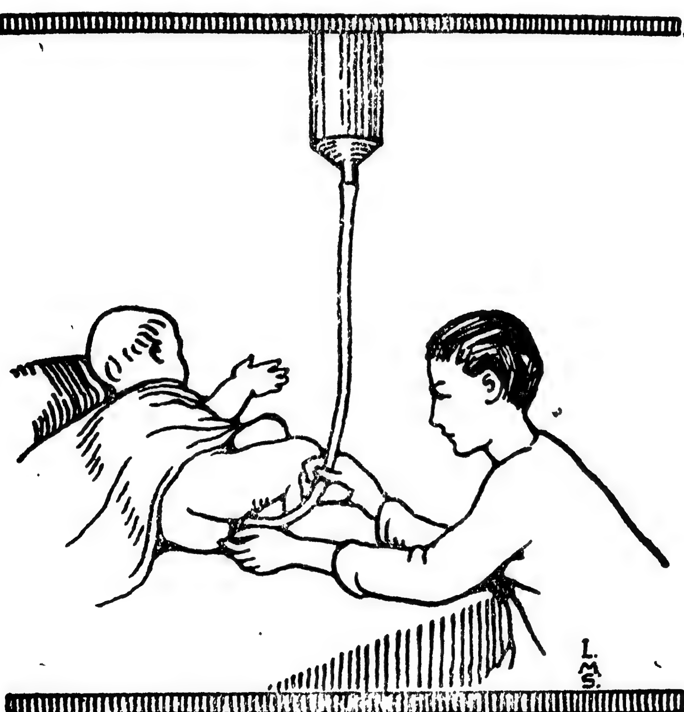
मोच और खरोंच के लिये लाइसोल रहित यही चिकित्सा सेवन से बड़ा लाभ होता है॥

"अनीमा" या पिचकारी।

अनीमा वा पिचकारी कोठा साफ़ करने के लिये उपयोग करते हैं, एक योनी की पिचकारी का बर्तन जैसा कि योनि स्वच्छ करने के विषय में बता चुके हैं और इस के साथ अनीमा का नल होना चाहिये यदि यह कांच की हो तो भला है। छोटे बच्चों के लिये नाली छोटी होनी चाहिये। एनीमा के लिये जो जल का उपयोग किया जावे खूब उबला हुआ हो। सब से उत्तम विधि चित वा करवट पर लेटे रहने की है॥

युवक के लिये साधारण स्वच्छता के निमित्त अनीमा दो वा तीन सेर होना चाहिये जो १०० F. डिग्री उष्णता का हो। जल को एनीमा के बर्तन में डाल दो और तब उस बर्तन को चारपाई से ३ फुट ऊंचा लटका दो। रबर की नली को चुटकी में दबाये रक्खो कि पानी इस से बह न सके कांच की नली के सिरे में थोड़ी सी वैसलीन वा स्वच्छ तेल लगाओ और नली को

गुदा द्वारा आंतों में घुसा दो और इसे ऊपर और पीछे की ओर घुसाओ, नली को दो वा तीन इंच भीतर जाने दो, अब रबर की नली को चुटकी दबा कर पानी का बहना रोके रक्खो जब लों पीड़ा मिट न जाय और जब तक कि सब का सब पानी आंतों के भीतर प्रवेश न करे यदि थोड़ा जल छुट जाय तो चिन्ता न करो। टट्टी करने की इच्छा को रोको जब जल भीतर प्रवेश कर चुके तो हाथों से पेट को मल सकते हो ऐसा करने से जल आंत में ऊंचा चढ़ जाता है और आंत को उत्तमता से स्वच्छ करता है॥



एक बालक को पिचकारी देना।

सदा के अजीर्ण के लिये या जब कई दिन लों प्रति दिन एनीमा लेना पड़े तो ७० से ८० F. डिग्री तक उष्ण जल का सेवन ज़्यादा लाभकारी होता है॥

तेज़ ज्वर में और निमोनिया वा शीत और मोतीझरा के ज्वर में ७० F. डिग्री उष्णता का ऐनीमा कुछ क्षण भीतर रक्खा जावे तो ज्वर उतारने में अति लाभकारी होता है। इस का सेवन प्रति ४ घण्टे में कर सकते हैं

जब ज्वर तेज़ हो जैसे लाल ज्वर में पेनीमा ८० से ९० F. डिग्री उष्ण होना चाहिये। ठण्डा पेनीमा छोटे बच्चों को कभी न सेवन करो॥

जब दस्त का रोग चंगा न हो, खूब गर्म ११० से ११५ F. डिग्री उष्णता का दिया जा सकता है पर मोतीझरा ज्वर में यह न करना चाहिये। इस ज्वर में ९० F. डिग्री उष्णता का पेनीमा टट्टी के पश्चात् वा दिन में कई बेर देना उचित है॥

उष्ण जल की बोतल वा थैली॥

एक रबर की थैली जिस में उष्ण जल भरा हुआ हो गर्मी को बहुत देर लों रोक सकती है इस लिये उस को भीगे फ़लालेन के टुकड़े से लपेट कर सेवन का उपयोग कर सकते है, साधारण रीति पर तर गर्मी सूखी गर्मी की अपेक्षा अधिक लाभदायक होती है, कटि पीड़ा, दांत पीड़ा वा रज-स्राव की पीड़ा वा आमाशय की पीड़ा के लिये उष्ण चल की थैली अति आवश्यक होती है॥

उबलते जल से थैली को तिहाई भाग भर दो, तब थली के ऊपर के भाग को दबा कर उस में से वायु और भाप निकाल दो, तब उस के ढकने को पेंच से कस दो कि जल न गिरे, जब पैर पर लगाओ तो थैली को एक फ़लालेन के टुकड़े से लपेटो। यदि रोगी अचेत हो, तो अति सावधानी करो कि वह कहीं जल न जाय॥

बर्फ़ रहित ठण्डी गद्दी बनाने की रीति।

इस अध्याय में ठण्डी गद्दी लगाने का वर्णन बहुत बार हुआ है। बहुत स्थानों में बर्फ़ तो क्या ठण्डा पानी प्राप्त करना असम्भव होता हैं ऐसे दशा में यूं करना चाहिये, एक पतले कपड़े या तैलिया को पानी में भिगो कर बिना निचोड़े दोनों छोरों से पकड़ कर खुले कपड़े को वायु में हिलाना उचित है, इस रीति से कपड़े को दस या बीस बेर जोर से हिलाने से कपड़ा बिलकुल ठण्डा हो जायगा॥

सूचना: "स्पंजिंग"—एक टुकड़े बादल से वा कपड़े के टुकड़े से वा खाली नंगे हाथ को पानी में भिगो कर शरीर में फेरना स्पंज कहलाता है इस का मुख्य लाभ जल से है अति थोड़े मलने की आवश्यकता है॥

सदा गर्म वा शीत जल जिस में नमक वा सोडा वा सिरका और नमक वा मदिरा का सत व विचहेजल मिश्रित है उपयोग हो सकता

है। ठण्डे दस्ताने से शरीर के भागों को जिस प्रकार से मलना बताया गया है इसी रीति से शरीर के भागों को स्नान करो (पृष्ठ १०६)॥

ज्वर उतारने के लिये ठण्डा जल लो और एक बादल के टुकड़े वा कपड़े के टुकड़े का उपयोग करो इस को इस कारण निचोड़ते हैं कि जल न टपके और अधिक समय लगता है इस को अंग पर ऊपर नीचे फेरते समय कि वह अंग ठण्डा लगने लगे प्रत्येक भाग हल्की रीति से मले बिना सुखाया जाता है। जूड़ी जहां हो तो ऐसे एक ज्वर में उष्ण जल का ठीक जल की रीति पर उपयोग करो। जब हल्के नमकीन जल वा सोडा को वा सिरके और नमक को वा मदिरा के सत को वा बीचहेज़ल को पानी में डाल के उपयोग करना उचित है।

नमकीन "स्पंज"—करने के लिये जल को यूं बनाओ कि ४ औंस साधारण नमक को एक कटोरे वा चिलमची भर जल में जो कुनकुना वा शीत हो घोलो। यह हल्की चिकित्सा है और अशक्त और निर्बल मनुष्यों को देने में लाभदायक है॥

खारी "स्पंज"—के लिये दो औंस सोडियम बाई-कारबोनेट (पकाने का सोडा) को एक चिलमची भर शीत जल में डालो। खुजली और ददोड़ों में लाभदायक होता है और इसे केवल रोगी भाग पर लगाओ॥

सिरके और पानी का मलना—रात के समय जब क्षय रोग में पसीना आता है तो उसे बन्द करने में लाभदायक है। आधा सेर बनाओ उस में समान भाग सिरका और पानी का रक्खो और एक वा दो चम्मच साधारण नमक के डालो। उन भागों में विशेष कर उपयोग करो जिन में अधिक पसीना निकलता है॥

सुरासार का मलना—यह पसीने के निकलने को समाप्त करने में वा रात को शान्त करने के लिये अति उपयोग में आता है गीले हाथ से मलने वा ठण्डे दस्ताने से रगड़ने के स्थान में इस का उपयोग हो सकता है यद्यपि ठण्डे दस्ताने से रगड़ने की अपेक्षा यह कम लाभदायक है समान भाग जल और अन्न की मदिरा का सत उपयोग करो लकड़ी द्वारा बना हुआ सुरा-सार विष है जब त्वचा पर लगाया जाता है, इस लिये इसे कभी उपयोग न करो॥

"विच हेज़ल"—का मलना वैसा ही लाभकारी है जैसे दोनों मदिराओं का एक सा प्रभाव है। इसे निरा मलना चाहिये॥

अध्याय २१।

कृमि द्वारा रोग होता है।

मनुष्य के अति घोर शत्रु रोग कृमि हैं। ये अति ही सूक्ष्म होते हैं। यदि ऐसा समचार मिले कि किसी गांव में एक मांसाहरी शेर है तो उस गांव के निवासी अति भय भीत हो जायंगे, व जिन के पास बन्दूक वा तलवार होगी उस जन्तु को मारने के लिये गांव के बाहर आवेंगे। वरन् वे जिन के पास सामना करने के लिये कोई शस्त्र नहीं है अपने २ घरों को भाग जायेंगे और द्वार मून्द लेंगे। परन्तु प्रत्येक गांव में सहस्त्रों और लाखों मनुष्य के ऐसे शत्रु हैं जो मांसाहारी शेर की अपेक्षा अधिक हानिकारक हैं, शेर केवल दो अथवा तीन मनुष्यों को मार कर भाग जायगा परन्तु ये दूसरे शत्रु तो प्रत्येक गांव में वर्षों वर्ष रहते हैं और १०० में से ९८ वा सेकंड़े पीछे ९८ मृत्यु इन्हीं के द्वारा होती हैं। ये शत्रु जिन की चर्चा हुई है रोग कृमि हैं।

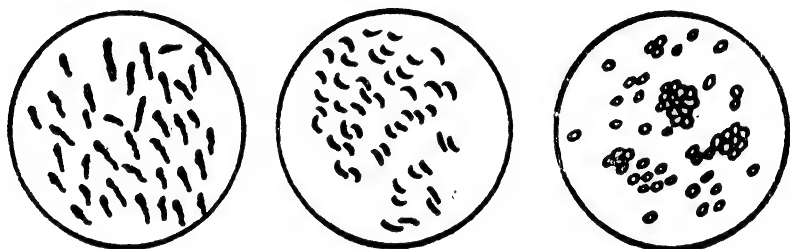


खुर्दबीन का उपयोग

रोग कृमि क्या हैं।

इस पुस्तक के प्रथम अध्याय में रोग कृमि की चर्चा हुई है इन रोग कृमि को माइकरो-ओरगेनिज़म, अदृश्य कृमि भी कहते हैं कि खुर्दबीन के

उपयोग रहित अदृश्य हैं। बहुत से छोटे २ जीव जन्तु और छोटे छोटे पौधे भी हैं जो नेत्र दृश्य हैं, जैसे छोटा सरसों का दाना कितना छोटा है पीपल के वृक्ष से जो तालाब के किनारे लगा है। वह पिस्सू जो ६ फ़िट लम्बे मनुष्य को विक्र करती है उस मनुष्य से कहीं छोटी है। इसी प्रकार से छोटे २ पौधे हैं और छोटे २ जन्तु हैं और वे पीपल के वृक्ष को जो बड़ा है पीड़ा पहुंचाता है जैसे पिस्सू ६ फ़िट लम्बे मनुष्य को पीड़ा करता है। ये रोग कृमि अति छोटे जन्तु और सूक्ष्म पौधे के वर्ग के हैं, इन में से कई इतने सूक्ष्म हैं कि यदि १००० एकत्र करें तो राई के दाने से बड़े न होंगे, इन में से कई रोग कृमि यह हैं जो १००० गुने बड़े किये जाने पर चित्रों में दिखाए गये हैं। इन में कई लम्बाकार है, कई गोलाकार हैं।



रोग कृमि अति बड़े करने पर।

रोग कृमि की अधिक वृद्धि होती है। जब एक बीज बोते हैं तो कई महीने लगते हैं उसे उगने बढ़ने और दूसरे बीज उत्पन्न करने में, परन्तु एक रोग कृमि, यदि उष्ण स्थान में हो, तो ३० मिनिट में विभाग हो के दो पूरे बढ़े रोग कृमि हो जायेंगे और फिर ३० मिनट में वे दो रोग कृमि विभाग कर के चार पूरे बड़े रोग कृमि होंगे और यूं आधे घण्टे में ८ पूरे बड़े रोग कृमि हो जायेंगे। यदि इस प्रकार से उन की वृद्धि होती रहे तो एक कृमि १० घण्टों में १० लाख कृमिओं का घराना उत्पन्न कर लेगा॥

किसी उष्ण और थोड़ी नर्म स्थान में रोग कृमि उत्पन्न करने होंगे। उष्ण, गीला और अंधेरा स्थान इन कृमिओं की वृद्धि के लिये अति अनुकूल है। प्रायः सब पौधे और जीवों को उत्तमता से बढ़ने के लिये सूर्य्य-ज्योति की आवश्यकता है। पर ये रोग कृमि तीक्ष्ण सूर्य्य-ज्योति द्वारा मर जाते हैं, ये रोग कृमि ऐसे स्थान में जहां साग पात वा मांस आदि सड़ा गला हो वृद्धिपूर्वक बढ़ते हैं, साधारण नियम तो यह है कि स्वच्छ और प्रकाशवान स्थान में रोग कृमि अति थोड़े होंगे॥

इस कारण कि ये रोग कृमि अति सूक्ष्म, भार में हलके और अत्यंत शीघ्रता से वृद्धि करते है, इस कारण से चहुं ओर फैले रहते है, कठिनाइ से कोई इस प्रकार का स्थान होगा जहां पर ये उपस्थित न हों, ये हमारे मुंह नाक और त्वचा पर हैं, वे भोजन में जो हम खाते हैं और जल-पान जो हम करते हैं उस में हैं, वह हमारी घरकी भूमि, भीतों और आंगनों की धूलि में, जल के तालाबों में, कुओं में और नदी में और वायु में जिस का उपचार श्वास द्वारा होता है। ये केवल ऊंचे पहाड़ों की वायु में और अति गहरे कुएं में जिन में अपने आप जल निकला करता है नहीं होते हैं। जहां पर मनुष्य संख्या अति घनी है वहां पर ये अत्यंत वृद्धि पूर्वक पाये जाते हैं॥

परन्तु सब कृमि हानिकारक नहीं होते परन्तु अधिक तर हानिकारक होते हैं सो सब से उत्तम उपाय यह है कि सब कृमिओं से बचने का उपाय करो॥

कृमि द्वारा रोग कैसे होते हैं।

कृमि ये रोग जैसे हैज़ा, चेचक, मोती झिरा, लाल ज्वर, तपेदिक़, डिप्थेरिया, ताऊन, महामरी, गर्मी का रोग, फांड़े, प्रमेह इत्यादि उत्पन्न करतु हैं इस प्रकार से कई पौधे हैं जो महुआ के पेड़ और विषली पेवी के वृक्ष (भिलवा का वृक्ष) विष बाहर देते हैं और जो कोई इन वृक्षों के सम्बन्ध में आता है उस को भी यह विष लग जाता है और ज्वर और फोंडे निकल आते है। जैसे भिलावा का वृक्ष विषली है वैसे ही जब ये कृमि शरीर में प्रवेश करते हैं तो भिलावा के समान विष पैदा करते हैं, सो इस विष से ज्वर आने लगता है, सिर पीड़ा होती है, पीड़ा होती है और दस्त आने लगते इत्यादि ये रोग हैं जो हम को पीडित करते हैं॥

रोग कृमि कहां से आते हैं।

ये रोग कृमि जिन से रोग उत्पन्न होता है हमारे शरीर में उत्पन्न नहीं होते वरन् बाहर से प्रवेश करते हैं। वे रोगियों से वा रोगी-जन्तुओं से आते हैं। जैसे एक मनुष्य जिस को हैजे का रोग है, उस के शरीर में हैज़े के रोग के कृमि हैं, जब कभी यह मनुष्य बर्तन या खाने के बर्तन का उपयोग करता है तो कुछ रोग कृमि उस के हाथ और मुंह से बर्तन में आ जाते हैं। सो यदि उस बर्तन को उबलते हुए पानी में धोये बिना जो कोई उस का उपयोग करे तो वह निश्चयपूर्वक कई हैजे के रोग-कृमि

निगल जायगा और ये रोग कृमि उस के महास्रोत में वृद्धि करेंगे और थोड़े काल में इतना विष उत्पन्न करे लेंगे कि उसे ज्वर और दस्त आने लगेंगे और दूसरे चिन्ह हैज़े के भी प्रगट होंगे। दूसरी रीति जिस से हैज़े के रोग कृमि लग सकते है उस के दस्तद्वारा। हैज़े के रोगी के दस्त हैज़े के रोग-कृमि से परि पूरित रहते हैं, यदि वह मल-मूत्र, तालाब, नदी या किसी कुएं के निकट फेंक दी जाय, तो रोग कृमि वहां अति वृद्धि करेंगे। और इस मल मूत्र फेंके हुये स्थान के निकट का पानी जो लोक उपयोग करेंगे तो अवश्य उन के शरीर में कुछ कृमि प्रवेश हो कर तुरन्त उन के अन्ननल में पहुंच कर अल्प काल में उन को भी हैज़े के रोग में ग्रस्त कर देंगे॥

जिन मनुष्यों को तपेदिक़ का रोग है उन के थूक में रोग-कृमि लाखों लाख उपस्थित हैं जब यह मनुष्य किसी भूमि या फ़र्श पर थूकता है तो वह थूक सूख कर मिट्टी में मिल जाता है। यह धूलि वायु में मिल जाती है, और जो लोग इस वायु में श्वास लेते हैं, अपने श्वास में इन तपेदिक़ के रोग कृमि भी लेते हैं। यदि वह मनुष्य जिस के श्वास द्वारा ये रोग कृमि शरीर में प्रविष्ट हुए हृष्ट पुष्ट नहीं है, तो ये रोग कृमि उस में शीघ्र वृद्धि करेंगे और उस के फेफ़ड़ों का तपेदिक़ होगा। इन दो उदाहरणों द्वारा विदित हो जायगा कि रोग-कृमि कहां से आते हैं॥

इस के साथ यह भी बता देना उचित है, कि कई रोग ऐसे हैं जो मनुष्यों को पशु द्वारा लग जाते हैं। जैसे पागल कुत्ते के काटने से हड़क रोग हो जाता है, चूहे से ताऊन और सुअर से टिकैनोसिस अर्थात् सुअर का मांस खाने से एक रोग, और गौ, बकरों और भेड़ के मांस खाने से तपेदिक़ हो जाता है। त्वचा के कई रोग, जैसे दाद, कुत्ते या बिल्ली से लग जाते है॥

कैसे रोग-कृमि शरीर में प्रवेश करते है।

रोग-कृमि के शरीर में प्रवेश करने के तीन द्वारा हैं, मुंह, नाक और त्वचा का चोट खाया हुआ भाग, रोग-कृमि भोजन और पानी द्वारा मुंह से प्रवेश करते है। जब मैले हाथों से भोजन खाते और बालक अपनी उंगलियां मुंह में डालते हैं वा कोई पैसा वा रुपया मुंह में डालते हैं, तो इन से रोग-कृमि प्रवेश करते हैं। रोग-कृमि नाक द्वारा शरीर में यूं प्रवेश

करते हैं कि वे उस धूलि में जो हमारी श्वास लेने वाली वायु है मिले हुए होते हैं ॥

शरीर की त्वचा जब कहीं से कटी नहीं है तो रोग कृमि को भीतर प्रवेश करने नहीं देती, परन्तु यदि कहीं से कट जाय तो जैसे वर्षा ऋतु का जल यदि घर पर से खपरेल उठा लें तो घर में आ जायगा वैसे ही ये प्रवेश करते हैं। यदि कोई अकस्मात् घटना द्वारा छुरी से त्वचा कट जाय वा कुचल जावे वा एक कांटा वा सुई घुस जाय तो छोटा या बड़ा घाव त्वचा पर हो जाता है, और इस कारण कि छुरी और लकड़ी में बहुधा रोग कृमि होते हैं तो यह निकल कर प्रवेश कर लेते हैं। यहां पर इन की वृद्धि होती है और घाव फूल जाता और लाल हो जाता है। एक वा दो दिन में उस में पीप पड़ जाता है। यह इस कारण हुआ कि कटे हुए भाग में रोग कृमि घुस गये ॥

एक और विधि इन रोग-कृमि के त्वच में प्रवेश करने की है। वह मच्छड़, पिस्सू, खटमल जूंए, किलनी, इत्यादि के काटने द्वारा है। जब ये कोई किसी को काटते हैं तो ज़रा सा रक्त चूसते हैं, यदि वह मनुष्य जिसे इन्हों ने काटा मलेरिया, ज्वर और टैकस अर्थात् जो २-३ सप्ताह तक ज्वर रहता है उस से रोगी हों, तो यह कीड़े रक्त चूसते समय इस रोग कृमि को भी ले लेते हैं और पीछे जब वे कीड़े एक आरोग्य मनुष्य को काटेंगे तो कुछ रोग कृमि जो रोगी को काटते समय लाये थे इस निरोग मनुष्य में प्रवेश करेंगे। इस प्रकार से कई हानिकारक वा नाशक रोग दूसरों को लग जाते हैं ॥

हम किस प्रकार से रोग कृमि से अपने को रक्षित रक्खें।

यह जान कर कि रोग कृमि कहां से आते हैं और किन २ दशाओं में ये अति शीघ्र वृद्धि करते और फैलते हैं। और यह कि हमारे शरीर में ये कैसे प्रवेश करते हैं, अब हम इस पर ध्यान देंगे कि उन की हानि से हम किस उपायों द्वारा रक्षित रह सकते हैं ॥

इस कारण कि सकल रोग कृमि रोगियों से निकलते हैं, सो अति आवश्यक यह है कि इन कृमियों को ज्योंही वे शरीर से पृथक हों, नाश कर दें ऐसा करने से ये अन्य, लोगों के उपयोगी बर्तनों वा भोजन और जल पान में प्रवेश न कर सकेंगे। जब कभी किसी को हैज़ा, मोतीझरा, महामरी वा ड़िपथेरिया हो तो ऐसे रोगी को एक एकान्त कोठरी में

रखना चाहिये, इन रोगों में रोगी को यदि कोई एकान्त अस्पताल या रोगों का अस्पताल निकट हो तो लेजाओ वरन् जहां कहीं रोगी हो उसे एक एकान्त कोठरी में अवश्य होना चाहिये और केवल वे जो उस की सेवा करते हैं, कोई और कोठरी में न जाय, जो बर्तन यदि रोगी के उपयोग में आये उसी कोठरी में रखने चाहियें, और प्रत्येक उपयोग पश्चात उबलते पानी में धोने चाहिये, दाई को उचित है कि परिश्रम से प्रत्येक समय अपने हाथ धोवे और अपना भोजन कदापि रोगी के कमरे में न खावे॥

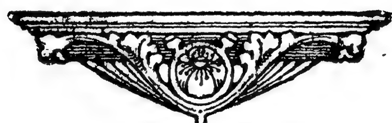
रोगी का मल-मूत्र स्वच्छ करनेवाली औषधि में मिलाये रहित फिकवाना न चाहिये (इस की बिधि के लिये ४७ वां अध्याय देखो) रोगी के थूक और नाक के मल में भी ये रोग-कृमि होते हैं, इस लिये रोगी को उचित है कि काग़ज़ के टुकड़ों में थूके और नाक पोंछे। तब ये काग़ज़ जला देना चाहिये॥

रोग-कृमि को शरीर में प्रवेश करने से रोकने के लिये उचित है कि किसी प्रकार का दूषित भोजन न खावे नद्दानिओं, तालाबों, और बहुत से कुओं का जल भी विषले कृमिओं से पूर्ण होता है, इस कारण ऐसे जल को पीने से पूर्व खूब उबाल लेना उचित है। यदि फल को वृक्ष से स्वयं एकत्र किया हो तो उसे खाने के पूर्व झुलसा लेना और छील लेना चाहिये॥

अपने शरीर की त्वचा को चोट से और काटने से रक्षित रखो, यदि चोट लग जाव तो टिंक्चर आईडीन तुरन्त लगा लो। खटमल और जूंए काटने से रक्षित रहने के लिये पलंग और कपड़ों को बार २ धुलवा कर स्वच्छ रक्खो, जहां कहीं मच्छड़ हों उन के काटने से रक्षित रहने के लिये मच्छड़-दानी का उपयोग करो॥

सम्पूर्ण चेतनाओं के पश्चात् भी अवश्य कभी न कभी शरीर में रोग कृमि प्रवेश कर ही लेंगे। परन्तु हमारे सर्व ज्ञानी पिता की कृपा से यदि ये रोग-कृमि बहुत विषले वा असंख्य न हों तो शरीर स्वयं उन को नाश कर सकता है। इस रोग पर विजय पाने और विषहारे कीड़ों को नाश करने की शक्ति रक्त में रक्खी है। यदि मनुष्य को हितकारी भोजन न मिले वा ऐसी वायु में श्वास ले जो स्वच्छ नहीं है यदि वह इतना परिश्रम करे कि सदैव थकित हो जाय या यदि वह दारू वा तम्बाकू पिया करे। या यदि वह अति स्त्री-प्रसंग करे तो रोग पर विजय न पावे और रोग-कृमि

को नाश करने की शक्ति रक्त में से जाती रहती है। इस कारण रोग-कृमि के प्रभाव से रक्षित रहने के लिये यह अत्यावश्यक है कि हम पौष्टिक भोजन खावें, स्वच्छ वायु में सांस लें, प्रति रात्रि सात या आठ घण्टे सोया करें। तम्बाकू व मदिरा का नाम मात्र भी उपयोग न करें और सदाचार पूर्वक जीवन व्यतीत करें। इस प्रकार से शरीर शक्तिवान और उत्तेजित हो जायगा और यदि कभी कोई रोग-कृमि शरीर में प्रवेश भी कर जाएं तो शरीर का रक्त उन को नाश कर देगा॥



अध्याय २२।

सौ बर्ष तक कैसे जी सकते हैं।

एक प्राचीन ऋषि का कथन है, "मनुष्य मरता नहीं वह अपने को आपही मारता है"। यह कथन बहुतों के विषय में सत्य है। यद्यपि यह सत्य है कि सब जीवधारी कभी न कभी अवश्य मरेंगे तो भी स्वाभाविक जीवन के अन्त लों बहुत कम जीते हैं। उन सभों की आयु जो पश्चिमी देशों में मरते हैं औसत लगा कर यह विदित हुआ है कि उन की औसत आयु ३० और ४० बर्ष की है जब कि एशिया के बहुत से देशों की औसत आयु केवल २५ बर्ष है। रसायन शास्त्र जाननेवाले मनुष्य की औसत आयु १०० बर्ष की बताते हैं। इस से यह प्रत्यक्ष है कि बहुत से लोग अपने जीवन का तिहाई भाग भी नहीं जीते हैं, सो यूं कह सकते हैं कि लोग अपने को आपही मारते हैं। नहीं तो वे १०० बर्ष वा उसे भी अधिक जाते॥

प्रत्येक जाति के ग्रन्थों में ऐसे मनुष्यों का वर्णन है जो बड़ी आयु लों जीवित रहे कोई कोई सौ (१००) बर्ष से अधिक जीवित रहे परन्तु इस समस्त सौ बर्ष व उस से अधिक आयु वालों के विषय में यह बात प्रत्यक्ष है कि उन्हों ने बालकपन ही से अपने स्वास्थ्य की रक्षा की थी॥

मनुष्य आयु की तुलना एक रुपयों की पूंजी से जो बैंक घरमें जमा हो, की जा सकती है। यदि वह मनुष्य जिस ने रुपया जमा किया है कम व्यय करे तो बैंक घर से उसे रुपया नहीं निकालना पड़ेगा, परन्तु यदि वह अधिक व्यय करेगा और थोड़ा रुपया आज निकालता है और थोड़ा कल तो उस का रुपया शीघ्र समाप्त हो जायगा, और वह निर्धन बन जायगा, इसी प्रकारसे हमारा स्वास्थ्य बैंक घर की पूंजी के तुल्य है, यदि उस की रक्षा की जाय तो वह केवल घटेगी ही नहीं वरन् निस्सन्देह बढ़ जायगी। शरीर के कोई से भी भाग की रक्षा न करने से वह बिगड़ जाता है और यह इस के समान है कि बैंक घर से कुछ पूंजी निकाल ली जाय, यदि कुछ स्वास्थ्य आज बिगड़ा है और कुछ कल तो सम्पूर्ण स्वास्थ्य अल्पकाल में नष्ट हो जायगा, तुम रोगी हो जाओगे और रोगी मनुष्य एक निर्धन मनुष्य है॥

युवा-वस्था में प्राय: सब लोग स्वस्थ्य और शरीर में हृष्ट पुष्ट होते हैं, परन्तु जब वे ऐसे कार्य्य जिन से स्वास्थ्य ख़राब हो, करने से रोके जाते हैं तो वे ठठ्ठा करते और कहते हैं "मैं तो अभी युवा और बलिष्ट हूं ऐसा करने से मुझे कुछ हानि न होगी"। ईश्वर ने जो संसार का अध्यक्ष है एक नियम रचा है जो प्रत्येक पुरुष स्त्री के कार्य्यों पर लागू है, उस ने कहा है कि "मनुष्य जो कुछ बोता है सो ही काटेगा" यदि एक मनुष्य गेहूं बोता है तो उसे गेहूं की फ़सल मिलेगी, यदि वह दाल बोता है तो दाल की फ़सल प्राप्त करेगा। वह युवा जो दुराचार का अभ्यास डालता है अपने शरीर में रोग के बीज बोता है और यह बिलकुल प्रमाणित बात है कि वह कभी न कभी रोग की फ़सल काटेगा। १४, १५, १६, और १७ अध्यायों में हम यह वर्णन कर चुके हैं कि अधिक सहवास करने से और वीर्य्य के दुरुपयोग से जो रोग उत्पन्न होते हैं उन से आयु कम हो जाती है, और ऐसा अभ्यास डालनेवाली वस्तुओं के उपयोग से, जैसे अफ़ीम और तम्बाकू, रोग का बीज बोया जाता है; और इस प्रकार से जीवन की अवधी कम हो जाती है॥

बहुत से इस पुस्तक के पढ़नेवालों की युवावस्था बीत गई होगी, और वे कदाचित रोग ग्रस्त हों, वे अवश्य पूछेंगे, "इस कारण कि मैं स्वास्थ्य नियमानुसार गत वर्षों में न चल कर स्वास्थ्य खो बैठा हूं सो क्या मेरे लिये भी कुछ उपाय है जिस से मैं सौ वर्ष तक जी सकूं?" यह तो इस पर अवलम्बित होगा कि कहां तक शरीर का बिगाड़ हो चुका है। परन्तु कोई भी ऐसा नहीं है जो अपनी आयु न बढ़ा सके, यदि वह उन दुर्व्यसनों को त्याग दे जो जीवन को नाश करते हैं और वे कार्य्य करे जिन के द्वारा जीवन बढ़े। ऐसे मनुष्यों के कई उदाहरण हैं जो कि ४० वर्ष वा और अधिक आयु के थे और जिन के शरीर निर्बल और रोग-ग्रस्त थे, और जिन्हों ने अपने जीवन के अभ्यासों को त्याग दिया और ७५ वा ८० वर्ष की आयु तक जीवित रहे।

१०० वर्ष की आयु तक जीने के लिये मनुष्य को संयमी होना आवश्यक है।

संयमी होना दीर्घायु के लिये अत्यावश्यक है। उन पुरुष स्त्रियों का जीवन जो सौ वर्ष जीवित रहे सब प्रकार की बहुतायत से परे था, वे भोजन और पीने में संयमी थे, संयम द्वारा ही कामेच्छा और भोजन का प्रबोध होता है। क्रोध, डाह, शत्रुता के विचारों का हानिकारक

प्रभाव जीवन पर होता है और इन से जीवन अधिक हो जाता है। दयालुता के विचार और मन की सन्तुष्टता द्वारा जीवन बढ़ता है। वह अधिक जीता है जिस के विचार और कार्य्य उस सर्व-ज्ञानी के प्रति जो संसार के ऊपर प्रभुता करता है और समस्त जीवन का मूल है प्रेम-मय होते हैं। इस प्रकार से वे अपने जीवन को बढ़ा सक्ते हैं॥

वे लोग जो बहुत वर्ष तक जीते हैं अति साधारण रीति से जीवन व्यतीत करते हैं। अमेरिका में एक स्त्री से जो १०० वर्ष से अधिक जी, जब पूछा गया कि तुम क्या खाती हो? तो उस ने उत्तर दिया "मक्के की रोटी और आलू मेरा भोजन है"। सीरिया देश का एक मनुष्य जो ११३ वर्ष की आयु तक पहुंचा मुख्य कर रोटी और अंजीर पर जीवन निर्वाह करता था और केवल पानी और दूध पीता था॥

कोई २ लोगों का यह विचार है कि जब वे वृद्धावस्था के होते हैं तो उन को अधिक मांस और मदिरा और स्वादिष्ट भोजन की आवश्यकता है। यह एक बड़ी भूल है, क्योंकि इन भोजनों द्वारा न केवल पाचन-शक्ति ही नाश होती है वरन् ये अधिक विषैले पदार्थ को शरीर में त्यागते हैं और इन के विषैले पदार्थों से जीवन अल्प होता है॥

भोजन और व्यायाम।

भोजन जो वृद्धावस्था के लोगों के अनुकूल हैं ये हैं:—चांवल, नर्म उबले अण्डे, और रोटी जो दूसरी बार सेंक कर कुरकुरी बनाई गई है। यदि दांत निर्बल हों तो गर्म जल में डाल कर इस को नर्म कर लो, फल भी समय २ पर खाओ। जब पक्के फल उचित दशा पर मिलें तो उन्हें खाओ। उबाल कर वा भून कर फल खाना उत्तम है। केक और पकवान नहीं खाने चाहिये॥

दीर्घायु के लिये प्रति दिन व्यायाम करना उचित है, शरीर एक कल के समान है और यदि एक कल को उपयोग में न लाओ तो ज़ंग लग जायगा और प्रत्येक मनुष्य यह बात जानता है कि ज़ंग वाली कल शीघ्र ही टूट जायगी, यदि व्यायाम न करो तो शरीर कड़ा हो जाता है, और तब चल फिर भी नहीं सकते। कई प्रसिद्ध मनुष्यों ने जो चिरकाल तक जीवित रहे अपने, सम्पूर्ण जीवन का नियम बनाया था, कि प्रति दिन व्यायाम करें और जब वृद्ध भी हो गये तो ताज़ी वायु में प्रति दिन घूमने जाते थे॥

शरीर के समान मस्तिष्क को भी व्यायाम करना आवश्यक है। यदि वृद्धावस्था के लोग ऐसा करेंगे तो जैसे कई बुड्ढे हो जाते हैं वे बच्चों के नाई सठिया न जायेंगे॥

अपने को शीत और भीगने से रक्षित रक्खो।

प्रत्येक वृद्ध को आवश्यक है कि भीगने और सर्दी से अपने को रक्षित रक्खे। शीत ऋतु में वृद्ध मनुष्यों को युवकों की अपेक्षा अधिक गर्म कपड़े की आवश्यकता होती है क्योंकि युवावस्था की अपेक्षा वृद्धावस्था वालों को सर्दी शीघ्र लग जाती है। वृद्धावस्था वाले समय समय पर स्नान पश्चात् यदि त्वचा को शीघ्रता से सूखे तौलिया से मलें तो सर्दी लगने से रक्षित रहें॥



दीर्घायु के नियम।

एक अंग्रेज़ लेखक जो अत्यन्त दीर्घायु होकर मरे, निम्न लिखित नियम बताते हैं, जिन को पालन करने से मनुष्य दीर्घायु प्राप्त कर सकता है:—

१. प्रति दिन कम से कम ८ घण्टे सोया करो॥

२. देख लो कि तुम्हारे सोने के कमरे की खिड़कियां सदैव खुली रहें, ताकि यथोचित ताज़ी वायु आ सके॥

३. प्रति दिन ऐसे जल में स्नान करो जिस की उष्णता शरीर की उष्णता के समान हो और स्नान पश्चात् जब तक शरीर सूख न जाय ख़ूब मला करो॥

४. मांसाहार कम करो और सचेत रहो कि ख़ूब गला हुआ हो॥*

५. सावधान रहो कि मैला जल कभी न पियो॥

अमेरिका के रसायन शास्त्र वालों ने जिन में कोई २ उस देश के सब से उत्तम रसायन शास्त्र के ज्ञानी हैं नीचे लिखे नियम बताए हैं। जिन से स्वास्थ्य की रक्षा हो सकती है और चिरकाल तक मनुष्य जी सकता है॥

१. वे कमरे जिन में तुम वास करते हो, सचेत रहो कि उन में यथोचित वायु का प्रचार रहे॥

२. खुली हवा में अपना काम ढूंढो और मन भी खुली वायु में बहलाओ॥

३. जहां तक बन पड़े बाहर सोया करो॥

४. गहरी श्वास लिया करो॥

५. अधिक भोजन न खाया करो॥

६. मांस और मसालेदार भोजन कम खाया करो॥*

७. भोजन धीरे धीरे और ख़ूब चबा कर खाया करो॥

८. प्रति दिन कोठा स्वच्छ हो अर्थात टट्टी प्रति दिन हुआ करे॥

९. बैठते, खड़े, और चलते समय सीधे तने रहो॥

१०. दांत मसूड़े और जीभ को प्रति दिन दतौन से या कूची से घिस कर स्वच्छ रक्खो॥

११. विष या रोग-कृमि को शरीर में प्रवेश न करने दो॥

१२. अधिक परिश्रम न करो, जब थकित हो तो विश्राम कर लो, अपनी आवश्यकता के अनुसार ७ से ८ घण्टे सोया करो॥

१३. क्रोध और चिन्ता दूर रक्खो, शांत भाव से रहो॥

सूचना—यदि यह भला है कि मांसाहार कम खाया जाय जैसा कि रसायन शास्त्र वाले बताते हैं, हमारा मत है कि मांसाहार बिलकुल भी न करना उत्तम है॥

अध्याय २३।

गर्भावस्था और प्रसव की दशाएं।

मनुष्य की उत्पत्ति के विषय में विश्वासनीय इतिहास जो हमें मिला है वह धर्म शास्त्र की प्रथम प्रथम पुस्तक 'उत्पत्ति की पुस्तक' में मिला है। उस में यूं लिखा है "फिर परमेश्वर ने कहा हम मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार अपनी समानता में बनावें और वह समुद्र की मछलियों और आकाश के पक्षियों, और पशुओं और सारी पृथवी पर रेंगने वाले कीड़ों पर अधिकार रक्खें। सो परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार सृजा, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उस को सृजा, नर और नारी कर के उस ने मनुष्यों को सृजा...............यहोवा वा परमेश्वर ने आदम को भूमि की मट्टी से रचा और उस के नथनों में जीवनयुक्त श्वास फूंक दिया इसी रीति आदम जीता प्राणी हुआ"

हम उत्पत्ति में यह वर्णन पाते हैं कि प्रत्येक पौधे और ग्रामीन पशु को शक्ति मिली कि अपनी जाति को उत्पन्न करे और फले फूले। मनुष्य को सृजनहार ने कहा "फूलो फलो और पृथवी में भर जाओ और उसे अपने वश में कर लो"। सृजन कर्ता सम्पूर्ण पृथवी को मनुष्यों से परिपूर्ण रच सकता था पर उस ने दो को सृजा, पुरुष और स्त्री, इन को उस ने सृजा। परन्तु उस को संशय आया कि यह जननेन्द्रिय शक्ति को केवल अपनी कामाभिलाषाओं को पूर्ण करने के अवयव न समझें, परन्तु वे इन को आदरणीय अवयव समझें, मानो कि वे ईश्वरत्व से कुछ २ सम्बन्ध रखते हैं॥

गर्भावस्था

चौदहवें अध्याय में यह बताया गया है कि विवाह के पश्चात् अधिक सहवास न करना चाहिये। यद्यपि पति और पत्नी में सहवास होना उचित है तिस पर भी नियम और बुद्धिअनुसार इन कामाभिलाषाओं का बन्देज करना उचित है। कामाभिलाषाओं को अपने अधिकार में रखने की भूख और प्यास से तुलना कर सकते है। भूख और प्यास दोनों स्वाभाविक

घटनाएं हैं और इन को नियमानुसार पूरी करना आवश्यक है, परन्तु प्रत्येक को यह अवश्य विदित है कि परिमाण से अधिक खाना व पीना, कि खाऊ और शराबी हो जाना, अनुचित है। इसी प्रकार से मनुष्य के लिये केवल इस कारण कि यदि वह चाहे तो विषयभोग कर सक्ता है, परिमाण से परे सहवास करना अनुचित है और अज्ञानपन है, क्योंकि वह विषयी हो जायगा॥

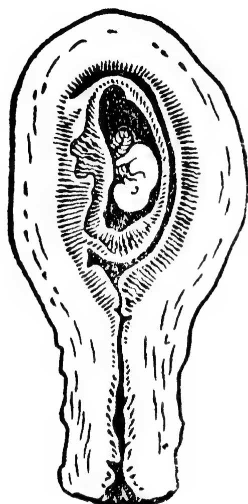
जल्दी २ गर्भ रहने से जो बच्चे उत्पन्न होते है वे निर्बल और अशक्त होते हैं। जल्दी २ बच्चे उत्पन्न होने से माता के स्वास्थ्य में बाधा होती है सो यह एक और कारण है कि सहवास में संयमी होना चाहिये यह प्रश्न हो सकता है कि वे पुरुष और स्त्रियां क्या करें जो न अधिक संयमी और न अधिक विषयी होना चाहते हैं, अर्थात् जो स्त्रीप्रसंगमें संयमी होना चाहते हैं। एक ऐसी विधि होनी चाहिये जो स्वाभाविक नियमानुसार हो, वह यह है:- रज-स्राव माहवारी होता है, एक पूरा बढ़ा हुआ दाना (ओवम) बहुधा गर्भाशय में आता है और इस रीतिसे गर्भावस्था के लिये प्रकृति स्वतः स्वाभाविक रीति से तैयारी करती है, रज-स्राव से एक सप्ताह पूर्व या रज-स्राव के पश्चात् दस दिन तक में जो सहवास होगा तो बहुधा स्त्री गर्भवती हो जायगी और अन्य समयों में सहवास से गर्भवती न होगी, इस प्रकार से प्रायः एक सप्ताह मध्य में शेष रहता है कि यदि इस में स्त्री प्रसंग किया जाय तो गर्भवती होने की कम आशा है और यदि इसी सप्ताह में प्रसंग किया जाय तो जलदी २ बच्चे न उत्पन्न होंगे और देर में बच्चे उत्पन्न होने के कारण जो बच्चे उत्पन्न होंगे वे अच्छे बलिष्ट और हृष्ट-पुष्ट और आरोग्य होंगे॥

प्रत्येक सदाचारी पुरुष और स्त्री को अपने प्रसंग के परिमाण की सीमा यहां लों बांधनी आवश्यक है। यह भी सब को विदित है कि जब प्रसंग पूर्ण रीति से नहीं किया जाता है, या गर्भ न रहने के उपाय किये जाते हैं, तो संतुष्टता प्राप्त नहीं होती और उस के अपेक्षा घृणा की दशा और भाव हो जाता है जिस से अधिक कष्ट और दुख होता हैं॥

बालक का गर्भाशय में बढ़ना

ज्यों ही स्त्री गर्भावस्था में हो जाती है तो दाना (ओवम) जो राई के दाने से भी सूक्ष्म है (वह एक इंच के १/१२५ भाग गोलाई में है) बढ़ने लगता है, थोड़े ही दिनों में वह प्रायः शहतूत के समान बड़ा हो जाता है। चार हफ़्ते में वह कबूतर के अण्डे के समान बड़ा हो जाता है। दुसरे महीने के अन्त

वह मुर्गी के अण्डे के समान हो जाता है। और मनुष्य के ऐसा आकार होने लगता है। रक्त वाहिनियां ही है जो भीतर गर्भाशय से उसे संयुक्त रखती हैं, और भोजन जो माता खाती और पचाती है उस के रक्त वाहिनियों द्वारा गर्भ से (बालक से जो गर्भाशय में बढ़रहा है) पारस्परिक सम्बन्ध होता है और यूं उसे बढ़ाता है (देखो चित्र में गर्भ को गर्भाशय के अन्दर दिखाया गया है)॥



यह एक अति विचित्र घटना है कि कैसे वह छोटा सूक्ष्म पदार्थ जो शहतूत के आकार का है बढ़कर मनुष्य शरीराकार बन जाता है जिस में २०६ अस्थि और ५०० से अधिक स्नायु, कान, नेत्र, हृदय और मस्तिष्क इत्यादि हैं। यह एक और प्रमाण है कि सर्व ज्ञानी महान परमेश्वर ने मनुष्य को बनाया और उस छोटे सूक्ष्म पदार्थ से एक पूर्ण देह बनाता है॥

प्राचीन समय में एक ज्ञानी राजा, दाऊद नामक, था, उस ने कहा है "मैं तेरा धन्यवाद करूंगा इस लिये कि मैं भयानक और अद्भुत रीति से रचा गया हूं। जब मैं गुप्त में बनाया जाता था और मानो पृथवी के नीचे स्थानों में रचा जाता था तब मेरी हड्डियां तुझ से गुप्त न थीं। मेरे अन्तः करण का स्वामी तू ने मुझे माता के गर्भ में रच रच के बनाया"॥

चार महीने के अन्त में बालक ५ इंच लम्बा होता है। ६ महीने के अन्त में प्रायः सवा सेर भारी होता है, यदि वह ६ महीने के अन्त में उत्पन्न हो तो केवल थोड़े दिन जीवेगा। ९ महीने के अन्त में बालक २ सेर से ३ सेर तक भारी होता है और प्रायः १८ इंच लम्बा होता है। यदि बालक इस समय पर उत्पन्न हो और उस का पालन पोषण यथायोग्य होवे तो वह जियेगा, दसवें महीने के कुछ दिनों के बाद (२८० दिनों में) बालक पूर्ण बढ़ चुकता है इस समय ३ सेर से ५ सेर लों (६ पौंड से १० पौंड लों) भारी और प्रायः २० इंच लम्बा होता है॥

गर्भावस्था का समय।

गर्भावस्था का समय २८० दिन है। समय का विचार करने के लिये निम्न लिखित उपायों द्वारा विदित होगा कि बालक कब उत्पन्न होगा। जब

अन्तिम रज-स्राव हुआ तब से आगे ६ महीने गिनो और उस में सात दिन जोड़ दो। (यह हिसाब अंग्रेज़ी महीने से लगाओ) उदाहरण, जैसे यदि रज-स्राव का प्रथम दिन जनवरी पहिली थी तों वह तिथि जिस तिथि में बालक उत्पन्न होने की आशा होगी आक्टोबर ८ होगी॥

दूसरी सरल रीति गिनने की यह है कि अन्तिम रज-स्राव के प्रथम दिन से २८० दिन गिन डालो। परन्तु किसी भी रीति से ठीक तिथि निश्चयपूर्वक नहीं कही जा सकती है। बालक समय से दो सप्ताह पूर्व वा पश्चात् उत्पन्न हो सकता है। जैसे अन्तिम समय जब स्त्री को गर्भवती होने के पूर्व रज-स्राव हुआ जून १ थी तो २८० दिन मार्च ८ को होंगे इस तिथि में बालक को उत्पन्न होना चाहिये॥

गर्भावस्था के लक्षण।

स्त्री को कसे विदित हो कि वह गर्भवती है! कई एक लक्षण ऐसे हैं जिन के द्वारा उसे विदित हो सकता है। जब कोई पति वाली स्त्री जो पहिले बराबर उचित समय पर रज-स्राव हुआ करती थी, अब रजस्राव बन्द हो जाता है तो यह एक चिन्ह है, परन्तु इस को निश्चय पूर्वक लक्षण न मानो। क्योंकि स्त्री जब बालक को दूध पिलाती है और जब से बालक उत्पन्न हुआ है रज-स्राव न हुआ तब भी गर्भवती हो सकती है॥

जब स्त्री गर्भवती हुई तो कुछ सप्ताह पश्चात उसे प्रातः काल का रोग होता है। जब भोर को उठती है तो उस का जी मिचलाता है और एका एकी वमन या क़ै करने को जी चाहता है और वह क्रय करती है, यह दशा प्रति दिन कई सप्ताह लों हो सकती है। यह गर्भावस्था का प्राय: निश्चय पूर्वक लक्षण है॥

गर्भावस्था के दूसरे तीसरे महीने में छातियां सख़्त होती और भर आती हैं। स्तनों का पपना (मुंह) अधिक निकल आता है॥

गर्भावस्था के तीसरे महीने से धीरे २ पेट बढ़ता जाता है॥

गर्भवती होने के प्राय: साढ़े चार महीने में स्त्री को बालक की गति का अपने गर्भाशय में ज्ञान होने लगता है॥

गर्भवती स्त्री की सेवा करना।

गर्भवती स्त्री को अधिक पौष्टिक भोजन मिलना चाहिये, क्योंकि उसे दो के लिये भोजन भक्ष्य करना पड़ता है, अपने लिये और गर्भाशय में के

बालक के लिये। यह भी मुख्य है कि टट्टी प्रति दिन हुआ करे, यदि अजीर्ण हो तो वे उपाय जो २६ वें अध्याय में दिये हैं करें॥

उसे एक खुले हवा वाले कमरे में सोना चाहिये॥

यह भी मुख्य है कि गर्भवती स्त्री प्रति दिन अवश्य शारीरिक परिश्रम करे नहीं तो स्नायु अशक्त और ढीले पड़ जाते हैं। और बालक भी निर्बल होगा और प्रसव में जब बालक उत्पन्न होगा तो अधिक कष्ट होगा॥

प्रति दिन खूब बहुत सा निर्मल जल पान करे।

वह मदिरा, तम्बाकू और पान, सुपारी बिलकुल न खावे॥

वह समय २ पर स्नान करे॥

गर्भावस्था में स्त्री प्रसंग न करना चाहिये॥

प्रसव की तैयारियां।

जब बालक पैदा होने का समय निकट हो कमरे को खूब साफ़ वा स्वच्छ करना चाहिये, प्रत्येक वस्तु जो भीतों पर लटक रही हो हटा के चूने से सफ़ेदी करानी चाहिये और फ़र्श को खूब धो डालो, यदि मिट्टी का कच्चा फ़र्श हो तो झाड़ू अच्छी रीति से दिलवाओ और चूना कमरे के कोनों में और सामान के नीचे फैलवा दो, कमरे से पलंग मेज़ को छोड़ शेष सामान बाहर निकलवा दो, और यदि एक कमरा हो तो चटाई से जहां पर स्त्री का पलंग है और कमरे के दूसरे भाग में आड़ कर दो॥

वस्तुएं जो लानी आवश्यक हैं निम्न लिखित हैं॥

१. एक पौंड या अधिक सोखने वाली रूई कि रक्त इत्यादि को स्वच्छ करे और बालक उत्पन्न होने के पश्चात् योनि में उस की गद्दी लगाई जाय॥

२. दो वा तीन नवीन सूती कपड़े के टुकड़े १० इंच चौड़े और चार फ़ीट लम्बे कि बालक उत्पन्न होने के पश्चात् माता के पेट पर पट्टी बांधी जाय॥

३. कई टुकड़े पुराने कपड़े के जो स्वच्छ धोये और उबाले गये हों वे माता के नीचे रखना चाहिये कि रक्त इत्यादि पदार्थों को सोख लें॥

४. एक टुकड़ा लंका की फ़लालेन का या कोई और कोमल कपड़ा इस को खूब भली भांति धोना और उबालना चाहिये जो बालक को लपेटने के लिये चाहिये॥

५. दो कपड़े के टुकड़े जो साढ़े चार इंच चौड़े और दो फ़िट लम्बे हों, इस कपड़े को उबाल कर रखना चाहिये यह बालक के पेट की पेटी है॥

६. साबुन और छोटी कूंची व बुरुश दाई के हाथों को स्वच्छ करने के लिये होना चाहिये॥

७. कुछ औंस लाइसोल, एक सेर पानी में आधे चाय के चमचे भर लाइसोल डालना चाहिये दाई के हाथों को धोने के लिये॥

८. एक वा दो औंस बोरिक पेसिड का पाउडर वा बूरा नाभी के नाल को काट के बुरकाने के लिये॥

९. कुछ छोटे २ टुकड़े कपड़े के जो उबल चुके हों, प्रत्येक टुकड़ा तीन इंच लम्बा वा तीन इंच चौड़ा हो और उस के मध्य में छेद हो जिस में नाल का टुकड़ा सुगमता से घुस सके॥

१०. एक चार या छः औंस जल में घुले हुए बोरिक पेसिड की बोतल (देखो ५० अध्याय का नम्बर १ उपचार चिकित्सा) ये बालक के आंख का नेत्र धोने में और माता के स्तानों के कोर धोने में उपयोग करो॥

११. आधे वा एक औंस की अर्जिराल लोशन की बोतल जिस में सैकड़े में दशांश भाग अर्जिराल का हो बालक के नेत्रों को स्वच्छ करने के लिये (देखो चिकित्सा उपचार नः ३)॥

१२. कुछ औंस वेसलीन वा मीठा तेल कि बालक के उत्पन्न होने के पश्चात् बालक के शरीर को स्वच्छ करो॥

१३. कुछ सेफ़टी पिन कि माता के पेट की पट्टी को और बालक के पेट की पट्टी को बांधने में काम आए॥

१४. कुछ स्वच्छ कपड़े बालक की गुदड़ी के लिये॥

१५. दो टुकड़े सुतली वा टेप के ६ वा ८ इंच लम्बे होने चाहिये; १० वा १२ धागों को साथ बट कर सुतली वा टेप बना सकते हो, इन सुतली वा टेप से नाल को बांधो और एक अच्छी तीक्ष्ण कतरनी वा कैंची नाल काटने के लिये होनी चाहिये॥

इस सामग्री को पूर्व ही से जमा लेनी चाहिये, और सब कपड़े जिन को उबालना है उबाल कर एक स्वच्छ कपड़े में लपेट कर रक्खो, इन वस्तुओं को हाथ धोने के पूर्व न छुओ॥

कपड़े जो माता और ज़च्चा के लिये बनाये गये हैं, पलंग की चद्दरें स्वच्छ होनी चाहियें और बनाने के पश्चात् उन को धूलि से रक्षित रक्खो॥

यह अति ही आवश्यक है कि सब वस्तुएं स्वच्छ हों। बहुतेरे बालक जो बचपन ही में मर जाते हैं उन में से बहुत से उत्पन्न होने के दो सप्ताह पश्चात् ही मर जाते हैं। यह इस कारण से होता है कि बालक के उत्पन्न होने के समय सब वस्तुओं को स्वच्छ करने की ओर ध्यान नहीं दिया गया। बहुत सी माताएं रोगी रहती हैं और बालक उत्पन्न होने के बहुत दिन बाद ज्वर आने लगता है, यह भी इसी कारण से होता है कि बालक पैदा होने के समय प्रत्येक वस्तु उचित प्रकार से स्वच्छ न की गई होगी॥

जैसे ही स्त्री को विदित हो जाय कि बालक पैदा होने का समय आ गया है, तो तुरन्त उसे अपना पलंग तैयार करवा लेना उचित है। कई ताव समाचार पत्रों के बिछाओ वा मोम जामे के कपड़े की चद्दर गद्दे या गुदड़ी के ऊपर फैलाओ तब उस पर स्वच्छ पलंग की चद्दरें बिछाओ। रक्त सोखने के लिये पलंग पर मैले कपड़े उपयोग न करो॥

स्वच्छ बर्तनों में कई गैलन पानी उबाल कर रखना चाहिये, इस में से कुछ स्वच्छ चिलमचियों या घड़ों में भरो और तब स्वच्छ कपड़े से ढांको और ठण्डा होने दो, जल का कुछ भाग गर्म रहने दो। एक छोटी मेज़ कमरे में रखनी चाहिये, इस मेज़ के ऊपरी भाग को उबलते जल से धोओ, और इस मेज़ पर आवश्यकता की वस्तुएं रक्खो, दो चिलमचियां भी रक्खो और उन को गर्म पानी और साबुन से धोओ॥

प्रसव।

प्रसव के दो मुख्य लक्षण हैं। प्रथम यह कि योनि से लाल सा द्रव पदार्थ निकलता है और दूसरा यह कि प्रसव की झूटी पीड़ाएं आती हैं, सच्ची पीड़ाएं समय २ पर उठती हैं पहिली तो १५ से ३० मिनिट के अन्तर पर, और ज्यों प्रसव-काल समीप आता है त्यों त्यों शीघ्र शीघ्र आने लगती है॥

यदि एक योग्य डाक्टर मिल सकता है तो सदैव भला है कि योग्य डाक्टर को बुलाओ। परन्तु यदि डाक्टर नहीं मिल सकता तो एक दाई को जो बच्चा जनाने का काम सीखी हो रख लो। यदि एक योग्य डाक्टर को बुलाओगे तो उसे विदित होगा कि क्या २ करना आवश्यक है। यहां की हुई शिक्षाएं उस दशा के लिये है जब योग्य डाक्टर नहीं मिल सकता है। और उस के हाथ में यह प्रसव का काम नहीं है॥

स्त्री को देखने के लिये किसी को न आने दो। दाई के अतिरिक्त केवल दो अन्य स्त्रियां कमरे में हों ॥

स्त्री को गर्म जल से स्नान कराना चाहिये। पेड़ू और स्त्री के उत्पत्ति-स्थान के अवयव साबुन और गर्म जल से धोने चाहियें। प्रसव में मूत्र को समय २ पर निकालना उचित है और यदि ६ वा ८ घण्टे से टट्टी नहीं उतरी है तो गर्म पानी की पिचकारी द्वारा कोठा स्वच्छ कराना चाहिये। (देखो अध्याय २० में पिचकारी देने की विधि) ॥

पहिली पीड़ा में माता अपनी इच्छानुसार बैठे वा लेटे, परन्तु जब पीड़ा अधिक तीक्ष्ण होने लगे तो पलंग पर टांगें ऊपर कर के लेट जाना चाहिये। इस अवसर पर ज़च्चा का खड़ा रहना व बैठना हानिकारक है और बालक को भी स्वच्छ रखना असम्भव है ॥

नर्स वा दाई को अपने हाथ और बांह को बड़ी सावधानी से स्वच्छ रखना आवश्यक है। कोहनी लों बांह खुली हों, उंगलियों के नख काटो और उन के नीचे के मल किसी वस्तु से निकाल के स्वच्छ करो। केवल हाथों को गर्म पानी और साबुन से धोना ही काफ़ी नहीं है। हाथों को छोटे बुरुश से मल के स्वच्छ करना अति उत्तम है। एक स्वच्छ वस्त्र पहिनो, एक बड़े कपड़े की लम्बी कुरती, एपरन (apron) की रीति पर उपयोग करना अति भला है॥

प्रसव के समय स्त्री को कोई औषधि न पिलाओ इस विचार से कि जनते समय उस की सहायता होगी, उस के लिये कोई औषधि आवश्यक नहीं है और औषधि बिना ही उस के भली भांति प्रसव हो जायगा। स्त्री के पेट को रस्सी वा पलंग की चद्दर से न बांधो, इस से सहायता की अपेक्षा बाधा होती है। दाई को योनि में उंगलियां न डालनी चाहिये, ऐसा करने से स्त्री को छूत या विष लग जायगा और प्रसूत का ज्वर आने लगेगा ॥

जब पानी की थैली फूटती है तो बालक का सिर योनि के मुंह से निकलता हुआ दिखाई देगा, यदि प्रकृति के अनुकूल बालक का स्थान होवे तो बालक का मुंह निचे माता की पीठ की ओर होगा और सिर की तोंबी पहिले दृश्य होगी। यदि सिर शीघ्रता से निकलेगा तो अवयव बुरी भांति फट जायगा। ज्यों ही सिर दीख पड़े उस पर उंगलियां लगाओ और प्रत्येक पीड़ा में दृढता से नीचे दबाओ। इस प्रकार से बालक का सिर उस की छाती की ओर झुकता है और इस कारण वह

योनि के छेद द्वारा सुगमता से निकल आता है। इस प्रकार से सिर का निकलना कुछ मिनिट लों रुक जाता है, पीड़ा के उठने में जो समय का अन्तर होता है उस में स्नायु स्वयं बढ़ते है तथा संकुचित होते हैं। जब यह खुलना आरम्भ होता है तो सिर को बाहर निकलने देना आवश्यक है। इस विधि से अंग फटने का कम भय होगा॥

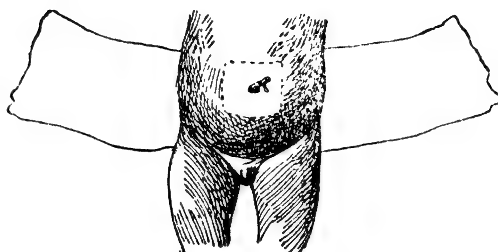
सिर निकलने के पश्चात् थोड़ा विलम्ब होता है और तब शरीर बाहर निकल आता है। ज्यों ही सिर निकल आता है उंगली बालक की गर्दन पर लगा कर देखो कि नाल तो गले में लिपटी नहीं है, यदि नाल बालक के गले से लिपटी है और ढीली (नब्ज़दार) नहीं है तो बालक को शीघ्र निकालो। यदि नाल बालक के गले में लिपटी नहीं है तो दाई को आवश्यक है कि एक स्वच्छ कपड़े के टुकड़े से वा सोखने वाली रुई से बालक के नेत्रों को स्वच्छ करे वा पोंछे और बालक के मुंह को खोल के मुंह को भी स्वच्छ करे व पोंछे॥

जब बालक उत्पन्न हो गया तो उसे लंका के फ़लालेन अथवा कोमल कपड़े में लपेटो मुंह को रक्त में लोट पोट न होने दो। दाई को १०० में १० भाग आर्जिराल डाल कर इस लोशन की एक बून्द बालक के नेत्रों में डाल कर शीघ्रता से धो डालनी चाहिये यदि आर्जिराल न मिल सके तो कई बून्द बोरिक ऐसिड की प्रत्येक नेत्र में डालो। सहस्रों बालक इसलिये अन्धे हो जाते हैं क्यों कि जन्मते समय उन के नेत्र इस प्रकार से धोए नहीं जाते हैं॥

ज्योंही बालक उत्पन्न हो जाय तो उस स्त्री को जो दाई की सहायता करती है उचित है की माता के उदर पर हाथ धर के गर्भाशय को थामे रहे, उदर की भीतों में से गर्भाशय टटोलने से एक कड़ा ढेला सा ज्ञात होता है। उस को धीरे से दबाओ, सुचेत रहो कि एक क्षण भर भी हाथ ढीला न होने पावे क्योंकि इसी प्रकार के दबाने द्वारा खाली गर्भाशय सिकुड़ता है और रक्त प्रवाह बन्द होता है॥

ज्योंहि नाल में धड़कन बन्द हो जावे, तो उसे बान्ध कर काट देना उचित है जो दो फ़ीते इस कार्य्य के लिये तैयार किये गये थे अब उन का उपयोग करना उचित है। इन दोनों धागों को और काटने की क्रैंची को एक छोटे बर्तन में डाल कर कुछ क्षण लों उबालना आवश्यक है और उपयोग में लाने के समय लों उन को उसी गर्म पानी में रहने दो, सावधान रहो और नाल पर खूब कस के धागे को बांधो, कभी काटने के लिये

वह कैंची या बांधने का धागा उपयोग में न लाओ जो उपयोग के पूर्व अच्छी रीति से उबाला न गया हो। ऐसी वस्तुएं जो भली भांति से उबाली न गई हों उपयोग में लाने से ही जमूगा का रोग हो जाता है॥



नाल की रक्षा की उचित रीति।

ज्योंही नाल काटा जाये तो उस की टूट पर ज़रा सा बोरासिक एसिड छिड़क दो और तब उस टूट के ऊपर एक छोटा सा टुकड़ा उस कपड़े का जो इस कार्य्य के लिये बनाया गया था और कुछ समय लों पानी में उबाला गया है, रख दो (देखो अध्याय ५० उपचार नं. ४) कपड़े के छिद्र में से टूट को निकालो तब कपड़े को नाल के ऊपर लपेट के रक्खो। इस को नियत स्थान पर रखने के लिये इस पर एक पट्टी (bandage) बालक के शरीर के चहुं ओर बांध दो। बालक को दहनी करवट पर किसी गर्म सूखे स्थान पर लिटाये रक्खो, जब लों कि तुम माता की सेवा कर लो फिर गाभ थोडे ही काल मे निकल पड़ेगा। नाल के छोर को न खींचो और न उस में कोई वस्तु बांधो यह सोचना भूल की बात है कि नाल माता के उदर मे फिर चली जायगी और उस से माता का बिगाड़ होगा वह जो गर्भाशय को पकड़े है उसे दृढ़ता से दबाना उचित है। अधिक बल न लगाओ, इस से रक्त प्रवाह बन्द हो जायगा, और इस से गाभ भी गिर जायगा॥

ज्योंही गाभ गिर पड़े एक मोटे कपड़े की पट्टी उदर पर कस के सवधानी से बांधनी चाहिये और इस पट्टी को पिन से वा फ़ीतों से जो पट्टी में सिले हों बांध देना चाहिये। यह पट्टी उदर को दबाने के लिये चौड़ी कमर-पट्टी का काम करती है॥

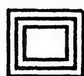
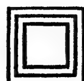
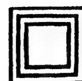
ज्यों ही बालक को स्नान करा के कपड़े पहिना लिये जाएं तो साधारण नियम यह है कि बच्चे को छाती से लगाते है क्योंकि ज्योंही वह दूध

पीने लगता है तो गर्भाशय संकुचित होगा और छोटा और कड़ा हो जायगा। इस के द्वारा गर्भाशय से रक्त बहना बन्द होता है। उदर में पट्टी बांधने के पूर्व सब मैले वस्त्र और पलंग के कपड़े निकाल लेना आवश्यक है और जो भाग रक्त में लिप्त हैं उन को गर्म पानी से धो के पोंछ कर सुखा देना चाहिये। इस के पश्चात् एक रूई की गद्दी या कपड़े की कई तहें कर के (ये कपड़े पहिले से उबाल के रक्खे हों) उत्पत्तिस्थान के अवयवों पर लगाओ। गद्दी को एक २ छोर पर फ़ीते से उदर पट्टी में पिन से लगा दो, एक पिन से सामने की ओर, और दूसरी से पीठ की ओर लगाओ॥

स्त्री को कई दिन लों शान्त हो पलंग पर लेटे रहना उचित है॥ गद्दी उत्पत्ति स्थान के अवयवों की समय २ पर बदलनी चाहिये और इन अवयवों को भी समय २ पर धोना आवश्यक है॥

बालक के उत्पन्न होने के छः या सात घण्टे पश्चात् स्त्री को मूत्र निकालना चाहिये। यदि इतने समय के पश्चात् वह मूत्र न उतार सके तो एक बड़ी तौलिया कई तह में तह की हुई गर्म पानी में भिगो के निचोड़ी जाय और पेड़ू और उत्पत्ति-स्थान पर लगाई जाय। बालक उत्पन्न होने के एक दिन पश्चात् टट्टी होनी चाहिये यदि न हो तो रेचक-औषधि देना चाहिये॥

बालक के उत्पन्न होने के पश्चात् माता साधारण भोजन खा सक्ती है। एक वा दो दिन तक ठण्डा पानी पीना या ठण्डा भोजन खाना अच्छा नहीं है। माता को भली भांति पकाया हुआ पौष्टिक भोजन जैसे चांवल पतला पका कर, अण्डे, दूध, रोटी, आलू, मछली और पके फल देने चाहिये॥

अध्याय २४।

प्रसव की विशेष दशायें और प्रसूत ज्वर।

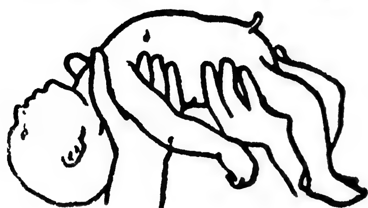
क्या करना चाहिये यदि बालक श्वास न ले॥

प्राकृतिक रीति से ज्योंही बालक उत्पन्न होता है त्योंही रोने और श्वास लेने लगता है। यदि बालक रोता नहीं और श्वास लेना आरम्भ नहीं करता है और चुप चाप पड़ा रहे या मध्यम वा मन्द २ श्वास लेता है तो उस को शीघ्र श्वास लिवाना पड़ेगा। और जो कुछ उपाय उस में जीवन लाने के किये जासके हैं सो शीघ्र करने चाहियें। उंगली में एक पतला स्वच्छ कपड़ा लपेट कर पहिले मुंह और गला स्वच्छ करो उंगली और अंगूठे में एक पतला कपड़ा लपेट कर बच्चे की जीभ पकड़ो। १ मिनिट में १० बार की औसत से धीरे २ उस की जीभ खींचो जब यह करते हो तो किसी से कहो कि बच्चे के चूतड़ों पर कपड़े से मारे या एक कपड़ा ठण्डे पानी में भिगोए और उस से बालक की छाती के चमड़े पर सचेत करने को थपथपाए। ऐसे उपायों द्वारा बच्चा शीघ्र श्वास लेने लगेगा ज्यों ही श्वास लेने लगे तो एक कपड़े के टुकड़े में जो पहिले आग पर गर्म कर चुके हो बालक को लपेट दो॥

यदि ये उपर्युक्त उपाय दो मिनिट लों करने पर भी बालक श्वास लेना आरम्भ न करे तो नाल को तुरन्त काट कर बांधो और "ऊपरी श्वास प्रवास" करो। इस "ऊपरी श्वास प्रवास" के उदाहरण दी हुई चित्रों में दिखाये गये हैं, अति शीघ्र गति न होनी चाहिये एक मिनिट में केवल १० वा १२ बार। यह अधिक अच्छा होगा कि एक बर्तन में (जो इतना बड़ा हो कि बच्चा उस में लिटा दिया जासके) १०५ F. डिग्री उष्णता से कम उष्ण पानी न हो, जब "ऊपरी श्वास प्रवास" की विधि कर रहे हो तो जितना हो सके उतना भाग बालक के शरीर का गर्म पानी में डाल रक्खो। और शीघ्र आशा न त्याग दो। यदि जीवन के कुछ भी चिन्ह हों तो आध घण्टे या और अधिक समय तक "ऊपरी श्वास प्रवास" की क्रिया करो॥

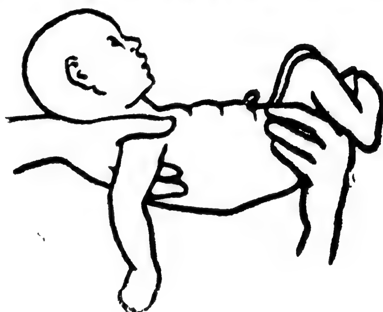
बालक उत्पन्न होने के समय अधिक रक्त बहना।

बालक उत्पन्न होने के समय और उत्पन्न होने के पश्चात् और गर्भपात या गाभ निकलने के पश्चात् कुछ रक्त अवश्य बहता है परन्तु ऐसा रक्त-प्रवाह केवल प्रकृति के अनुसार थोड़ी देर तक होना चाहिये, यदि अधिक रक्त-प्रवाह हो तो स्त्री को ठण्ड लगने लगती है और वह पीली पड़ जाती है और अचेत विदित होती है ॥


१

चिकित्सा।

स्त्री के चूतड़ों के नीचे के बिस्तर लपेट कर रख दो कि वे उठ जायें गर्भाशय को उदर की भीतों से ज़ोर से और दृढ़ता से पकड़ो कि गर्भाशय सिकुड़ जाय। इस को पकड़े रहो और ढीला न होने दो जब तक कि रक्त-प्रवाह बन्द न हो जाय। एक अति ही शीत पानी में, जो मिल सकता हो, कपड़ा भिगोओ और उसे पेड़ू और उत्पत्तिस्थान के अवयवों पर लगा दो इस कपड़े को फिर भिगो कर समय २ पर लगाते जाओ। ठण्ड से रक्त-नालियां सिकुड़ जायेंगी और रक्त बन्द होने में सहायक होंगी। दो या तीन फ़िट की ऊंचाई से आमाशय पर कुछ ठण्डा पानी डालो। बालक को तुरन्त छाती पर लगाओ क्योंकि दूध चूसने से गर्भाशय को सिकुड़ने की उत्तेजना होती है। यदि एरगोट (ergot) का रस मिल सकता हो तो एक चाय का चमचा पिला दो और वह तीन घण्टे पश्चात् पिलाते रहो। इस प्रकार के रक्त प्रवाह के पश्चात् स्त्री को दो दिन लों अति चुप चाप और शान्त हो लेटना आवश्यक है। कभी उसे बैठने या पलंग से उठने न दो ॥


२


३

ज़च्चगी या प्रसव के पश्चात् का ज्वर :—(प्रसूत ज्वर)।

स्त्री को प्रसव के पश्चात् कई दिन तक थोड़ा २ ज्वर आता है यह बालक उत्पन्न होने के पश्चात् आता ही है। यह ज्वर असाध्य नहीं होता और केवल तीन या चार दिन रहता है। परन्तु जो ज्वर प्रसव या बालक उत्पन्न होने के तीन या चार दिन पश्चात् आता है अति असाध्य है। ज्वर के साथ नाड़ी भी अति तीक्ष्ण चलती है। (स्वाभाविक नाड़ी को १ मिनट में ७२ बार गति करनी चाहिये) आरम्भ में ठण्ड लगना सम्भव है। उदर के नीचे के भागों में बहुधा पीड़ा भी होती है। और यदि कोई वस्तु उदर में लगे तो तीक्ष्ण पीड़ा होती है। सिर में दर्द होता है। जब ज्वर आता है तो रजस्राव जो गर्भाशय से निकलता है बहुधा कम हो जाता है॥

यदि प्रसव के समय प्रत्येक वस्तु की स्वच्छता पूर्ण रीति से कराई जावे तो प्रसूत ज्वर न हो क्योंकि ज्वर उन रोग-कृमि द्वारा होता है जो गर्भाशय में दाई के मैले हाथों द्वारा प्रवेश हो जाते हैं, या मैले कपड़ों को लगाने से है उत्पत्ति-स्थान के अवयवों पर रक्त और रज-स्राव को सोखने के लिये। यदि दाई हाथ या और कोई औज़ार स्त्री की योनि में डालती है तो ऐसा करने से बहुधा गर्भाशय में रोग कृमि प्रवेश करते और फैलते हैं कि जिस से प्रसूतज्वर आने लगता है॥

प्रथम काम जो करना है यह है कि कोठा साफ़ करने की औषधि दो, जैसे मेगनेसीयम सल्फ़ेट (एपसम साल्ट) (Magnesium Sulphate; Epsom Salts) प्रत्येक तीन घण्टे उदर को सेकन सेवन करो (२० अध्याय में इस की विधि देखो) एक उष्ण जल की योनि पिचकारी प्रत्येक चार घण्टे में दो चार सेर जल (४,००० सी. सी.) ११० F. डिग्री की उष्णता का लो और उस में पांच चाय के चमचे भर के लाईसोल (Lysol) (५ ड्राम, २० सी. सी.) मिलाओ और इस की पिचकारी लगाओ (योनि पिचकारी वा डूस देने की विधि २० अध्याय में देखो)॥

यदि एक योग्य डाक्टर मिले तो अवश्य इस रोग की चिकित्सा करने को बुलाओ और यदि स्त्री को अस्पताल ले जा सकते हो तो अवश्य ले जाओ॥



अध्याय २५।

बालकों का पोषण।

किसी नगर के एक मोहल्ले का यह वर्णन है कि प्रत्येक १०० बालक में से, जो उत्पन्न होते हैं, ७१ एक वर्ष के होने के पूर्व मर जाते हैं, उसी के निकटवर्ती दूसरा मोहल्ला है जिस के १०० बालक में से, जो उत्पन्न होते हैं, केवल ५ अपने पहिले जन्म दिन के पूर्व मरते हैं। इन दोनों मोहल्लों में इतना भारी अन्तर बालकों की मृत्यु में इस कारण से है कि एक मोहल्ले के पिता माता बच्चों का उचित पालन पोषण नहीं करते हैं, जब कि दूसरे मोहल्ले के पिता माता के बच्चे यथोचित रीति से पोषण होते हैं। यहां भारत वर्ष में अधिक संख्या बच्चों की जो उत्पन्न होते हैं १२ महीनों तक नहीं जी पाती है। इस घोर जीवन का नाश रोका जा सकता है। यह इस प्रकार से रोका जा सकता है कि वह इस कारण से है कि यथोचित स्वच्छता बालक की उत्पत्ति के समय नहीं हुई और कुछ महीनों के बालकों को हानिकारक खाना खिलाने से है, मुख्य कर उन को मांस, कच्चे खरबूज़े और साग तरकारी खिलाना इत्यादि, और ऐसा भोजन खिलाना जिस पर मक्खियों ने बैठ कर उसे रोग-कृमि से भर दिया है, फिर बालक को ज्यूं ही वह रांधे भोजन खिलाना, और जिस प्रकार की मैली वस्तु वह चाहे उसे अपने मुख में डालने देना। इन कारणों से कि बालकों में इतनी अधिक मृत्यु को रोका जा सकता है तो क्या यह उचित नहीं है कि माता पिता छोटे बालकों के पालन पोषण के विषय को ध्यान पूर्वक पढ़ें और सीखें॥

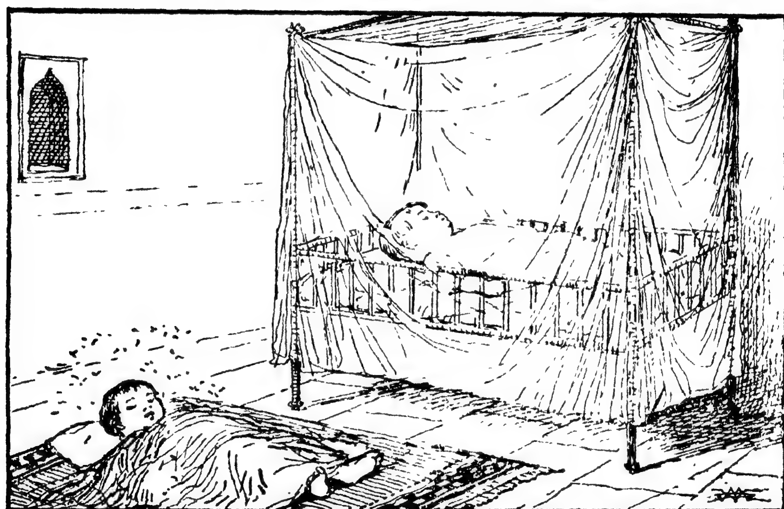
आरोग्य बालक।

स्वस्थ्य बालक उत्पन्न होने के समय ६ या ८ पौंड वज़न में होना चाहिये। बहुधा वह इस से अधिक भारी होता है। पहिले हफ़्ते में उत्पन्न होने के पश्चात् कुछ भी बढ़ती नहीं होती है, परन्तु प्रथम छः महीने में बालक को प्रति सप्ताह ४ औंस की औसत से भारी होना चाहिये और इस के पश्चात् के छः महीनों में प्रति सप्ताह वज़न में ४ औंस से कुछ कम वृद्धि होनी चाहिये। दूसरे वर्ष में बालक को प्रायः वज़न में छः पौंड प्राप्त करना चाहिये॥

४ थे अध्याय में वह समय बताया है जब दांत निकलने चाहियें॥

१० महीने की आयु होने पर एक बालक को अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिये और बारह महीने की आयु में बालक को थोड़ा थोड़ा चलना चाहिये॥

जब बालक उत्पन्न होता है तो उस की खोपड़ी में दो "कोमल स्थान" (fontanels) होते हैं एक तो माथे के ज़रा ऊपर होता है और दूसरा खोपड़ी के पीछे। यह दूसरे महीने के अन्त में बन्द हो जाता है, और सामने का प्रायः १८ महीने में बन्द हो जाता है, यदि इन दोनों में से एक भी



मच्छर-दानी में सोने से बालक प्रसन्न और स्वस्थ्य रहता है॥

कोमल स्थान रह जाय और बालक दो वर्ष का हो चुके तो यह बहुधा इस कारण से होगा कि बालक को पूरा, पर्याप्त भोजन प्राप्त न हुआ या यह कि उसे "सूखे" का रोग है॥

स्वस्थ्य बालक एक दिन में कई बार रोएगा। बालक जब भूखे भी नहीं होते और उन्हें कुछ भी नहीं हुआ है तब भी रोते हैं। यदि बालक कभी न रोए तो जान लो कि वह रोगी है। इस रोने से वे अपने शरीर के स्नायुओं का व्यायाम करते हैं॥ इस कारण बालकों का रोना स्वाभाविक है।

सो जब जब वह रोए तब तब माता को उसे दूध पिलाने का अभ्यास न डालना चाहिये॥

बालक की रक्षा।

बड़ी माता या चेचक या शीतला ऐसा रोग है जिस से सहस्रों बालक प्रति वर्ष काल के गाल में चले जाते हैं, इस कारण प्रत्येक बालक को ३ महीने का होने के पूर्व ही टीका लगवाना चाहिये। यदि अड़ोस पड़ोस में माता निकल रही है तो बालक को उत्पन्न होने के एक या दो सप्ताह पश्चात् ही टीका लगवा लेना चाहिये॥ (देखो अध्याय ४०)

अपने जीवन के पहिले हफ़्तों में स्वस्थ्य बालक प्रायः सम्पूर्ण समय सोएगा। बालक के लिये एक विश्रामदायक पलंग तैयार कराना चाहिये, एक बांस की बनाई हुई टोकरी बालक के लिये उत्तम पलंग बनती है। इस को मच्छरदानी से ढांको कि बालक के मुंह और नेत्रों पर मक्खियां न बैठें।



बालक कठरे में।

मक्खियों के द्वारा आंखें आती हैं, और त्वचा पर सूक्ष्म २ फुंसी उठ आती हैं, और इन के द्वारा ही बच्चे को दस्त भी आते हैं। जब बच्चा सोवे तब उस का सिर न ढांको। बालक को अधिक ताज़ी वायु की आवश्यकता है सो उस के पलंग के निकट जब वह सोता है पर्दे न खींचो पर खिड़कियों को खोल दो या उस को बाहर साये में, जहां पर सूर्य्य से खूब रक्षित हो, रक्खो॥

छोटे बालक को खूब स्वच्छ रखना आवश्यक है, उसे समय समय पर स्नान कराओ। माताएं जो भली भांति बालकों का पालन पोषण

करना जानती हैं उन को प्रति दिन स्नान कराती हैं। यदि सम्पूर्ण शरीर को प्रति दिन स्नान न कराओ तो भी शरीर के उन अवयवों को जो मल मूत्र से मैले हो गये हैं प्रति दिन स्वच्छ करना चाहिये॥

बालक को फ़र्श या भूमि पर लेटने या बैठने न देना चाहिये। फ़र्श या भूमि मैला स्थान है, छोटे बालक जो फ़र्श पर बैठते या लेटते हैं अपने हाथों को फ़र्श पर रखते हैं और मैले कर देते हैं फिर उन्हीं हाथों को मुंह में डालते हैं, न केवल यह ही परन्तु बहुधा भूमि पर से मैले टुकड़ों को भी उठा लेते हैं और उन्हें अपने मुंह में डालते हैं। इस प्रकार से बालक को दस्त आने लगते हैं और आंतों में कृमि पड़ जाते हैं। चांवल की भूसी को या बांस की चटाई फ़र्श या भूमि पर डालो और बालक को उस पर रक्खो। यदि बालक सात या आठ महीनों का है तो वह घुटने २ फिरेगा, तो एक छोटा कठरा बनाओ, इसे चटाई पर रक्खो और बालक को कठरे में रक्खो॥

बालक को "चुसनी" न दो, जब बालक पांच या छः महीने का हैं तो एक चमचा या कोई दूसरी स्वच्छ और कड़ी वस्तु दो जब कि दांत निकलते हैं। ये उसे काटने के लिये दो। कुछ चिन्ता नहीं जो वस्तु बालक को चबाने के लिये दी जावे वह समय २ पर उबाली जाय और स्वच्छ रहे॥

लंगोट (diapers) के लिये स्वच्छ कपड़ों का उपयोग करो। मैले कपड़े जब उपयोग किये जाते हैं तो न केवल दुर्गन्ध ही आती है वरन् वे उस के मूत्र स्थान के अवयवों में खुजली उत्पन्न करते हैं॥

लड़के के विषय में लिङ्ग के सामने की चमड़ी को समय २ पर उतार कर या पीछे खसका कर साफ़ करना आवश्यक है और लिङ्ग की सुपारी को भी साफ़ रखना चाहिये। यदि चमड़ी खसके नहीं तो उसे योग्य डाक्टर के पास लेजा कर चमड़ी को फैलवाओ कि वह सरलता से खसक सके, लड़की के मूत्र स्थान की सलवट और दरार को भी देखना चाहिये और उसे समय २ पर धोओ॥

कपड़े पहिनाते समय बालक के चूतड़ों और मूत्र स्थानों को ढांके रहो। अति सभ्य देशों में यह रिवाज है कि बालक नंगे या इस प्रकार के कपड़े पहिने हुए न फिरें कि जिस से उन के चूतड़ और मूत्र-स्थान दिखाई दें। उन को इस प्रकार के कपड़े पहिनाने से न केवल बार २ ठण्ड लगती है परन्तु इस से दुराचार की ओर भी चाह होती है॥

बालक का भोजन।

स्वस्थ होने और शीघ्र बढ़ने के लिये बालक को भोजन और वह भी अधिक मात्रा में मिलना चाहिये। माता को खूब स्वच्छ और अधिक पौष्टिक भोजन करने चाहियें कि अच्छा दूध उतरे और बालक की आवश्यकता पूरी हो जाय॥

पहिले दो या तीन महीनों लों बालक को प्रत्येक दूसरे घण्टे पर दूध पिलाना चाहिये और इस से शीघ्र न पिलाना चाहिये। १० बजे रात को पिलाओ और फिर प्रातः काल लों न पिलाओ। धीरे २ दूध पिलाने का समय बढ़ाओ। जब बालक ३ वा ४ महीनों का हो उस समय से ले के उसे प्रत्येक ३ घण्टे में दूध पिलाओ और उसे रात को बिलकुल भी न पिलाओ। यदि बालक भोजन के समय से प्रथम रोता है तो कुछ गर्म पानी जो पहिले उबाला हुआ हो पिलाओ। एक बालक को दिन में कई बार पानी पिलाना चाहिये। वह बालक जिसे पानी न पिलाया जावेगा उस का मुंह पक आएगा॥

माता को अपनी छाती की कोरें बार २ धो के थोड़े ठण्डे पानी से स्वच्छ रखनी चाहियें॥

छः वा आठ महीने के पूर्व माता के दूध के अतिरिक्त और कुछ न खिलाना चाहिये क्योंकि उस की पाचन शक्ति चांवल, मांस और ऐसे भोजनों को पचा नहीं सकती है॥

जब बालक छः से आठ महीने का हो और माता को पूरा पर्याप्त दूध न होता हो तो बच्चेको कुछ शुरुआ बना कर या पतला दलिया बना कर खिलावें। धीरे २ जब आमाशय भोजन को ग्रहण करने योग्य हो जावे तो एक बार वा अधिक बार उसे दलिया वा अध-कच्चा उबला अण्डा प्रति दिन दिया जावे। अण्डे को इस प्रकार से दो कि पके हुए चांवल के पानी में जब वह गर्म हो कच्चा अण्डा डालो। चांवल का पानी बनाने के लिये उसे दो घण्टे पकाना चाहिये॥

दलिया ऐसे पकाया जावे कि आटे को ले के एक पकाने के बर्तन में डालो और उसे भूनो कि हलका भूरा रंग हो जाय तब उसे छानो,लेई के समान पकाओ कि पतला और खूब पके, आधे घण्टे या और अधिक पकाओ। इस में बकरी का दूध या गाय का दूध गर्म करके वा दूसरे टीन का दूध बना के मिलाया जावे। जैसे जैसे बालक बढ़ता जावे तो थोड़ा उबला या भूना हुआ आलू भी उसे खाने को देना चाहिये॥

बालक को कोई गरिष्ठ भोजन, जैसे मांस, साग, तरकारी, कच्चे खरबूज़े और केले न दो। बालक को जब लों दांत चबाने को न निकल आवें गरिष्ठ भोजन खाने को कदापि न देना चाहिये॥

माता कभी अपने मुंह में पहिले भोजन ले के चबावे तो फिर उसे बच्चे के मुंह में न डाले। ऐसा करने से बालक का अवश्य मुंह आ जायगा या पाचन शक्ति के अवयवों में कुछ रोग हो जायगा या कोई असाध्य रोग बालक के शरीर के दूसरे अवयवों में हो जावेगा। इस कारण कभी बालक को खिलाने में यह विधि काम में न लाओ॥

पक्के फलों का अर्क़ बालक के लिये अति उत्तम है। वे न केवल बालक का पोषण करते हैं वरन् इन के द्वारा अजीर्ण और दस्त नहीं होते। नारंगी का सत सब से उत्तम है और प्रति दिन देना चाहिये। फल को पहिले उबलते पानी में, अर्क़ निचोड़ने के पूर्व, कुछ सेकण्ड के लिये डालो। बालक को दूध पिलाने के साथ ही यह न दो पर दूध पिलाने के एक घण्टा पश्चात् दो॥

यदि माता जो बालक को दूध पिलाती है कुछ दस्त की औषधि ले तो औषधि का कुछ भाग उस दूध में मिल जायगा जो बालक पीता है और बालक का कोठा भी साफ़ कर देगा। इस से यह विदित होता है कि माता को कोई ऐसी वस्तु न खानी चाहिये जिस से बालक को हानि हो। यदि वह तम्बाकू पीती या और कोई नशे की वस्तु, मदिरा, पीती है तो बालक को अधिक हानि होगी। क्रोध का भी प्रभाव माता के दूध पर होता है और कभी २ बालक रोगी हो जाता है किसी और कारण से नहीं वरन् केवल इस से कि माता को क्रोध आया था॥

दूध पिलानेवाली दाई।

यदि बालक उत्पन्न होने के पश्चात् माता रोगी है और बालक को दूध पिला नहीं सकती तो एक दूध पिलाने वाली दाई ढूंढनी चाहिये। जब दूध पिलाने वाली दाई चुनते हो तो देखो कि उसे तपेदिक़ या गर्मी का रोग न हो। यदि बालक दूध पिलानेवाली दाई के दूध से हृष्ट पुष्ट नहीं होता है तो उसे बदल कर दूसरी दूध पिलानेवाली दाई प्राप्त करो॥

ऊपर का दूध

जब माता दूध न पिला सके और दूध पिलानेवाली दाई न मिले तो यह आवश्यक है कि बालक को बोतल से दूध पिलाया जावे। बकरी का

दूध व गाय का दूध यदि ताज़ा और स्वच्छ मिल सकें तो माता के दूध के बदले उत्तम होते हैं। बहुत से उष्ण देशों में यह कठिनाई होती है कि अच्छी दूध वाली गाय कम होती है और दूध स्वच्छ नहीं होता है और यदि स्वच्छ भी हो परन्तु गर्मी के कारण शीघ्र बिगड़ जाता है। और भिन्न भिन्न गायों के दूध के गुणों में भी बड़ा अन्तर होता है और जिस प्रकार का भोजन गाय को मिलता है उसी प्रकार से उस का दूध भी बदलता है। उन देशों में जहां ऋतु लगातार गर्म रहती है तो यह अत्यावश्यक है कि गाय के दुहने के तीन या चार घण्टे भीतर दूध लाया जावे। ज्योंही दूध आता है त्योंही उसे एक स्वच्छ ढकनेवाले बर्तन में रक्खो इस को एक बड़े बर्तन में जिस में कुछ पानी है रक्खो और तब चूल्हे पर चढ़ाओ। छोटे बर्तन का दूध उबलता नहीं है पर इतना गर्म हो जाता है कि रोग के कीड़े मर जाते है इस प्रकार से आधे घण्टे गर्म करने के पश्चात् उसे शीघ्र ठण्डा करो। यदि इस प्रकार से करना असम्भव है तो दूध को कुछ समय लों उबालो (पीतल या तांबे के बर्तनों में कुछ समय लों दूध को न रहने दो क्योंकि दूध का प्रभाव धातु पर पड़ कर एक विष बन जाता है जिस से स्वास्थ्य की हानि होती है)* उस बालक को जो एक सप्ताह का है ८ औंस दूध और ४ औंस उबला पानी और आध औंस चूने का पानी (Lime water) मिलाओ तब दो तिहाई औंस दूध की शक्कर मिलाओ और खूब चलाओ। इतना एक दिन के भोजन के लिये बस होगा। इस को कुछ मिनिट उबाल कर एक स्वच्छ बड़ी बोतल में डाल के ठण्डे स्थान पर रक्खो। बालक को डेढ़ औंस इस में से ले के प्रत्येक दो घण्टे पश्चात् दिया करो। जब गर्मी की ऋतु हो दो पहर में उबाल कर तीसरे पहर के भोजन के लिये रखना आवश्यक होगा। यदि ऐसा न करोगे तो रात होने के पूर्व दूध बिगड़ जायगा और बालक को रोगी करेगा॥

यदि दूध की शक्कर (milk sugar) न मिल सके तो आधा भाग गन्ने की शक्कर (साधारण शक्कर) को दूध की शक्कर के बदले उपयोग करो। गन्ने की शक्कर कभी २ अति छोटे बालकों को अपथ्य होती है॥

एक बालक को प्राय: पहिले ३ या चार सप्ताहों के लिये दो औंस दूध प्रति दो घण्टे पश्चात् आवश्यक है सो निम्न लिखित के अनुसार १६ औंस एक दिन के भोजन के लिये बनाओ॥

---

* सूचना :—पीतल तांबे के पात्रों में दूध न रखना चाहिये क्योंकि दूध का प्रभाव धातु पर पड़ने से एक प्रकार का विष बन जाता है जो स्वास्थ्य को हानिकारक है। सम्पादक॥

साढ़े नौ औन्स दूध, साढ़े छः औन्स उबला पानी, २ चाह के चमचे भर चूने का पानी (लाइम वाटर, Lime Water) और १ औन्स दूध की शक्कर (या आध औन्स साधारण शक्कर)। [चूने के पानी के लिये देखो चिकित्सा २१ नम्बर, अध्याय ५०] ॥

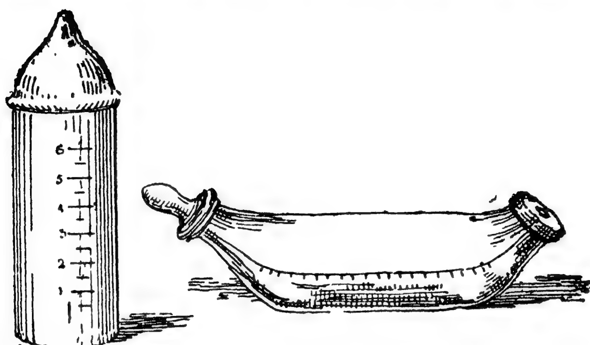
ज्यूं ज्यूं बालक बढ़ता जाये तो धीरे धीरे दूध का भाग बढ़ाते जाओ, कि जब वह तीन महीने का हो तो दिन भर में उसे ३२ औन्स दूध आवश्यक होवे इस को तयार करने के लिये ऊपर के वाक्य में जितना भाग बताया गया है, भोजन बनाने के लिये, उस का दुगना बनाओ ॥

जब बालक ३ महीने से ६ महीने का हो तो प्रत्येक बार भोजन में पांच से सात औन्स दूध होवे, और दिन में सात बार पिलाया जावे, और ४० से ५० औन्स दूध आवश्यक होगा। पचास औन्स भोजन बनाने के लिये ३० औन्स गाय का दूध लो, और २० औन्स चांवल का पानी और तीन औन्स दूध की शक्कर (या डेढ़ औन्स साधारण शक्कर)। बालक को ६ महीने की आयु से १२ महीने की आयु लों प्रति दिन ५० से साठ औन्स भोजन आवश्यक होगा। ६० औन्स भोजन बनाने के लिये ३६ औन्स गाय का दूध लो, २४ औन्स चांवल की मांड़ लो और साढ़े तीन औन्स दूध की शक्कर (या पौने दो औन्स साधारण शक्कर) चाहिये ॥

उपरोक्त वर्णन द्वारा विदित हो गया है कि गाय का दूध बालक के अनुकूल किस प्रकार से बनाना चाहिये। तीन महीने की आयु से लगा कर एक स्वस्थ्य बालक के लिये ऊपर के बताये हुए से कम अंश जल मिलाना चाहिये और दूध का अंश बढ़ाना चाहिये। यदि दूध अच्छा खालिस न हो तो उस में कुछ भी पानी मिलाना आवश्यक नहीं। यदि बालक हृष्ट पुष्ट न हो तो एक योग्य डाक्टर की सम्मति उस के भोजन बनाने के विषय में ले लो॥

दूध के टीन के ऊपर, खोलने के पूर्व, उबलता पानी डालो। एक छोटा सा छेद टीन में करो। जितना दूध आवश्यक हो निकालने पश्चात् एक स्वच्छ कटोरे को उल्टा के टीन के ऊपर रखदो कि धूलि दूध में न पड़े। गर्मी की ऋतु में जिस दूध में शक्कर नहीं डाली है वह दिन भर से अधिक नहीं रक्खा जा सकता है। टीन का दूध सदैव स्वच्छ ठण्डे स्थान में रखना चाहिये (देखो पृष्ट १५८ का विभाग चक्र और सूचना)॥

चित्र में दूध पिलाने की उचित बोतलें बताई गई हैं। बोतल को स्वच्छ रखना चाहिये। उपयोग करने के पूर्व प्रत्येक बार रबर की चुसनी को निकालो और बोतल को भीतर बाहर अच्छी रीति से धोओ। ऐसा धोओ कि दूध का नाम मात्र भी बोतल में न रहे। रबर की चुसनी को भी धोओ। बोतल और रबर की चुसनी को एक स्वच्छ पतले कपड़े में लपेटो।



दूध पीने की स्वच्छ बोतलों के दो प्रकार।

इन को एक बर्तन में जिस में बोतल के ढकने तक ठण्डा पानी हो रक्खो और इसे गर्म करो जब तक कि पानी न उबले। पानी को कई मिनिट तक उबलने दो। यदि बोतल और रबर की चुसनी भीतर से उबले पानी से अच्छी रीति से धुली है तो उस को सम्पूर्ण दिन में केवल एक ही बार उबालना आवश्यक है। बहुत बच्चों को जब वे दस या ११ महिने के होते हैं तो चमचे से पिलाते हैं। परन्तु यदि चम्मच का उपयोग करो तो भोजन, कटोरा और चमचे को अति ही स्वच्छ रक्खो॥

अजीर्ण।

एक स्वस्थ्य बालक को प्रति दिन एक से चार बार टट्टी होती है। परन्तु दो या तीन महिने के बालक को बहुधा दो बार प्रति दिन टट्टी उतरती है। यदि प्रति दिन बच्चा एक या दो बार टट्टी न करे तो उस के अजीर्ण के लिये चिकित्सा करो। विलम्ब न करो, बालक के अजीर्ण की तुरन्त चिकित्सा करो। यदि यह न करोगे तो बालक अधिक रोगी हो जायगा निम्न लिखित उपायों में से एक या अधिक का उपयोग करोः—

१. भोजन में चिकनाई का अंश बढ़ाओ॥

२. बालक को पीने को अधिक पानी दो, पानी उबला हुआ हो और गर्म भी हो॥

३. नारंगीका सत या और किसी फल का सत प्रति दिन दो॥

४. एक कड़ा सफ़ेद साबुन का टुकड़ा काम में लाओ इसे गौदुम नोकीला बनाओ उस का पतला बारीक छोर ऐसा हो जैसे सीसे की पेन्सिल का छोर, यह दो इंच लम्बा हो, और मोटा छोर गोलाई में आध इंच से ज़रा अधिक हो। प्रत्येक भोर के नियत समय पर यदि आप से आप टट्टी न उतरे तो इस साबुन के टुकड़े के सिरे पर कुछ तेल वा वेसेलीन लगा कर गुदा के छेद में आधा घुसा दो और कुछ सेकण्ड लों वहीं घुसा रक्खो तब निकल जाने दो। बहुत दशाओं में खुल के टट्टी होगी॥

दस्त (Diarrhœa)।

यदि बालक को बार २ दस्त पतले पानी समान हों और उन में दुर्गन्ध हो तो यह दस्त का रोग है। इस कारण बहुत सी दशाओं में जब दस्त आवें तो एक दिन लों साधारण भोजन बन्द कर दो और बालक को केवल चांवल के मांड और गर्म पानी पर रक्खो। यह मांड या चांवल का पानी ऐसे बनता है कि थोड़े से चांवल बहुत से पानी में डाल कर तब तक उबालो जब तक कि चांवल के दाने ख़ूब घुल न जायें, तब एक पतले कपड़े में डाल कर छान डालो, पानी शेष रह जायगा बाक़ी सब निकाल कर बाहर करो। सब भोजन या पानी जो बालक को देते हो स्वच्छ होना चाहिये। यदि ऐसा करने से दस्त बन्द न हों तो जो उपाय आगे अध्याय में दिये जायेंगे उन को करो॥



छोटे बालकों को दस्त आने (Diarrhoeas) के रोग।

कई रोगों का मुख्य लक्षण दस्त आना है, जैसे कि साधारण दस्त आना, तीक्ष्ण अजीर्ण या बालविसूचिका। परन्तु इस लिये कि उन के कारण और चिकित्सा बहुत कुछ एक सी होती है उन का वर्णन इस अध्याय में किया जायगा॥

प्रति वर्ष दस सहस्र बालकों की मृत्यु किसी न किसी प्रकार के दस्त के द्वारा होती है। यह रोग कृमि द्वारा उत्पन्न होता है। छोटे बालक की पाचनक्रिया के अवयव इतने निर्बल होते हैं कि वे इन रोग-कृमि को नाश नहीं कर सके हैं। यह तो सब को प्रकट है कि छोटे बालक को मारने के लिये थोड़ा सा विष पर्याप्त होगा पर पूरे मनुष्य को मारने के लिये उस से कुछ अधिक विष प्रर्याप्त होगा। इस लिये कि यह सत्य है, थोड़ा सा मैला या बिगाड़ या अपथ्य भोजन खाने से यदि पूर्ण मनुष्य को केवल थोड़े से दस्त ही होवें परन्तु एक नन्हे बालक पर इस का प्रभाव भयंकर होगा और कदाचित् बालक की मृत्यु भी हो जाय। बहुतेरे लोग इस बात की चिन्ता नहीं करते हैं, सो वे बिना सोचे वा समझे प्रत्येक प्रकार का भोजन अति छोटे बालकों को दे देते हैं इस विचार से कि बच्चा भी वही भोजन खा सकता है जिसे पूर्ण मनुष्य पचन करसके हैं॥

दूसरा कारण जिस से नन्हे बालकों को दस्त आते हैं यह है कि वे मुख्य कर के दूध पीते या किसी प्रकार का पतला खाना खाते हैं जिस में रोग-कृमि अति शीघ्र वृद्धि करते हैं॥

तीसरा कारण जिस से दस्तों का रोग बालकों में बहुधा होता है यह है कि उन को शीघ्र ही ठण्ड लग जाती है। और प्रायः जब बालक को ठण्ड लग जाती है तो सदा दस्त आने लगते हैं। गर्मी की ऋतु में भी बालक को ठण्ड लग जाती है। सो इस कारण से रात को किसी वस्त्र से उस का आमाशय ढका रखना चाहिये॥

दस्त से नन्हे बालक इस लिये शीघ्र मर जाते हैं कि उन में बहुत थोड़ी शक्ति होती है। दस्त आने में भोजन नहीं पचता है वह महास्रोत में से निकल जाता है और उस का कुछ भी अंग रक्त में प्रवेश नहीं करता है कि शरीर को गर्म रक्खे और बल दे जिस से शरीर बढ़े। इस कारण कि दस्त के रोग में जो भोजन बालक खाता है उस से कुछ शक्ति तो प्राप्त नहीं करता है परन्तु उस से शरीर का रस अधिक चला जाता है। इसी से दस्तों में मल (पाखाना) अति पतला और पानी के समान होता है॥

ऐसी दशाओं के कारण नन्हे बालकों का "दस्त रोग" साधारण बात न समझनी चाहिये परन्तु ज्यों ही पतले पानी सरीखे दस्त आवें त्यों ही तुरन्त इस के मुख्य रोग पर विचार करके चिकित्सा करनी चाहिये॥



उचित रीति। अनुचित रीति।

दस्तों की रोक करना

सुशिक्षित माता पिता को दस्तों के कारणों का ज्ञान होने से, कि यह किन कारणों से छोटे बच्चों को होते हैं, उन की रोक के उपाय करने चाहियें॥

आस पास के स्थानों का मैलापन

प्रथम तो बालक को कभी मैले फ़र्श या गली में घुटने घुटने चलने या बैठने या लोटने न देना चाहिये। फ़र्श मुख्य करके मिट्टी के या ईंटों के

अति मलीन होते हैं वे अति मैली धूलि से और मैल से जो गली में या पाखाने में जाने से जूती में लग जाती हैं मैले होते हैं और यदि घर में पशु हैं तो ये फ़र्श के मैलेपन को और भी अधिक कर देते है॥

वे बालक जिन का पोषण मैले घरों में होता है बहुधा दस्त के रोग से रोगी हो जाएंगे। घर के फ़र्श को झाड़ कर स्वच्छ रक्खो, कोनों को झाड़ो और सामान के नीचे भी झाड़ो। यदि फ़र्श मिट्टी का या ईंटों का हो तो सामान के नीचे और भीतों के किनारे चूना कूट कर छिड़क दो। मुर्ग़ी के बच्चे और पशुओं को घर के भीतर न आने दो। कभी बालक को कमरे के फ़र्श पर मल मूत्र न करने दो। यदि फ़र्श भूमि के ऊपर बिछे हैं तो फ़र्श के नीचे की भूमि स्वच्छ रखनी चाहिये। धोने का पानी और मैला पानी फ़र्श पर न फेंकना चाहिये। आंगन को बार २ झाड़ कर स्वच्छ रक्खो। सड़ी बुसी चीज़ों का ढेर, मैले कचड़े का ढेर, मैली नालियां जो आंगन में होती हैं इन में लाखों लाख रोग-कृमि उत्पन्न होने के स्थान बन जाते हैं। छोटे बालक आंगन में घुटने २ चलते और दौड़ते हैं यूं उन के शरीर में ये रोग-कृमि प्रवेश कर लेते है॥

मक्खियां दस्त का रोग फैलाती है।

मक्खियां बालकों को मारती हैं। वे ऐसे मारती हैं कि मल के ढेर, मैले कचड़े के ढेर और प्रत्येक प्रकार की मैली जगह से मैल व रोग-कृमि लाती हैं और भोजन पर जो बालक खाता है रख देती हैं। जब बालक का भोजन पकाया जाए तो वह मक्खियों से रक्षित रहे, क्योंकि जब मक्खी बच्चे की दूध पीने की बोतल की चुसनी पर बैठती है या उस भोजन पर जो वह खाता है तो वह मैल और विषैले रोग-कृमि छोड़ जाती है। बालक इन को निगलता है। फलतः तुरन्त घोर दस्त होने लगते हैं। मक्खियों के विषय में ४८ वें अध्याय में बताया गया है कि उन को कैसे नाश कर सक्ते हैं॥

मैला दूध और दूध पीने की मैली बोतलें

२५ वें अध्याय में वर्णन किया गया है कि रोग-कृमि को नाश करने के लिये दूध उबालना उचित है। यदि बालक का भोजन उबालने से स्वच्छ हो गया है तो उसे ढकनेवाले बर्तन में रखना चाहिये। और यदि दूध पिलाने की बोतल और चुसनी बार २ उबालने द्वारा स्वच्छ हैं तो बहुत से दस्त के रोग और दूसरे रोगों की रोक होगी॥

अपथ्य भोजन और कुसमय पर खिलाना।

बालक को मिठाई या केक, पकवान देने से रोना थोड़े समय लों बन्द हो जायगा, परन्तु पीड़ा और दस्त जो इन पदार्थों के खाने से प्रायः निश्चय पूर्वक होंगे उस से वह कई घण्टों तक रोयेगा। और बहुधा इस से वह बालक मर भी जायगा। मक्खियां मिठाई और पकवान की अति चाहक हैं और वे इन पर बैठती और इन्हें खाती हैं॥ और अपने शरीरों का मल छोड़ जाती हैं और वह मल भी जो उन की टांगों और पैरों में है छोड़ जाती हैं। मिठाई, पकवान आदि पदार्थ न केवल मक्खियों द्वारा मैले होते हैं परन्तु गली की धूलि और मिठाईवाले के मैले हाथों से भी मैले हो जाते हैं। तो केवल एक ही उपाय इस से बचनेका है कि इस प्रकार की वस्तुएं जो मिठाईवाले से लाते हो उन्हें बच्चे को देने से पहिले उबाल डालो और यदि उबाल नहीं सक्ते हो तो बालक को खाने को कदापि न दो। ये पदार्थ जब कुसमय पर बालक को दिये जाते हैं तो और भी अधिक या दुगने हानिकारक हो जाते हैं। प्रत्येक बालक को नियत समय पर भोजन देना चाहिये और उसे भोजन के नियत समय के बीच में कभी भी खाने को न देना चाहिये॥

असाध्य दस्त दूध पीते बालक को माता के किसी रोग के कारण भी आने लगते हैं या माता के कोई औषधि खाने या कोई इस प्रकार का भोजन खाने या पीने से दूध के गुण में अन्तर पड़ जाता है। छाती का दूध पीनेवाले बालक के विषय में जिसे दस्त आवें उस की ठीक चिकित्सा करने में पहिले यह देखना पड़ेगा कि माता तो रोगी नहीं है या उस ने कोई ऐसी औषधि तो नहीं पी है या ऐसा भोजन तो नहीं खाया है जिस से बालक को दस्त आ गये हैं॥

नन्हे बालकों में दस्त की उपचार-चिकित्सा।

यदि दस्त-रोग की उचित औषधि करो तो तीन बातें करनी चाहियें वे ये हैं:—

१. समस्त दूध का भोजन बन्द करो जब तक कि दस्त न रुकें॥

२. खूब पानी पीने को दो॥

३. महास्रोत को स्वच्छ करो॥

चिकित्सा के कुछ थोड़े और भी उपाय हैं और यदि आवश्यक हो तो इन ऊपर लिखे उपायों के अतिरिक्त दूसरे उपाय भी करो पर ये तीन जो ऊपर बताये हैं आरम्भ में अति मुख्य हैं॥

यदि बालक जिसे दस्त का रोग है दूध पीता है तो कम से कम एक दिन के लिये उसका दूध बन्द कर दो, उस बालक का जिसे दस्त आते हैं आमाशय और आंतें दूध को नहीं पचा सकती है। दूध जो पचा नहीं है वह महास्रोत में पड़ा रहता है और दस्त के रोग-कृमि का भोजन हो जाता है इस से और विष उत्पन्न होता है॥

दूध पिलाने के बदले बालक को चांवल का पानी पिलाओ (देखो अध्याय ५०, उपचार, चिकित्सा नम्बर २५), अण्डे की सफ़ेदी का पानी (देखो अध्याय ४७, अण्डे की सफ़ेदी) और ज़रा नारंगी का अर्क़ या सत पिलाओ। बालक को जब तक कि दस्त न रुकें दूध न पिलाओ और रुकने पर जितना पहिले पीता था उतना न दो पर थोड़ा थोड़ा दो॥

द्रव्य पदार्थ अच्छी तरह पिलाओ क्योंकि दस्त-रोग में जब दस्त होते हैं तो बालक के शरीर से बहुत सा पानी निकल जाता है। यह द्रव्य पदार्थ उस के रक्त में से आता है सो बहुत सा गर्म उबला हुआ पानी उसे पिलाना चाहिये। साधारण जल की अपेक्षा कभी २ चांवल का पानी भी पिलाओ॥

क़य और दस्त से यह विदित होता है कि बालक का शरीर कुछ मल निकाल फेंकना चाहता है जो उस के महास्रोत में हानि कर रहा है। सड़ा और अपथ्य भोजन बालक के महास्रोत में से क़य और दस्त कराता है ठीक जैसे कि यदि मिर्च आंख में पड़ जाय तो आंख में आंसू आते हैं और शीघ्र फड़कने लगती है ताकि मिर्च आंख से बाहर निकले। सो महास्रोत को स्वच्छ करने में सहायता देने के लिये प्रत्येक आधे घण्टे में इतना पानी जितना उसे पिला सके हो पुचकार के पिलाओ। यह पानी महास्रोत में जाता है और उसे स्वच्छ करता है। एक सेर पानी में आधा चाय के चम्मच भर नमक मिला दो। बालक को पिचकारी दो (देखो अध्याय २०) और पिचकारी में यही नमक मिला पानी दो, प्रत्येक दस्त होने के पश्चात्। पिचकारी का जल गर्म हो (१०५ F. डिग्री उष्ण), चिकित्सा आरम्भ करने के पूर्व एक चाय के चम्मच भर अरंडी का तेल (castor oil) पिला दो यदि बालक चार या पांच वर्ष का है तो दो चाय के चम्मच भर के अरंडी का तेल पिला दो। आमाशय पर प्रत्येक तीन घण्टे सेकन सेवन करो। बालक चुप चाप पलंग पर पड़ा रहे। किसी दशा में उसे उठने न दो, क्योंकि कोई सा भी शारीरिक कार्य्य करने से रोग बढ़ जाएगा॥

इन उपरोक्त उपायोंको एक दिन करने के पश्चात् यह भला होगा कि दस्त-रोग को रोको सो प्रत्येक तीन या चार घण्टे में एक पिचकारी दो और नुस्खा या उपचार नम्बर ७ की एक चाय के चम्मच भर दवा प्रत्येक चार या पांच घण्टो में पिलाओ। श्वेत सार (स्टार्च Starch) वाले जल को बनाने के लिये, ताकि श्वेत सार की पिचकारी दी जाय, पहिले कुछ चमचे भर श्वेत सार (चाहे मक्का का, चाहे गेहूं या चांवल का हो) लो और उसे कुछ ठण्डे जल में मिलाओ तब गिलास भर पानी डालो और उसे उबाल डालो तब ठण्डा होने दो यह श्वेत सार पानी बिलकुल पतला होना चाहिये। पहिले दिन की नाई सेकन सेवा करनी चाहिये। पहिले दिन की अपेक्षा कम पानी दो॥

बालक के उदर पर कुछ हलका वस्त्र उढ़ाना चाहिये ताकि ऐसा न हो कि ठण्ड लग कर दस्त रोग और भी अधिक हो जाय॥

बालक को बहुधा स्नान कराना चाहिये और उस का बिछौना स्वच्छ रक्खो, बालक को मच्छरदानी के भीतर रखना चाहिये कि मक्खियां उस से दूर रहें। घर के शेष बालकों को वे चम्चे और थालियां न उपयोग में लाने दो जिन को रोगी ने उपयोग किया है। रोगी की उपयोग की थालियां और चमचे उपयोग करने के पश्चात् उबाल डालने चाहियें॥

दस्त रोग आंतों में विषैली और विकार करनेवाली वस्तुओं के प्रवेश करने द्वारा होता है। समाचार पत्रों में जो औषधियां छापी जाती हैं कभी न देनी चाहियें क्यों कि वे दस्तों को तो शीघ्र बंद कर देती हैं परन्तु उन के कारण को दूर नहीं करती हैं। वह विषैली वस्तु जो दस्तों का कारण थी और जो अब लों आंतों में है फिर दूसरी बार रोग उत्पन्न करेगी और दूसरे समय जो दस्त रोग होगा वह पहिले से अति असाध्य होगा। इस रोग से चंगा होनेका सब से उत्तम उपाय यह ही है कि उस विषैले पदार्थ को जिस के कारण यह रोग उत्पन्न हुआ निकाल दो॥

सूचनाः—टीन के दूध और पानी मिलाने के विभाग चक्रः—यदि गाय या बकरी का दूध मिलना असम्भव हो तो टीन का जमा हुआ दूध उपयोग करना पड़ेगा। टीन के दूध दो प्रकार के होते हैंः—मीठा जैसे नेसलज़ ब्रान्ड (Nestle's Brand), ईगल ब्रान्ड (Eagle Brand) और मिलकमेड ब्रान्ड (Milkmaid Brand); या मिठास रहित दूध, जब बालक

को पिलाने के लिए ये दुध लो तो मीठा और मिठास रहित नीचे के चक्र के अनुसार मिलाओ जिसे डाक्टर होल्ट ने अपनी पुस्तक "बालकों के भोजन और पालन पोषण" चीनी भाषान्तर, में दिया है ॥

बालक की आयु	२ दिन	३ दिन	४ दिन	५ दिन	६ दिन	७ दिन	२ से ४ सप्ताह तक	४ सप्ताह से ३ महीने तक	३ से ६ महीने तक	६ से ९ महीने तक	९ से १२ महीने तक
मीठे दुध का भाग	१ भाग	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
मिठास रहित दुध का भाग	३ भाग	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
उबला हुआ जल	६० भाग	५० भाग	४० भाग	३० भाग	२४ भाग	२० भाग	१६ भाग	१२ भाग			
चांवल का पानी नुसखा नम्बर २५									१२ भाग	१२ भाग	१२ भाग
प्रत्येक बार के भोजन में कितना देना चाहिये	आधा से १ औंस तक	आधा से १ औंस तक	१ औंस	१ औंस	१ से १½ औंस	१½ से २ औंस	२ औंस	३ से ४ औंस तक	५ से ७ औंस तक	७ से ९ औंस तक	८ से १० औंस तक
कितने घण्टे के पश्चात् एक एक भोजन देना चाहिये	२ घण्टे	२ घण्टे	२ घण्टे	२ घण्टे	२ घण्टे	२ घण्टे	२ घण्टे	ढाई घण्टे	३ घण्टे	साढ़े ३ घण्टे	४ घण्टे
प्रति दिन कितनी बार भोजन देना चाहिये	६ या ८	८	१०	१०	८ या १०	८ या १०	८	७ या १०	७	६	५

अध्याय २७।

नन्हे बालक और बालकों के कुछ साधारन रोग।

मुंह आना।

जब माता मूर्खता से बालक को दुध पिलाने की बोतल या उस की चुसनी को स्वच्छ नहीं रखती तो यह रोग हो जाता है। प्रत्येक बार दूध पिलाने के पूर्व और पश्चात् उंगली पर जाली या पतला कपड़ा लपेट कर और उस को बोरिक ऐसिड के लोशन में (नुस्खा नं १) भिगो कर बालक के मुंह को स्वच्छ करना चाहिये। जब बालक की आयु एक वर्ष की या अधिक हो, तो बालक के मुंह को पोटासियम क्लोरेट के पूर्ण मिश्रित लोशन से धोने से उत्तम होता है। यदि मुंह के भीतर छोटे २ स्वेत छाले निकल आवें तो भूनी हुई फिटकरी (नुस्खा नं. ८) लगानी चाहिये यदि यह रोग अच्छा होने में देर लगे तो शीघ्र किसी प्रख्यात डाक्टर के पास जाओ।

शूल या वायु शूल

जब कभी यह रोग होता है तो बालक अचानक ज़ोर से रोने लगता है। ज्यूं ज्यूं यह पीड़ा अधिक होती है त्यूं त्यूं बालक ज़ोर से रोता है और कम होती है तो चुप चाप हो जाता है। आमाशय और आंतों में वायु भर जाती है जिस से उदर तन जाता है और कड़ा हो जाता है, जिस समय यह पीड़ा आरम्भ होती है तो बालक अपनी जांघें सुकेड़ कर उदर के ऊपर खींच लेता है। शूल रोग बहुधा उन बालकों को होता है जिन्हें ऊपर का दुध दिया जाता है। इस का कारण यह होता है कि जल्दी २ खिलाते हैं या ऐसा दूध देते हैं जिस में अधिक शक्कर होती है या जो ठीक प्रकार से तैयार नहीं किया जाता है। छोटे बालकों को ऐसा भोजन देने से जो उत्तमता से पकाया न गया हो बहुधा शूल रोग हो जाता है॥

चिकित्सा उपचार

शूल जब उठे तो गर्म पानी चमचे से या बोतल से पिला देने से बहुधा लाभ होता है। कपड़े को गर्म कर के उदर को सेको यदि इस से

लाभ न हो तो बालक को एक आध सेर पानी की पिचकारी दो। पानी इस रीति से बनाओ:—आध सेर पानी में चाय के चम्मच भर नमक और दो बड़े चमचे अर्थात् १ औन्स ग्लीसरीन (Glycerine) मिलाओ यह पानी १०५ F. डिग्री लों उष्ण होना चाहिये। पिचकारी से आंतों का ऊपरी भाग तो स्वच्छ न होगा इस लिये पिचकारी के अतिरिक्त एक खुराक अरेंडी का तेल भी देना चाहिये। यदि शूल बार २ होती हो तो उपचार नं. ७ (ब) का एक छोटा चम्मच दो, तीन दिन लों दिन में दो बार देना चाहिये॥

इस लिये कि अनुचित और मैले भोजन ही से शूल उठी थी, इस के पश्चात् भी शूल को रोकने का उपाय यही है कि बालक के भोजन को स्वच्छ और उचित रीति से बनाने की ओर ध्यान दिया जावे॥

जमुगा (ऐंठन, Convulsions)

बालकों में यह रोग कई कारणों से हो सकता है, जैसे अनुचित और अपथ्य भोजन, सूखे का रोग या उदर में कृमि रोग से, शीत-ज्वर और हैज़ा। जब इस का दौरा होता है तो मुंह और हाथों के स्नायु अकड़ने व ऐंठने लगते हैं और मुंह एकाएकी पीला हो जाता है, आंखों की टकटकी बन्ध जाती है और सिर पीछे लटक जाता है, हाथों की मुट्ठी बन्ध जाती है और टांगें ऐंठन होने से ऊपर खिच आती हैं॥

चिकित्सा।

१०५ F. डिग्री की उष्णता का गर्म पानी बनाके बालक को उस में बिठाओ और उस के सिर पर ठण्डे पानी में कपड़ा भिगो के निचोड़ के रक्खो। इस कारण कि जमुगा रोग बहुधा आंतों में किसी प्रकार के सड़े या कड़े भोजन के जम जाने से होता है, उचित है कि गर्म पानी में कुछ मिनिट बिठाने के पश्चात् बालक को गर्म पानी की पिचकारी दी जाए और एक चाय का चम्मच या उस से अधिक अरेंडी का तेल दिया जावे। जो भोजन बालक को दिया जाता है उसे बड़ी सावधानी से बनाना चाहिये क्योंकि यह जमुगा का रोग बहुधा कड़े या बिगड़े भोजन से होता है। कभी कभी गाय या बकरी का दूध बन्द कर के "टीन का दूध" या किसी प्रकार का तैयार किया हुआ भोजन मोल लेना पड़ेगा। बालक के दस्त या टट्टी की ओर भी ध्यान देना पड़ेगा क्योंकि बालक को अजीर्ण रोग न होना चाहिये॥

सूखे का रोग।

यह अस्थि का रोग है जो ऊपरी दूध पीने वाले बालकों में पाया जाता है। यह बहुधा तब होता है जब बालक ६ महीने से १५ महीने तक का होता है। "सिर के कोमल स्थान" फोन्टेनेल्स (Fontanels) उचित समय पर बन्द नहीं होते, टांगों की हड्डियां टेढ़ी हो जाती हैं, उदर बढ़ जाता है बालक निर्बल और छोटा रह जाता है॥

चिकित्सा

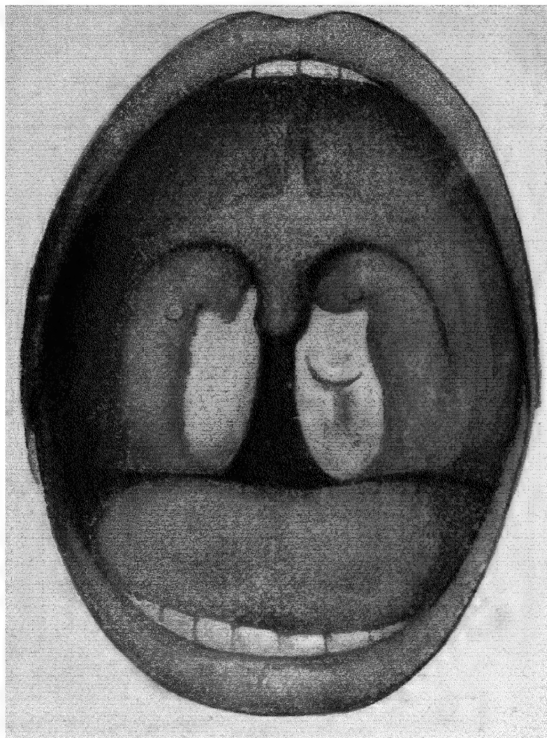
यह रोग इस कारण से होता है कि जिस प्रकार के भोजन की अस्थि बनाने के लिये शरीर को आवश्यकता होती है वह नहीं दिया गया है। इस कारण आवश्यक है कि मुख्यतः बालक को दूध अच्छा दिया जावे। दिन में कई बार फल का रस दो, दूध और अण्डे और फल का रस एक वर्ष और इस से बड़े बालकों को देना चाहिये॥

खांसी और सर्दी

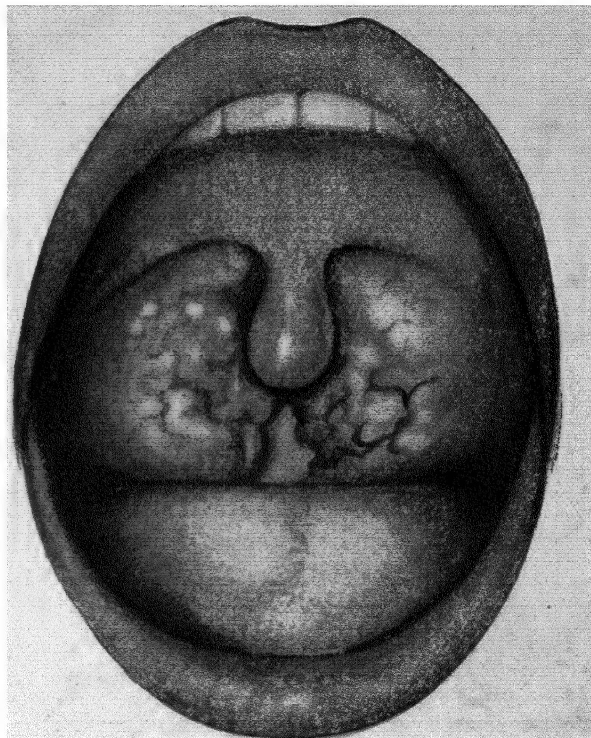
बहुत से छोटे बालकों को खांसी और सर्दी से बहुधा पीड़ा होती है। खांसी के कई कारण हो सकते हैं। इस लिये यह विचार करना भूल है कि एक ही औषधि से सब प्रकार की खांसी अच्छी हो सक्ती है। समाचार पत्रों में जितनी औषधियां खांसी को चंगा करने के लिये छापी जाती हैं उन में बहुधा अफ़ीम या मॉरफ़िआ होता है। ये अति हानिकारक होते हैं और कभी बालकों को न देने चाहियें। खांसी की उचित चिकित्सा यह है कि उस के कारण को दूर करो। खांसी के कारण ग़दूद (Adenoids) का या गलसुए (Tonsils) का बढ़ना या फूल जाना या तालू का लम्बा व कोमल हो जाना हो सके हैं। इन दशाओं में भला होगा कि किसी प्रख्यात डाक्टर के पास जाकर ग़दूद या गलसुए और तालू की चिकित्सा करानी चाहिये। खांसी सर्दी के कारण से हुई हो या फेफड़े की सिल (क्षय, tuberculosis) के कारण से हो, प्रत्येक दशा में चिकित्सा करने का मुख्य अर्थ यह होना चाहिये कि कारण को दूर करें। यदि रोग का कारण निश्चयपूर्वक ज्ञात न हो सके, तो भाप की श्वास लेने की रीति जिस का वर्णन ५० वें अध्याय में किया गया है अति सुगमता से उपयोग हो सकती है॥

सर्दी और उस की चिकित्सा।

पहिले गर्म जल की पिचकारी से (देखो २० वाँ अध्याय) आंतों को स्वच्छ कर दो, पिचकारी को देकर एक चाय के चम्मच भर अरंडी का तेल भी दो

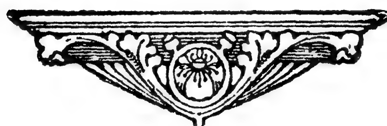


डिप्थीरिया से पीड़ित कण्ठ।
पृष्ठ नं. १६३ पर इस का वर्णन देखिये।



जब कह्वे (गलसुए) फूलें या बड़े हों तब कण्ठ की दशा।
पृष्ठ नं. २६५ पर इस का वर्णन देखिये।

(बालक अरेंडी के तेल को सुगमता से पी लेगा यदि उस में नारंगी या किसी और फल का रस मिला लिया जावे) बालक को कोई गर्म वस्तु जैसे एक या दो प्याला गर्म शुरुआ या किसी फल का रस मुख्यतः मीठी मोलम्बी का रस, पिलाओ, बालक को बिस्तर पर लिटा दो और ऐसे कमरे में रक्खो जिस की खिड़कियां खुली हों, कुछ दिन के लिये उस का भोजन कम कर दो। जब बालक को पसीना आ जावे तो उस को बादल के टुकड़े (sponge) से स्वच्छ कर के अच्छी तरह, बिल्कुल सुखा दो, यदि इस पर भी खांसी न जाए तो छाती के सामने के भाग पर दिन में दो बार पन्द्रह २ मिनिट तक सेकन सेवन करना होगा (देखो अध्याय २०)। यह आवश्यक है कि यह चिकित्सा जब लों खांसी अच्छी न हो जाय लगातार की जाय। सर्दी की चिकित्सा यदि परिश्रम पूर्वक न की जायगी तो सम्भव है कि फेफड़ों के असाध्य रोग हो जायें॥



अध्याय २८।

"डिप्थीरिया" खसरा, छोटी माता, कर्ण मूल।

"डिप्थीरिया" (Diptheria)

वे रोग जो बालकों को होते हैं उन में से यह एक अति असाध्य रोग है। यह बीमारी (डिप्थीरीया) रोग-कृमि द्वारा होती है। यह रोग-कृमि गले और नाक में जहां वह उत्पन्न होते हैं न केवल घाव बना देते हैं परन्तु वे एक प्रकार का विष भी बनाते हैं जिस से हृदय को हानि पहुंचती और बहुत तकलीफ़ होती है॥

डिप्थीरीया एक छूत का रोग है जो आस पास के बच्चों की देह में लग जाता है। बालकों का उन से, जिन्हें यह रोग है या जिन्हें यह रोग थोड़े दिन पहिले हुआ हो और इस रोग के कृमि उन के गले में हों और छींकने और खांसने से फैलते हों, लग जाता है॥

बालकों को यह रोग उन चम्चों और प्यालों से जिन का उपयोग दूसरों ने किया है और वे उबलते पानी से धोये न गए हों लग सकता है। खिलौनों से और मुख्य कर सीटी के समान खिलौनों से जिन को बच्चे बहुधा अपने मुख में डालते हैं और ऐसे ही और २ पदार्थों द्वारा यह रोग लग जाता है और फैलता भी है। उंगली या कोई और वस्तु जैसे पेन्सिल, पैसे और डोरी इत्यादि मुंह में डालना एक बड़ा मैला अभ्यास है और इस से डिप्थीरीया को छोड़ और दूसरे रोग भी हो जाते हैं। जब बालक छोटा हो तब से ही यह सिखाओ कि वह किसी भी वस्तु को मुंह में डालने की कुटेव (बुरी आदत) न डाले॥

जब वह बालक जिस को डिप्थीरीया हुआ है खांसता या छींकता है तो कमरे की वायु में हज़ारों लाखों रोग-कृमि फेंकता है। इस कारण से जब दूसरा बालक उस कमरे में आता है तो उस को अवश्य उस वायु में से यह रोग लग जाता है। यदि किसी मोहल्ले के लोगों में यह रोग है, तो अपने बालकों को उन के घरों में न आने दो जहां पर यह रोग है। जब डिप्थीरीया का रोग प्रचलित है, तो अपने बालकों को गली में दूसरे मोहल्ले के बालकों के साथ खेलने न दो, उन को घर ही पर रक्खो॥

लक्षण।

डिपूथीरिया का प्रथम लक्षण गला दुखना है। यह लक्षण रोग लगने के दो दिन से लेकर ७ दिन में होता है। यदि अड़ोस पड़ोस में डिपूथीरिया है और तुम्हारा बालक कहता है कि उस का गला दुखता है तो बेपरवाही, टाल टूल न करो पर तुरन्त ही उस के गले को देखो। यह भी आवश्यक है कि पतली चपटी स्वच्छ लकड़ी का या बांस का टुकड़ा लेकर जीभ को दबाओ कि गले के भीतर के अवयव देख सको॥

पहिले गले में केवल गहरा लाल रंग के समान दीख पड़ेगा पर तीसरे दिन कहवों (गल सुओं tonsils) के ऊपर आस पास भूरे रंग का चमड़ा दिखाई देगा और यह चमड़ा कहवे (tonsil) पर भी होगा। (देखो दिया हुआ चित्र) बालक को निगलने में कठिनाई होगी और ज्वर भी चढ़ेगा॥

चिकित्सा।

ज्यों ही ज्ञात होवे कि डिपूथीरिया का रोग है तो एक प्रख्यात डाक्टर को तुरन्त बुलाओ। यह सोच कर कि तुम रोग की चिकित्सा कर लोगे विलम्ब मत करो। केवल एक औषधि है जो इस रोग को चंगा करेगी। वह "डिपूथीरीया ऐन्टी-टोक्सिन" कहलाती है। यह एक औषधि है जो घोड़े के रक्त में से निकाली जाती है॥ यह औषधि डिपूथीरीया के विषले रोग-कृमि का सामना करती है। जितनी जल्दी इस औषधि का उपयोग करोगे इतना ही अच्छा होगा। यदि यह दवा रोग के पहिले दिन उपयोग में आवे तो १०० में से ९९ को चंगा कर देगी। यदि रोग के तीन चार दिन पश्चात् उपयोग में आवे तो सैंकड़ें में से ७५ से ८५ तक चंगे हो जायेंगे और यदि इस औषधि का बिलकुल ही उपयोग न किया जावे तो उन बालकों में से जो इस रोग में ग्रस्त हैं आधे से अधिक मर जायेंगे॥

यह औषधि द्रव्य वस्तु है और चमड़े के भीतर एक गोदने की सूई (हाइपोडर्मिक नीडल, Hypodermic Needle) द्वारा भेदी जाती है। यह उचित प्रकार से केवल एक डाक्टर या चतुर नर्स कर सकती है। किसी २ स्थान में डाक्टर नहीं मिल सके तो वहां पर माता पिता इस को भेद देवें और बालक को मरने न दें। यह सूई और "ऐन्टी-टॉक्सिन" चिकित्सालय या अस्पताल में से ले सकते हैं जहां पर औषधि बिकती है। इस प्रकार से इस का "टीका" लगाओ। इस टीका लगाने की सूई को कुछ

मिनिट तक उबालो और उस शीशी को, जिस में यह औषधि है, शराब (alcohol) में कुछ मिनिट रक्खो। तब शीशी का एक सिरा तोड़ो और सूई में औषधि खींच लो, तब बांह को कन्धे से कुछ इंच नीचे वाले भाग को साबुन और पानी से ख़ूब धो डालो। और फिर पोंछ के सुखा लो तब वहां पर टिञ्चर आफ़ओडीन (Tincture of Iodine) लगाओ, त्वचा की तह को ऊपर उंगलियों से चुटकी में पकड़े रहो, तब टीके की सूई को त्वचा की सतह की सीध पर रक्खो और एक इंच तक चुभा दो, इस प्रकार से कि वह केवल त्वचा और मांस के बीच में जावे। ३,००० से ५,००० यूनिट तक औषधि डालो। यदि १२ घण्टे में अधिक लाभ न दीख पड़े तो फिर ३,००० से ५,००० यूनिट का दूसरा टीका लगाना चाहिये। कभी २ तीन टीकों के लगाने की आवश्यकता होगी॥

ज्यूं ही विदित हो जाय कि बालक को डिफ्थीरिया का रोग है, तो उसे एक अकेले कमरे में रक्खो और किसी और बालक को इस कमरे में न आने दो। दो या तीन मनुष्यों के अतिरिक्त जो बालक की सेवा करते हैं, और किसी को कमरे में न आने दो। बालक की सेवा के लिये जो कोई कमरे में आवे अपने वस्त्र के ऊपर एक ढीला लम्बा कपड़ा पहिने और जब जाने लगे तो उसे उसी कमरे में छोड़ जाय। कमरे से बाहर जाने के पूर्व अपने हाथ और मुंह को धोवो क्योंकि कमरे के बाहर और २ लोगों से भेंट होगी या तुम कुछ छुओगे जो घर के दूसरे लोग उपयोग करते हैं। कोई खिलौना या कपड़े कमरे से बाहर न जाने दो कि और उनका उपयोग करें॥

खाने पीने के बर्तन जो रोगी बालक उपयोग में लाता है उसी कमरे में रक्खो और उपयोग करने के पश्चात् प्रत्येक बार उबलते पानीसे धोओ। द्रव्य पदार्थ रोगी को खिलाओ॥

बालक जब नाक पोंछे या छिनके तो काग़ज़ या पुराने कपड़े में पोंछे और ये पोंछने के पश्चात् जला देने चाहियें॥

यह अति आवश्यक है कि बालक को पलंग पर चुपचाप लिटाओ और जब तक पूर्ण निश्चय न हो जाय कि वह अच्छा हो गया है उसे उठने और चलने फिरने न दो क्योंकि घूमने से, उस विष के कारण जिस से हृदय को हानि हुई है अचानक मर न जाय॥

गले में प्रत्येक घण्टे उपचार नम्बर ९ या १० (देखो अध्याय ५०) फुरहरी से औषधि लगाओ, उपचार नम्बर १० धीरे से एक रबर की पिच-

कारी से नाक में डाला जाय। जब गले में औषधि लगाती हो या उस का मुंह धोती हो तो नर्स को अपने मुंह और नाक पर स्वच्छ कपड़े की कई तहों का खोल पहिनना आवश्यक है ताकि कृमि उसे न लग जायें॥

गले के सामने की ओर और दोनों ओर सेंकन सेवन से पीड़ा मिटती है। बालक को एक बार दिन में पेट की सफ़ाई के लिये पिचकारी अवश्य देनी चाहिये। जितना पानी और फल का रस उसे फुसला कर पिला सकते हो पिलाओ॥

ज्यूंही घराने में एक बालक को यह रोग हो तो उस घराने के शेष लोगों को ऐन्टी-टोक्सिन का टीका लगवालेना आवश्यक है। क्योंकि यह विदित हुआ है कि यह औषधि जो डिप्थीरिया रोग को चंगा करती है उसे लगने से भी सुरक्षित करती है। ५०० से १,००० यूनिट का टीका प्रत्येक बालक को दो और पूरे मनुष्य को १,००० से २,००० तक यूनिट का टीका लगाओ। यदि एक महीने के पश्चात् भी डिप्थीरिया अड़ोस पड़ोस में फैला है तो फिर टीका लगवाना चाहिये॥

ज्यूंही बालक डिप्थीरिया से चंगा हो जाय तो उस के कपड़े, बिस्तर और कमरे को औषधि द्वारा स्वच्छ करना चाहिये कि यह रोग औरों को न लग जाय (देखो विधि अध्याय ४७ में)॥

कभी २ डिप्थीरिया की बीमारी फैलती है और तिस पर भी ऐन्टी-टोक्सिन प्राप्त करना असम्भव होता है तो इस रोग को रोकने के लिये दिन में तीन बार ४ चाय के चम्मच भर नमक को एक सेर पानी में डाल कर कुल्ली किया करो। परन्तु छोटे बालकों के लिये रुई को एक पेन्सिल पर लपेट कर फुरहरी बना के नमक में डुबो कर उन के गले के भीतर लगा दो॥

खसरा (Measles)।

यह अति साधारण और छूत का रोग है। यह बहुधा असाध्य रोग नहीं समझा जाता है परन्तु जिस बालक को खसरा निकले उस की सेवा अति सावधानी से करनी चाहिये कि ऐसा न हो कि खसरे के पश्चात् कोई और भयानक रोग न हो जाय॥

खसरा रोग अति शीघ्रता से फैल जाता है यदि कोई बालक रोगी बालक के निकट आवे या उस कोठरी में जाय जिस में खसरे का रोगी बालक हो तो बहुधा दस बारह दिन पश्चात् उसे भी खसरा निकल

आवेगा। इस का पहिला लक्षण नाक में सर्दी, नाक का बहना, आंखों में लाली और कुछ ज्वर होता है। रोग के आरम्भ होने के तीन चार दिन पश्चात् खसरे के दाने निकल आते हैं पहिले पहिल सूक्ष्म लाल दाने पिस्सू के काटने की नाईं मुंह पर दिखने हैं। फिर सम्पूर्ण शरीर पर दो एक दिन में फैल जाते हैं, मुंह पर के दाने बड़े २ हो जाते हैं ऐसे कि बहुत से दाने मिल कर एक बड़ा चकता बन जाता है॥

खसरे के पश्चात् जिस भयानक रोग के होने का भय होता है वह कान और फेफड़े के रोग होते हैं॥

चिकित्सा।

खसरे को चंगा करने की कोई विधि नहीं है। यह रोग दाने निकलने के पश्चात् स्वयं अच्छा हो जाता है वरन् आवश्यक है कि बालक को पौष्टिक भोजन दें और सुरक्षित रक्खा जाए, बालक को एक स्वच्छ कमरे में एक स्वच्छ पलंग पर लेटना चाहिये, उसे गर्म रखना चाहिये क्योंकि खसरे में बालक को ठण्ड लग जाने का बड़ा भय है। और यदि ठण्ड लग गई तो असाध्य फेफड़े का रोग होने का भय है। उस कमरे में दूसरे बालकों को नहीं आना चाहिये नहीं तो उन को भी वही रोग लग जायगा॥

बहुत दशाओं में जब लों दाने नहीं निकल आते तो इस बात का ज्ञान भी नहीं होता कि बालक को कौनसा रोग निकल आया है, ऐसी दशा में दो चाय के चम्मच भर अरेंडी का तेल दे दो और आमाशय स्वच्छ करने के लिये गर्म पिचकारी दो जो १०८ F. डिग्री उष्णता की हो। मुंह स्वच्छ करने की औषधि से (देखो उपचार नम्बर ६ अध्याय ५०) प्रति दिन कई बार मुंह का स्वच्छ करो, नमक के पानी से (आध सेर पानी में १ चाय का चम्मच भर नमक डाल कर) नाक के भीतरी भाग को दिन में कई बार फुव्वारे की पिचकारी से धोना चाहिये यदि फुव्वारे की पिचकारी न प्राप्त कर सको तो साधारण छोटी पिचकारी से नाक के नथनों में धीरे धीरे नमक का पानी डालना चाहिये। यदि नाक और मुंह को इन उपायों द्वारा स्वच्छ रक्खोगे तो फेफड़ों का भयानक रोग शीत (एक अति असाध्य फेफड़े का रोग) रुक सकता है। बहिरापन भी रुक जायगा यदि छाती में कुछ पीड़ा हो या कुछ खांसी हो तो दिन में दो बार प्रति दिन सेंकन सेवन करो॥

खसरे के समय नेत्रों की भी सावधानी करनी चाहिये। कमरे को नेत्रों की रक्षा के लिये अंधेरा करो। बोरिक ऐसिड का लोशन उपयोग

करो। उपचार नम्बर १ ले कर दिन में कई बार नेत्रों को धोओ। देखो अध्याय ४४ में नेत्रों की रक्षा के विषय में, जब वे फूल जायें तो शिक्षा दी गई है॥

मन में इस बात का सदैव विचार रक्खो कि खसरा एक असाध्य रोग है और उस से बहुत से बालकों की मृत्यु हो गई है। जब ज्ञात हो कि मोहल्ले में खसरा है तो माता पिता को ऐसे स्थानों में जहां पर यह रोग हैं अपने बच्चों को जाने न देना चाहिये। प्रत्येक दशा में जब घर में एक बालक को खसरा हो जाय तो उसे एक कमरे में अकेले रक्खो कि घर के दूसरे बालक भी इस रोग में ग्रस्त न हो जाएं॥

(छोटी माता Chicken Pox)

छोटी माता भी छूत का (लगनेवाला) रोग है परन्तु यह असाध्य नहीं है। पहिले कुछ दाने शरीर के धड़, खोपड़ी और कलाई पर निकलते दिखाई देते हैं। इस के दाने बहुत कुछ बड़ी माता के दानों की नाई होते हैं। इस की चिकित्सा में यह करना उचित है कि बालक को खूब पानी पीने को दो और प्रति दिन उस को पिचकारी दे कर आंतों को स्वच्छ करो (देखो अध्याय २०)॥

जब दानों में पानी भर आवे तो उन पर वेसेलीन लगानी चाहिये (देखो उपचार नम्बर ११) इन दानों को खुजलाने न दो; नहीं तो दाग़ पड़ जाएंगे। नेत्रों को दिन में ३ बार उपचार नम्बर १ से धोना चाहिये॥

कर्ण मूल

इस रोग में बहुधा पहिला लक्षण यह है कि कान के नीचे पीड़ा होती है। थोड़ा सा ज्वर भी आता है। कान के नीचे की पीड़ा कोई वस्तु चबाने या निगलने से और भी अधिक हो जाती है। एक या दोनों कानों के नीचे और सामने की ओर थोड़ी सी सूजन भी देख पड़ती है, यह सूजन बढ़ जाती है और कोई कोई दशाओं में और भी अधिक हो जाती है थोड़े दिनों में यह सूजन घटने लगती है और प्रायः एक सप्ताह में बिलकुल जाती रहती है॥

इस की चिकित्सा में सचेत रहना चाहिये कि बालक को ठण्ड न लगे और सर्दी न हो। उपचार नम्बर १० (देखो अध्याय नम्बर ५०) से मुंह को बार २ धोना चाहिये, सूजन को बार २ सेकन सेवन से पीड़ा मिटती है। जिन लोगों को कर्णमूल नहीं निकल चुके हैं, उन को रोगी से अलग रहना चाहिये

अध्याय २१।

अजीर्ण, अरुचि, कोष्ट बद्ध और बवासीर।

संसार में ऐसे थोड़े ही लोग होंगे जिन को ऊपर लिखे हुए रोगों में से एक या अधिक रोग न हुए हों यद्यपि ये रोग मोती झिरा या मलेरिया (ऋतु ज्वर) के समान असाध्य नहीं हैं तथापि इन से अति कष्ट होता है और उन के द्वारा और भी बहुत से भयानक रोग हो जाते हैं॥

अजीर्ण के कारण और लक्षण।

अजीर्ण के सब से साधारण लक्षण यह हैं कि आमाशय में बेचैनी और पीड़ा होती है छाती में ज्वलन हृदय में ज्वलन, आमाशय के ऊपर छूने से पीड़ा और जीभ अति मैली होती है और खट्टी डकारें आती हैं वमन भी होता है और सिर में पीड़ा भी होती है। कभी २ दोनों कन्धों के बीच की पीठ में पीड़ा होती है। साधारण रीति से आमाशय की पीड़ा भोजन खाने से कम हो जाती है, परन्तु थोड़ी देर पश्चात् फिर तीक्ष्ण होने लगती है, कलेजा अपना काम यथोचित रीति से नहीं करता है। और इस कारण से टट्टी हलके रंग की उतरती है॥

अजीर्ण के कारण इतने अधिक हैं कि सारांश में उन का वर्णन नहीं हो सक्ता है। सब से साधारण कारण भोजन का अति शीघ्र खाना है। शीघ्र खाने का यह फल होता है कि भोजन भली भांति चवाया नहीं जाता परन्तु गुठली की गुठली निगल ली जाती है। आमाशय को यह भोजन पचाने में बहुत सा जठर रस बनाना पड़ता है। जिस के कारण छाती में जलन और खट्टी डकारें आने लगती हैं। बहुत से लोग भोजन पकाते समय अच्छी रीति से नहीं पकाते हैं, ऐसे अधकच्चे भोजन से अधिक अजीर्ण हो जाता है बहुत अधिक खाने से भी बहुधा अजीर्ण हो जाता है। अच्छी रिति से पका हुआ भोजन भी यदि अधिक खा लिया जाय तो अजीर्ण उत्पन्न करता है, निर्धन लोगों में अजीर्ण का साधारण कारण यह होता है कि उनका भोजन अति कड़ा होता है और इसे भी वे अधिक खा लेते हैं। अपथ्य भोजन अर्थात् वे वस्तुएं जो नमक और

शक्कर में पाग कर रक्खी जाती है और वे भोजन जिन में अदरक, मिर्च, मसाला और दूसरी चर्परी, तीक्ष्ण वस्तुएं होती हैं इन से भी आमाशय को हानि होती है और वह अपना कर्तव्य कार्य्य करने में अयोग्य हो जाता है॥

वे लोग जो मदिरा बहुत पीते हैं अजीर्ण रोगों में ग्रस्त रहते हैं और उन को भूक कम लगती है, मुख्य कर निहारी (भोर के भोजन) के समय। उन के आमाशय में पीड़ा होती है और बहुधा भोजन करने के पश्चात् वमन करते हैं। मदिरा से आमाशय को जितनी हानि होती है प्रायः उतनी ही तम्बाकू पीने से होती है और उसे भी अजीर्ण के साधारण कारणों में से एक कारण समझना उचित है॥

बहुत से उदाहरण हैं, मुख्य कर अध्यक्षों, विद्यार्थियों और काम काजी मनुष्यों के, जिन को प्रति दिन शारीरिक व्यायाम न करने के कारण अजीर्ण रहता है। मनुष्य के सृजनहार ने कहा है "तू अपने भौं के पसीने की रोटी खायगा"। भोजन और व्यायाम पर मनुष्य का स्वास्थ्य निर्भर है। वह जो भोजन खाता है और व्यायाम नहीं करता कुछ न कुछ बिगड़ी हुई पाचन क्रिया द्वारा अवश्य दुःखित रहेगा॥

उपरोक्त कारण के अतिरिक्त समय कुसमय भोजन करने से भी अजीर्ण होता हैं जैसे खाने के समयों के मध्य में खाना; रात के समय में जब देर हो गई हो बहुत ज़्यादा भोजन करना। इन दोनों कारणों से किसी न किसी समय अवश्य अजीर्ण होगा। इस के विषय में विस्तार पूर्वक वर्णन के लिये कि कौन से भोजन पथ्य और उत्तम, और कौन से अपथ्य हैं और शरीर को हानि करते हैं, देखो अध्याय नम्बर ५॥

चिकित्सा।

अजीर्ण रोग से चंगा होने के लिये आवश्यक होगा कि कारण को दूर करें। यह स्मरण रखना आवश्यक है कि उन बहुतेरी औषधियों में से जो समाचार पत्रों में छपती हैं किसी के खाने से कुछ समय तक पीड़ा तो बन्द हो जाएगी वरन् उस का कारण दूर न होगा। इस कारण ऐसी सब औषधियों से बचो। देखो और ढूंढो कि प्रस्तावित कारणों में से कौन २ से कारण तुम्हारे अजीर्ण पर ठीक लगते हैं। समस्त मदिरा पान और तम्बाकू पीने को छोड़ना पड़ेगा। रोगी आमाशय इतना कार्य्य नहीं कर सकता है जितना कि स्वस्थ्य आमाशय कर सकता है, इस कारण कम भोजन खाना पड़ेगा। केवल ऐसे पथ्य भोजन खाने चाहियें

जो शीघ्र पच सकते हैं। ऐसे पथ्य भोजन की यह सूची है:—गेहूं की रोटी दो बार सेंकी हुई, बिना मांड़ निकाला हुआ और खूब गला हुआ चांवल, भूने और भाप में पके हुए चांवल, पानी में आधे पके हुए या ज़रा उबाले हुए अण्डे, आडू, नाशपाती, अमरूद पका के या बिना पकाए खाओ॥

भला होगा कि मिठाई खाना छोड़ दो। और तले हुए भोजन भी न खाओ ये गरिष्ट होते हैं॥

यदि अजीर्ण तीक्ष्ण हो तो एक खुराक जुलाब (cathartic) की लो और २४ घण्टों तक कुछ न खाओ। २४ घण्टे बिलकुल भोजन न खाने से उस रोगी को जो बहुत अशक्त न हुआ हो, कुछ हानि न होगी। उपवास करने से चंगा होने में अधिक सहायता मिलती है और पाचन क्रिया के अवयवों को भी विश्राम मिलता है॥

ऐसी दशाओं में जब हृदय में जलन होती है और खट्टे रस की डकारें आती हैं तो श्वेतसार (starchy) भोजन को बहुत कम खाना चाहिये और श्वेतसार पदार्थों की अपेक्षा चिकनी और तेल की वस्तुएं खानी चाहियें। यदि हृदय की जलन और खट्टी डकारों से क्लेश होता है तो १० ग्रेन से २० ग्रेन तक उपचार नम्बर १२ (अध्याय ५०) का लो। भोर को उठ के थोड़ा सा अति गर्म पानी पियो और सोने के पूर्व भी रात को थोड़ा सा अति गर्म पियो तो आमाशय की उपरोक्त दशा को चंगा करने में लाभकारी होगा। इस के अतिरिक्त जब आमाशय में पीड़ा हो तो प्रति दिन दो या तीन बार, २० मिनिट तक सेंकन सेवन करने से अति लाभ होगा॥

अजीर्ण रोग किसी प्रकार का क्यों न हो, जितना खूब चबा कर धीरे २ खाने के लिये कहा जाय सो सब थोड़ा है। क्योंकि खूब चबा कर खाने से पाचन क्रिया के अवयव अपना काम उत्तमता से करते हैं। प्रति दिन शारीरिक परिश्रम या व्यायाम करना अत्यावश्यक है। त्वचा को बार २ स्नान द्वारा स्वच्छ रखना चाहिये॥

अजीर्ण के साथ जो अरुचि होती है उस के लिये जो अगले खण्ड में शिक्षा दी है वह करो। प्रस्ताविक शिक्षाएं जो बताई गई हैं अजीर्ण को प्रत्येक दशा में चंगा न करेंगी। रोगी के लिये यह आवश्यक है कि समय समय पर इस को खोजे कि कौन २ सा भोजन उस के स्वास्थ्य के लिये उत्तमता पूर्वक अनुकूल है और यदि वह भला पौष्टिक भोजन है तो केवल उसी को खाया करे॥

कोष्ठ वद्ध। (Constipation)

प्रति दिन एक बार या अधिक बार टट्टी उतरना आवश्यक है। परन्तु जब दो या तीन दिनों में केवल एक ही बार टट्टी उतरे तो उसे कोष्ठ वद्ध कहते हैं। उन लोगों को भी यही बीमारी समझो जिन्हें प्रति दिन टट्टी उतरने के लिये किसी प्रकार का जुल्लाब लेना पड़ता हो। इस के दूसरे लक्षण मैली जीभ, श्वास से दुर्गन्ध आना, सिर की पिड़ा, मुख्य कर सिर के ऊपर और पीछे पीड़ित होगा और कभी २ आमाशय में कुछ दर्द सा होगा॥

कोष्ठ-वद्ध के कारण सदा बैठे रहने की आदत और चाय, काफ़ी, तम्बाकू और नशे की वस्तुओं का पान करना, हैं। किसी २ दशा में आमाशय की अस्वभाविक दशा से भी कोष्ठ-वद्ध हो जाता है। लगातार जुल्लाब पीने के अभ्यास द्वारा अति तीक्ष्ण कोष्ठ-वद्ध हो जायगा। स्त्रियों को मुख्य कर कोष्ठ-वद्ध इस कारण से होता है कि वे टट्टी करने की इच्छा पर ध्यान न दे के रोक लेती हैं। सो समय चले जाने के पश्चात् जब मल आंतों के मध्य भाग में चला जाता है तो फिर टट्टी करने की इच्छा भी जाती रहती है और घोर कोष्ठ-वद्ध हो जाता है॥

चिकित्सा।

कोष्ठ-वद्ध का चंगा होना बहुत कर के बुरे अभ्यासों को ठीक करने पर निर्भर है। समाचार पत्रों में छपी हुई औषधियों से इतना लाभ प्राप्त न होगा जितना पथ्य भोजन और शारीरिक व्यायाम द्वारा होगा। प्रति दिन व्यायाम करना चाहिये या घूमने सैर करने जाना या बग़ीचे में काम करना या और किसी प्रकार का शारीरिक व्यायाम। एक मुख्य प्रकार का व्यायाम यह है कि चित लेट कर पीठ के नीचे कम्बल तह कर के या कोई और वस्तु रक्खो और दोनों पैरों को सीधे ऊपर उठाओ और इस को २० या ३० बार प्रत्येक भोर को करो। एक लम्बी श्वास प्रत्येक बार लो। जब टांगों को ऊपर उठाओ तो थोड़ा ठहरो। टांगों को जल्दी २ न उठाओ। टांग घुटने के पास न झुकाओ, धीरे २ टांगों को नीचे करो और उन्हें नीचे गिरने न दो। इस व्यायाम द्वारा आमाशय के स्नायु पुष्ट होते हैं और इस लिये बहुत सी दशाओं में कोष्ठ-वद्ध को चंगा करने में सहायक होती है॥

बहुत सी दशाओं में प्रातः काल को उठ के एक प्याला गर्म पानी का या ठण्डे पानी का धीरे २ पीने से लाभ होता है। बहुत से लोग प्रति दिन उचित द्रव्य पदार्थ नहीं पीते तो उन का कोष्ठ-वद्ध केवल इसी कारण से

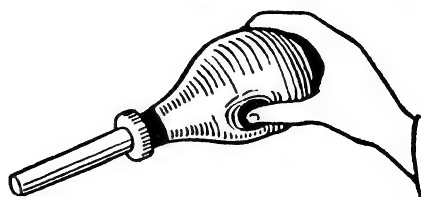
हो सकता है। इस लिये जो लोग कोष्ट-बद्ध के रोग में ग्रस्त हैं प्रति भोजन के साथ जो द्रव्य पीते हों उस को छोड़ कर प्रत्येक दिन पांच या छः गिलास पानी और पियें। फल का रस भी पानी के कुछ भाग के स्थ न में पी सके हैं॥

किसी २ कोष्ट-बद्ध की दशाओं में मल श्वेत रंग का होता है। इस का यह कारण है कि कलेजा (जिगर Liver) यथोचित रीति से काम नहीं करता है और इसी लिए कोष्ट-बद्ध हुआ है। कलेजे को उत्तेजित करने के लिये इस पर दिन में दो सेंकन सेवन १५ से २० मिनिट तक करो और एक ग्रेन इपिकाक (Ipecac) प्रति दिन भोर के समय खाओ॥

यह अच्छा है कि कोष्ट-बद्ध के लिए जुलाब न लिया करो, क्योंकि जब कोई गोली खाना आरम्भ करता है तो बहुधा उस को प्रति दिन खाना आवश्यक हो जाता है। तो इस प्रकार के जुलाब की गोली लेने से एक अति बुरा अभ्यास पड़ जाता है। औषधि के बदले प्रति दिन आध औंस से एक औंस तक अगर अगर (Agar-agar चीनी घास) खाओ। इस को थोड़ी देर चूल्हेमें भूनो और तब खाओ, परन्तु यह खाने के पूव न उबाली जाय॥

किसी भी समय एनीमा पिचकारी द्वारा आंतों को स्वच्छ कर सकते हो परन्तु इसे भी प्रति दिन लेना अच्छा नहीं है। एक उत्तम उपाय यह है कि एक या दो दिन एनोमा पिचकारी एक सेर या अधिक गर्म पानी में लो ताकि टट्टी हो, तीसरे दिन पिचकारी में थोड़ा ठण्डा पानी लो और फिर चौथे दिन उस से भी थोड़े ठण्डे पानी का उपयोग करो। इस प्रकार करने से एक या दो सप्ताह में टट्टी आप से आप उतरने लगेगी और पिचकारी लेने की आवश्यकता न होगी॥

एक उपाय जो साधारण कोष्ट-बद्ध में लाभदायक हुआ है यह है कि एक छोटी रबर की पिचकारी लो (देखो जैसी चित्र में है) इस के द्वारा आंत के निचले सिरे पर दो बार ठण्डा स्वच्छ जल भर के डाल दो। ठण्डे पानी की पिचकारी ले कर कुछ देर ठहरो तब पाखाने जाओ। इतना ज़रा सा ठण्डा पानी आंत को उभारने को लिये पर्याप्त है और इस का फल पाखाना उतरना है। यह उपाय एनीमा पिचकारी



की अपेक्षा अति सरल है और वही फल होता है जैसा प्रायः एनीमा (enema) पिचकारी से होता है॥

कोष्ट-बद्ध की प्रत्येक दशा में रोगी को यह भली भांति समझ लेना चाहिये कि एक नियत समय पर टट्टी उतरना मुख्य बात है। सब से उत्तम समय प्रातः काल का है। ठीक भोजन खाने के पश्चात्, प्रत्येक दिन इसी समय पाखाना फिरने के लिए जाना, यदि ऐसा करने की इच्छा ने भी हो, अच्छा है। क्योंकि ऐसा प्रति दिन करने से थोड़े ही दिनों में आंतों को इस नियत समय पर मल को निकाल फेंकने का अभ्यास हो जायगा॥

यदि आवश्यक हो कि जुलाब की गोली ली जाय तो दो "कासकारा सगरेडा" (Cascara Sagrada) ५ ग्रेन की गोली प्रति सन्ध्या को लो या कासकारा सगरेडा के अर्क़ की १५ बून्द पी लो यह उत्तम है॥

बवासीर (Piles)।

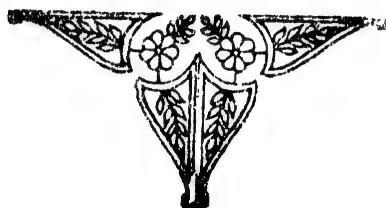
गुदा के ठीक मुंह पर या भीतर छोटी २ गिलटियां बन जाती हैं। ये गिलटियां इस भाग की नसों के संकुचित होने के कारण से पड़ जाती हैं। अर्श (hemorrhoids) रोग का कारण कोष्ट-बद्ध है॥

चिकित्सा।

सब से मुख्य कार्य्य अर्श रोग को चंगा करने में यह है कि प्रथम कोष्ट-बद्ध को चंगा करो। ऐसा करने के लिये उपरोक्त उपायों का उपयोग करो। यदि किसी को कठिन अर्श रोग है तो किसी प्रख्यात डाक्टर से परीक्षा करवाओ, क्योंकि ऐसी दशा में प्रख्यात डाक्टर की बुद्धि, अनुभव और चतुराई की आवश्यकता है जिस से वह चंगा हो जायगा॥

जब अर्श रोग कठिन नहीं हो तो ये दिये हुए उपाय लाभकारी होंगे। भोर के भोजन के पश्चात् अच्छा होगा कि पाखाना फिरने का नियत समय रक्खो। एक छोटी सी पिचकारी भर स्वच्छ ठण्डे पानी को आंतों के भीतर डालो। पानी भीतर जाने के पश्चात् कुछ मिनिट तक ठहरो तब मल त्याग करो। टट्टी करने के पश्चात् एक और पिचकारी ठण्डे पानी की भर लो और उस का पानी भी भीतर डालो तब तुरन्त टट्टी करो, मल निकाल दो। इस से आंतों के नीचे का भाग सब मल से स्वच्छ हो जाता है और यह चिकित्सा का मुख्य भाग है। आंतों को खाली करके एक

स्वच्छ गीले कपड़े से गुदा पोंछो और उसे पानी से धो डालो सुखाने के पश्चात् गुदा के आस पास थोड़ा सा मलहम (मरहम ointment) लगाओ लेड एसाटेट (Lead Acetate) के दो भाग, टैनिक एसिड (Tannic Acid) का एक भाग, बेलाडाना का मरहम (Ointment of Belladonna) के १५ भाग मिलाओ। इस मरहम को थोड़ा सा लेकर दिन में दो या तीन बार लगाओ। इसे गुदा के मुंह पर, और मुंह के भीतर आंत पर भी लगाओ॥



अध्याय ३०।

दस्त और पेचिश।

दस्त।

यह स्वयम् रोग तो नहीं है पर बहुत से रोगों का लक्षण है। यदि अड़ोस पड़ोस में हैज़े का रोग है तो दस्त आना उस का पहिला लक्षण है, और जैसे ३२ वें अध्याय में विधि बताई गई है उस के अनुसार करना उचित है। यदि दस्त रोग बहुत दिन तक रहता है और आंत में से जो मल निकलता है लाल रंग का है और उस के साथ सार पदार्थ भी निकलता है तो जो चिकित्सा अर्श रोग के लिये बताई गई है इस रोग में भी वही करनी उचित है॥

साधारण दस्तों का रोग जो बहुतों को हुआ करता है अपथ्य भोजन खाने और पीने द्वारा होता है। अपथ्य भोजन और बुरी रीति से पकाया हुआ भोजन या बिगड़ा हुआ भोजन या कच्चे फल या केकड़ा और सूखी मछली खाने से दस्त आने लगते हैं। मक्खियों द्वारा बहुत सा दस्त रोग उत्पन्न होता है। किसी भोजन को अधिक खा लेने, बुरा पानी पीने, आंतों में कीड़े पड़ जाने या आमाशय में ठण्ड लग जाने के कारण से भी दस्त रोग होता है॥

चिकित्सा।

बार २ दस्त आने से साफ़ विदित होता है कि आंतें अपने में से कुछ विकार करनेवाले पदार्थ को बाहर निकालने का यत्न करती है सो इस कारण से बहुत पानी पीने के द्वारा और गर्म पानी (१०५ F. डिग्री उष्ण) की एनीमा पिचकारी प्रत्येक दस्त के पश्चात् लेने से और थोड़ा २ एपसम साल्ट (Epsom Salt) या अरेंडी का तेल खाने से विकारी पदार्थ निकल जाएगे। पानी को अति धीरे २, घूंट २ पीना चाहिये। यदि पानी अनुकूल न हो तो चांवल का पानी जिस में पाइन्ट भर पानी में एक चाय का चम्मच भर नमक मिला हो पीओ। पानी आंतों में जाकर जो कुछ दस्त का कारण है उसे निकाल देता है। आमाशय पर १५ मिनिट

तक प्रत्येक तीन या चार घण्टों पश्चात् सेंकन सेवन करने से रोग दूर होने में सहायता मिलेगी और पीड़ा भी जाती रहेगी ॥

एक दिन एनीमा लेकर और पानी पी कर दस्त को रोकने के लिये यह करना चाहिये :—पानी पीना बन्द कर दो और प्रत्येक दस्त के पश्चात् गर्म श्वेत सार पिचकारी दो (देखो अध्याय २६) और उपचार नं० ७ (देखो अध्याय ५०) प्रत्येक चार घण्टे में दो ॥

सब प्रकार के दस्तों में यह मुख्य है कि रोगी शांत भाव रक्खा जावे सो पलंग पर पड़े रहना उत्तम है चलने फिरने से दस्त बढ़ जायेंगे, ठीक जैसे कि चोट खाई हुई बांह या टांग को हिलाने से पीड़ा होती है ॥

२४ से ४८ घण्टों तक भोजन केवल चांवल का पानी और अण्डे की सफ़ेदी (उपचार २७, अध्याय ५०) और इसी प्रकार की वस्तुएं होनी आवश्यक हैं। एक टुकड़ा भी साधारण भोजन का न खाना चाहिये जब तक दस्त आना न बन्द हो जाय और तब भी कई दिन तक अति कम भोजन खाना चाहिये। जब कि दस्त रोग बहुत कुछ अच्छा होने लगा हो तो भी केवल एक निवाला तरकारी या मांस खाने से बहुधा फिर बढ़ जाता है ॥

सब भोजन और पानी और खाने पीने के बर्तन जो दस्त के रोगी ने उपयोग किये हैं अति स्वच्छ रखने चाहियें और उबलते पानी में धोने आवश्यक हैं। रोगी को खाने के पूर्व हाथ धोने चाहियें और एक १२ से १५ इंच का फ़लालेन का कपड़ा जब तक दस्त बिलकुल बन्द न हो जाएं उदर पर लपेट रखना चाहिये। इस से आमाशय को सर्दी नहीं लगती है ॥

मरोड़, पेचिश (Dysentery)

पेचिश रोग में दस्त रोग के समान पतली टट्टी होती है। परन्तु मरोड़ के साथ और नीचे की आंत में जलन होती है। बहुत बार टट्टी थोड़ी होती है और उस में आंव और रक्त रहता है। कभी २ यह रोग एकाएक ज़ोर के बुख़ार के साथ आता है ॥

एशिया के प्रायः सम्पूर्ण देशों में एक बहुत साधारण प्रकार का पेचिश का रोग होता है और इस का कारण अमीबा (Amœba) एक प्रकार का रोग-कृमि है। अमीबा एक अति सूक्ष्म प्रकार का रोग-कृमि होता है जो भोजन या पानी के साथ आंतों में प्रवेश करता है। जब इस रोग द्वारा पेचिश आरम्भ होती है तो टट्टी में रक्त और आंव गिरती है, आमाशय में दर्द रहता है। जब रोगी टट्टी को जाता है तो आंतों के नीचे के भाग में जलन सहित पीड़ा उठती है। एक दिन में ३० या और अधिक मरोड़ें

आती हैं। रोगी अति निर्बल हो जाता है और वज़न में हलका हो जाता है। बहुत करके यह रोग असाध्य हो जाता है। कुछ दिन तक दस्त आते हैं इस के पश्चात् दस्त बन्द हो जाते हैं और कुछ दिन तक कोष्ठ-बद्ध हो जाता है, तब फिर पहिले से और अधिक दस्त आने लगते हैं॥

यदि अमीबिक पेचिश रोग (Amœbic Dysentery) जो एक प्रकार की संग्रहणी है, कुछ दीनों तक रही हो तो भोजन खाने के थोड़ी ही देर के पश्चात् बिना कुछ परिवतन हुए भोजन वैसा ही मल में निकलता है।

जिन लोगों को अमीबिक संग्रहणी रोग होता है उन के कलेजे के भीतर कभी २ मवाद पड़ जाता है तो पसली के नीचे ही दहनी ओर सामने की तरफ़ पीड़ा होने लगती है। कभी २ पीठ में दहने कन्धे की हड्डी के नीचे भी पीड़ा होती है॥

चिकित्सा।

पेचिश रोग असाध्य है। इस लिये जहां तक बन पड़े एक चतुर डाक्टर की चिकित्सा करनी चाहिये। चिकित्सा रोग की दशा अनुसार होगी क्योंकि भिन्न २ प्रकार की पेचिश चतुर डाक्टर ही बता सकता है॥

यह बहुतही आवश्यक है कि रोगी पलंग पर लेटा रहे। टट्टी करने के लिये भी उसे न उठना चाहिये। परन्तु लेटे २ ही उस के नीचे पायख़ाने का वर्तन लगा दिया जावे। संग्रहणी के प्रत्येक प्रकार के रोग में पलंग पर लेटे रहना अति ही आवश्यक है समाचार पत्रों में जो बनी हुई औषधियां छापी जाती हैं ये रोगी को कदापि न देनी चाहियें। इस रोग को चंगा करने में बहुत ही कम ऐसी औषधियां हैं जिन का उपयोग हो सक्ता है। दस्त की साधारण औषधियां बिना सोचे विचारे खा लेने से रोग बढ़ जाता है। मदिरा नहीं पीनी चाहिये क्योंकि इस से हानि होती है॥

अमीबिक संग्रहणी रोग की चिकित्सा यही है कि भोजन में केवल पतले द्रव्य पदार्थ खाने को दिये जाएं। आध औन्स अरंडी का तेल या दो तीन ख़ुराक ऐपसम साल्ट (Epsom Salts), या ग्लॉबर्स साल्ट (Glauber's Salts) देकर कोठा स्वच्छ करना चाहिये। जब अरंडी का तेल अपना काम कर चुके तो एमेटीन (Emetin) देना चाहिये। इस औषधि से अमीबिक संग्रहणी रोग अवश्य चंगा हो जाता है। यदि कोई डाक्टर प्राप्त कर सको तो वह बहुत करके एमेटिन टीके के द्वारा देगा (टीके की हाइपोडरमिक (Hypodermic) सूई द्वारा) यदि कोई डाक्टर न प्राप्त

कर सको तो केराटीन "keratin" में लिपटी हुई एमेटिन गोलियां, जैसी कि बरोज़ वेलकम एण्ड कम्पनी (Burroughs, Welcome & Co.) की बनाई हुई मिलती है दस दिन या बारह दिन तक आधा ग्रेन की गोली प्रति संध्या को लो। जिस दिन यह औषधि लेते हो तो संध्या का भोजन न खाओ। यदि संध्या का भोजन खाओगे तो वमन (क्रय) हो जायगी।

यदि एमेटिन (वमन की औषधि) न मिल सके तो १० से २० ग्रेन इपिकाक कई दिनों तक दिन में दो बार दो। इपीकाक खाने के पूर्व ३ घण्टे कुछ भी न खाना चाहिये और यह खा कर चुप चाप लेटे रहो और इसे खाने के पश्चात् तीन घण्टे तक कुछ न खाओ। यह इस कारण से करना आवश्यक है कि वमन न हो। जब यह रोग तेज़ी पर हो तो मरोड़ और जलन आमाशय पर सकन सेवन करने से अच्छी हो जाएगी या एक पत्थर या एक ईंट को गर्म करके एक सूखे कपड़े में लपेटो और आमाशय पर रक्खो। एक गर्म "स्टार्च" स्वेत सार का एनीमा दो (देखो अध्याय २६)। एक सेर पतला गर्म स्वेत सार लेकर उस में ४० या ६० बून्द अफ़ीम का सत (अर्थात् Laudanum) मिला दो इस से पीड़ा कम हो जायगी। एक अति गर्म जल का एनीमा जिस में एक चाय का चम्मच भर नमक एक सेर पानी में मिला हो आंत के नीचे के भाग को स्वच्छ करने में सहायक है। और इस से बार २ टट्टी फिरने की इच्छा और कुछ ज़ोर लगाने का कष्ट भी कम हो जायगा॥

पुराने पेचिश रोग में एमेटिन या इपीकाक कई दिन तक उपयोग करना चाहिये। रोगी को पलंग पर रहना चाहिये। प्रति दिन थोड़ा सा अरेंडी का तेल पिलाना चाहिये। और केवल चांवल का पानी और अण्डे की सफ़ेदी का पानी पिलाना चाहिये (देखो अध्याय ५०)। यदि एमेटिन और इपीकाक द्वारा रोग अच्छा नहीं हो तो औषधि वाली पिचकारी देनी चाहिये। पहिले दो सेर गर्म पानी का एनीमा दो जिस में सोडा बायकारबोनेट (Soda Bicarbonate) के तीन चाय के चम्चे डालो। फिर जब तक यह पानी बाहर न निकल जाए ठहरो तब पिचकारी दो और इस समय आधा सेर गर्म पानी लो और इस में दो चाय के चम्मच बोरसिक एसिड (Boracic Acid) या आधा चम्मच नमक का घोलो। इस चिकित्सा को प्रति दिन किया करो॥

चिकित्सा के दूसरे उपाय भी हैं वे अति गुणकारी हैं परन्तु वे केवल डाक्टर ही प्रयोग में ला सक्ता है॥

पेचिश रोग की सब दशाओं में उचित भोजन को ध्यान में रखना सब से आवश्यक है क्योंकि जब आंतों में सूजन हो जाती है जो पेचिश में सदैव होती है तो साधारण भोजन से आंतें छिन्न जाती हैं और रोग अधिक बढ़ जाता है। जिस मनुष्य को पेचिश रोग हो उस के लिये साधारण भोजन खाना ऐसा है जैसे दुःखित नेत्र में रेत डाली जाय। भोजन जितना हो सके उतना थोड़ा खाना चाहिये। यदि जीभ मलीन रहे तो थोड़ा २ चांवलों का मांड़ या अण्डे की सफ़ेदी का पानी देना चाहिये। कच्चे अण्डे साधारण या जैसे ४७ वें अध्याय में बताया है बना कर खा सक्ते हैं। दो २ घण्टे के पश्चात् थोड़ा २ भोजन खाना इस से अच्छा है कि दिन में तीन बार बहुत सा खा लिया जाए। भोजन न तो बहुत गर्म और न बहुत ठण्डा होना चाहिये। खट्टी वस्तुएं बिलकुल न खानी चाहियें। यदि जीभ मैली न हो तो दूध खा सक्ते हैं। यह आवश्यक होगा कि दूध स्वच्छ और ताज़ा हो और तब भी उसे पीने के पूर्व उबाल लेना चाहिये। तरकारी नहीं खानी चाहिये। बहुत प्रकार के फल भी लाभदायक नहीं होते। ज्यूं २ रोग अच्छा होता जाए भोजन धीरे २ बढ़ाया जा सक्ता है। कड़ा भोजन न खाना चाहिये। चंगे होने के पश्चात् जो भोजन खाओ तो निगलने के पूर्व उसे भली भांति चबाओ यदि एक थोड़ा सा टुकड़ा भोजन का बिना भली भांति चबाए निगला जावे तो उस से रोग फिर लौट आयगा यद्यपि रोग बहुत कुछ चंगा भी हो चुका हो। मुंह दिन में कई बार उपचार नम्बर १ (देखो अध्याय ५०) से धोकर स्वच्छ रखना चाहिये॥

दस्त और पेचिश की कैसे रोक हो सकती है।

दस्त और पेचिश रोके जा सकते हैं वरन् सच तो यह है कि बहुत से और रोगों की तुलना करें तो इन रोगों से बचना सुगम है। इन रोगों के कीड़े शरीर में सदैव मुंह द्वारा प्रवेश करते हैं इस लिये इस रोग से बचने के लिये आवश्यक है कि केवल स्वच्छ भोजन और जल पान उपयोग में लाओ और कोई मैली वस्तु मुंह में न डाली जाए॥

जो लोग नीचे लिखे नियमों का पालन करेंगे वे दस्त रोग और पेचिश से सुरक्षित रहेंगे:—

१. बहुत से लोग जो दस्त रोग और पेचिश रोग में ग्रस्त होते हैं उन को ये मलीन पानी पीने के कारण हो जाते हैं। रोग-कृमि अधिकता से उन लोगों के मल में निकलते हैं जिन्हें यह रोग होता है। बहुत सी टट्टियां,

कुओं और जल स्थानों के निकट होती हैं। वर्षा द्वारा मल मूत्र इन कुओं और जल स्थानों में चला जाता है। कभी २ कोई २ लोग इस मल को नालों में डाल देते या कुओं के निकटवर्ती भूमि पर फेंक देते हैं। वे लोग जो कुएं का या नाले का जल उबालते नहीं और पी लेते हैं उन को भय है कि किसी ना किसी प्रकार के दस्त या पेचिश रोग से रोगी हो जाएंगे। इस कारण से उचित है कि पीने का पानी और जिस जल से मुंह और दांत धोए जाते हैं ख़ूब उबाला जाए॥

२. पीने के पानी या भोजन को हाथ से छूना नहीं चाहिये जब तक कि हाथों को अच्छी रीति से धो के स्वच्छ न कर लिया जाए॥

३. यदि भोजन बिन धुली थालियों में रक्खा जावे या भूमि पर गिर पड़े तो उस में वे कीड़े प्रवेश कर लेंगे जिन से दस्त या पेचिश होती है। इस कारण से उचित है कि थालियां और थालियां धोने के कपड़े प्रत्येक बार उपयोग के पश्चात् उबलते जल से धो लिये जाएं। जो भोजन भूमि पर गिर जाय यदि उस को ख़ूब गर्म न करो या उस का मैला भाग काट कर अलग नहीं किया जा सकता हो तो ऐसे भोजन को फेंक देना उचित है॥

४. मक्खियों से समस्त भोजन रक्षित रक्खो। मक्खियां उन लोगों के जिन को दस्त रोग या अर्श रोग हो, मल पर बैठती हैं और उसे खाती हैं। वह मल मक्खियों के परों में भी लग जाता है। जब ये मक्खियां स्वच्छ भोजन के ऊपर बैठती है। तो रोग के लाखों कीड़े भोजन पर रह जाते हैं। मक्खियों को नाश करने के उपाय ४८ वें अध्याय में लिखे हैं॥

५. बहुधा भोजन को पका लेना चाहिये, पकाने के पश्चात् भोजन को ढांक के रखना चाहिये ताकि मक्खियां उस पर न बैठ सकें। जो साग और तरकारी बाज़ार से मोल लिये जाते हैं सब पका के खाने चाहियें और अगर खीरे ककड़ी के समान हों तो उन्हें उबलते पानी में डुबो कर छील लेना चाहिये। जो फल बाज़ार से मोल लिया जाए उसे भी खाने के पूर्व छील लेना चाहिये। यदि उबलता पानी पहिले उस के ऊपर डाल लिया जाय और तब उस को छीलें तो इस से निश्चय हो जायगा कि फल स्वच्छ है॥

ख़रबूज़ों और तरबूज़ों की फांकें जो बाज़ारों में बिकती हैं उन से दस्त और पेचिश, संग्रहणी के रोग बहुत फैलते हैं॥

६. घराने में से यदि एक को दस्त और पेचिश रोग हो जाए तो उस का मल फेंक देने के पूर्व औषधि द्वारा उस के कीड़ों को मार डालना चाहिये। इस की विधि ४७ वें अध्याय में दी है। जो तौलिया, चिलमची, कटोरा या थाली रोगी के उपयोग के हैं उन्हें घर में और कोई पुरुष या स्त्री उपयोग में न लाए॥

७. उंगलियों को मुंह में न डालना चाहिये, उंगलियों से बहुत सी अशुद्ध वस्तुएं छुई जाती हैं और यदि मुंह में डाली जाएं तो उन के द्वारा दस्त रोग के कृमि शरीर में प्रवेश कर लेंगे। रुपया पैसा और कोई सी वस्तु, स्वच्छ भोजन और जल पान के अतिरिक्त, कदापि मुंह में न डालनी चाहिये॥

८. ज्यूं ही टट्टी पतली होवे चिकित्सा उसी समय से आरम्भ कर देनी चाहिये और रोगी को आवश्यक है कि चुप चाप लेटा रहे और भोजन में संयम करे और केवल द्रव्य भोजन खाए। औषधि शीघ्र देने से रोग असाध्य नहीं होने पाता और शीघ्र ही उस की रोक हो जाती है॥



अध्याय ३१।

मोती झिरा या दाने का ज्वर।

मोती झिरा या टाइफ़ॉइड ज्वर (Typhoid Fever) एक ऐसा ज्वर है जो मोती झिरा के रोग-कृमि से होता है। साधारण रीति के अनुसार यह ज्वर तीन सप्ताह तक रहता है। परन्तु कभी २ किसी २ दशा में केवल ७ से १० दिन तक रहता है। इस के आरम्भ के लक्षण अशान्त होना, सिर की पीड़ा और आलस्य आन आ जाना हैं। सम्पूर्ण शरीर में पीड़ा और आमाशय के भाग में भी पीड़ा होती है। बहुधा आरम्भ में जाड़ा भी लगता है॥

आरम्भ में बहुधा प्रातः काल के समय ज्वर १०५ F. डिग्री रहता है और सन्ध्या काल को १०३ या १०४ F. डिग्री तक हो जाता है। नाड़ी ८० या ९० बार प्रत्येक मिनिट में चलती है। बहुत बार यह होता है कि पहिले एक या दो दिन पश्चात् ज्वर कुछ २ आता रहता है और रोगी ८ या १० दिन तक काम करता जाता है और पलंग पर नहीं लेटता है॥

रोग के पहिले कुछ दिन पश्चात् ज्वर १०३ F. डिग्री रहने लगता है रोगी के सिर में पीड़ा होती है और जीभ पर सफ़ेद तह जम जाती है, भूख नहीं लगती और यदि कुछ खाए तो क़ै हो जाती है। आमाशय तन जाता है और दुखता है। या तो कोष्ठ-बद्ध होता है या दस्त आने लगते हैं रोगी अधिक समय तक सोता है॥

रोग के दूसरे सप्ताह में रोगी का ज्वर अधिक होता है पिस्सू के काटे के समान लाल धब्बे उदर पर दिखाई देते हैं। ओंठ और जीभ गहरे भूरे रंग की पपड़ी से भर जाती है। ८ या १० ऐसे रोगियों में से एक रोगी की आंत में से रक्त निकलता है, कभी २ तो केवल इतना ही रक्त निकलता है कि आंतों के मल को हलका लाल रंग का कर देता है। परन्तु कभी २ इतना रक्त निकलता है कि मृत्यु हो जाती है। रोगी कभी २ सरसाम की दशा में हो जाता है। बहुत सी दशाओं में कोष्ठ-बद्ध हो जाता है॥

तीसरे सप्ताह में ज्वर धीरे २ घटने लगता है और रोग आरम्भ होने के २१ दिन में स्वाभाविक गति पर आ जाता या उतर जाता है।

आंतों का रक्त बहने और उन में छेद हो जाने का भय रोग के तीसरे सप्ताह में अधिक होता है॥

लगातार ज्वर रहे या किसी भी प्रकार का ज्वर क्यों न हो एक चतुर डाक्टर को बुलाना चाहिये, क्योंकि वह रक्त की निश्चय पूर्वक परीक्षा कर के बता सकेगा कि मोती झिरा ज्वर है या नहीं और इस कारण से कि मोती झिरा के रोग का मल मूत्र औषधि डाल कर शुद्ध करना आवश्यक है सो मुख्य बात है कि कैसा ज्वर है यह शीघ्र ही निर्णय कर लिया जाए॥

चिकित्सा

मोती झिरा ज्वर में औषधि का उपयोग और गुण कम है। अच्छी रीति से सेवा टहल और उचित भोजन औषधि से अधिक लाभदायक हैं। रोगी को एक यथोचित वायु वाले कमरे में रखना चाहिये और आरम्भ ही से उसे पलंग पर लिटा दो॥

उस का भोजन अधिकांश द्रव्य पदार्थ होवें। यदि अच्छा ताज़ा दूध प्राप्त हो सके तो वह भोजन का एक अंश हो। दूध रोगी को देने के पूर्व उबालना चाहिये। शुरुआ छान कर उस के सब दृढ़ पदार्थ निकाल कर और अण्डे जेली के या अध-कच्चे उबाल कर, चांवल का मांड, भूने हुए मैदे का शुरुआ, कस्टर्ड (पकाया हुआ दूध अंडा और खांड की खीर), पाव-रोटी को सेंक कर दूध में भिगोलें, (पर यह खूब चबाना चाहिये,) भूने आलू; उबाला या भूना हुआ भात, ये सब पदार्थ खाने को दे सकते हो। (देखो ४७ वां अध्याय इन भोजनों के पकाने की विधियां) रोगी को एक समय बहुत सा भोजन खाने को मत दो। यदि रोगी की सेवा के लिये कोई नर्स लगातार नहीं है तो पलंग के समीप एक सुराही उबाले हुए स्वच्छ पानी की रक्खो कि रोगी इच्छानुसार खूब अच्छी रीति से पीवे। इस ज्वर के रोगी को बहुत पानी पीना चाहिये। ३ या चार सेर प्रति दिन पीना चाहिये॥

मुंह धोना चाहिये और कूंची से दांत और जीभ समय २ पर धोनी चाहिये नम्बर ६ उपचार करो (देखो अध्याय ५०)॥

१५ या २० मिनिट तक उदर पर यदि पीड़ा हो तो पीड़ा मिटाने के लिये सेकन सेवन करो॥

यदि दस्त आवें तो (स्टार्च starch) श्वेतसार की पिचकारी दो (देखो अध्याय २५)। यदि कोष्ठ-बद्ध हो तो गर्म पानी की पिचकारी प्रत्येक दूसरे दिन दो (देखो अध्याय २०)॥

ज्वर को उतारने के लिये रोगी को ठण्डे जल से स्पंज (पानी में कपड़ा भिगो के पोंछना) करना चाहिये। त्वचा को १५ या २० मिनिट तक या और अधिक समय तक पोंछो। उस को गीले कपड़े से स्नान करा के तौलिया से न पोंछो पर उसे पंखा कर के सुखाओ। यह उत्तम चिकित्सा है क्योंकि इस से ज्वर उतरता है और रोगी की जान में जान आती है और उसे सब प्रकार से भाता है। स्पंज के गीले कपड़े से स्नान कराने से सर्दी लग जाने का कुछ भी भय नहीं है और स्पंज या ऐसा स्नान यदि ज्वर बढ़े तो दिन में कई बार करा सकते हो। (देखो सूचना पृष्ठ ११३)॥

एक कपड़ा अति ठण्डे पानी में भिगो कर और निचोड़ कर रोगी के सिर पर सिर पीड़ा निमित्त लगाना चाहिये। परन्तु कपड़ा ५ या ६ मिनिट पश्चात् बार २ भिगोना उचित है॥

यदि टट्टी में कुछ रक्त दिखाई देवे तो १० या १२ घण्टों तक कुछ भी भोजन न देना चाहिये। यदि बर्फ़ मिल सकती है तो ला कर कुछ छोटे टुकड़े कर के एक कपड़े में लपेट कर पेट पर रक्खो। ठण्ड से रक्त बहना बन्द हो जायगा॥

जब ज्वर उतर जाता है तो रोगी को भूक लगने लगती है तो उसे कड़ा मांस और तरकारी न खाने दो॥

जब मोती झिरा ज्वर के रोगी की सेवा टहल कर रहे हो तो बड़ी सावधानी करनी चाहिये कि यह रोग दूसरों को न लगे। मल, मूत्र और थूक में इस रोग के रोग-कृमि होते हैं इस लिये इन तीनों को औषधि डाल कर शुद्ध करना आवश्यक है। यदि बाइक्लोराइड आव मरक्युरी (Bi-Chloride of Mercury) प्राप्त हो सके तो उस की १५ ग्रेन एक सेर मल या मूत्र में डालो और साफ़ करने की शीघ्रता न करो इस को एक या अधिक घण्टे रहने दो तब स्वच्छ कराओ। (देखो ४४ वें अध्याय में मल मूत्र को शुद्ध करने की विधियां)। थूकना काग़ज़ पर चाहिये और इन काग़ज़ों को जला डालना चाहिये॥

रोगी के भोजन के बर्तन उसी के उपयोग में रहें और घर के दूसरे लोगों के बर्तनों में न मिल जावें। उन को रोगी के कमरे में रखना चाहिये और प्रत्येक बार उपयोग करने के पश्चात् उबालना चाहिये। जो कुछ भोजन रोगी का बच जाए उसे दूसरे लोगों को कदापि न खाना चाहिये। वे लोग जो रोगी की सेवा टहल में हैं रसोई घर में न जाएं जहां पर दूसरों के लिये भोजन पकता है॥

तौलिया और रूमाल जो रोगी ने उपयोग किये हों उन को उबालना चाहिये॥

नर्स को अपनी रक्षा करनी चाहिये। एक लोशन बायक्लोराइड ऑव मरक्यूरी" १५ ग्रेन की शक्ति का १ सेर जल में मिलाकर कमरे में रखना चाहिये और रोगी को प्रत्येक बार भोजन करा कर या उसे धो कर इस "लोशन" से नर्स को अपने हाथ धोलेने चाहिये॥

जब रोगी अच्छा हो जाए तो पलंग का गद्दा जला देना चाहिये और पलंग के शेष कपड़े और दूसरे कपड़े उबाल डालने चाहिये(कमरे को चूने से पुता लेना चाहिये। बाइक्लोराइड आव मरक्यूरी से जो १ सेर जल में १५ ग्रेन डाला जाय फ़र्श खूब भली भांति धुलवानी चाहिये (देखो ४७ वां अध्याय कमरा इत्यादि स्वच्छ करने की सूचना)॥

रोग के समय और अच्छे होने के दो हफ़्ते पश्चात् "यूरोट्रोपिन" (Urotropin) की १० ग्रेन मूत्र के रोग-कृमि को नाश करने के हेतु प्रति दिन देना चाहिये॥

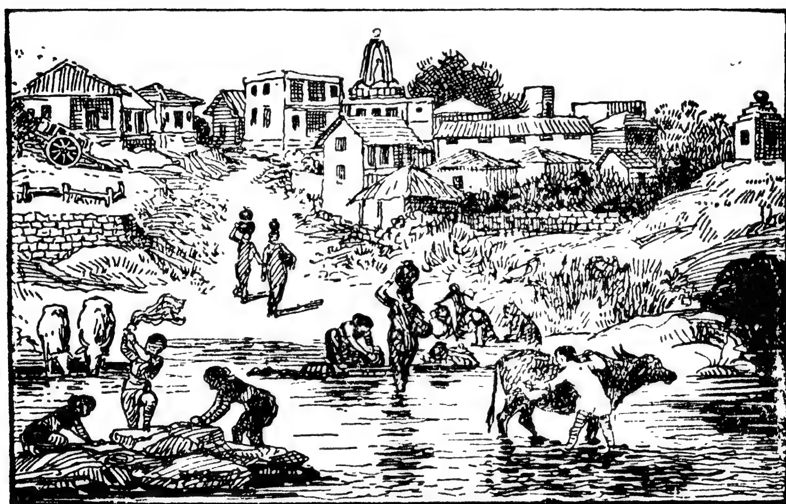
मोती-झिरा ज्वर की रोक।

मोती-झिरा एक ऐसा रोग है जिसे वे सब रोक सकते हैं जो इस बात की सावधानी करें कि इन के मुंह में क्या जाता है। इस के रोग-कृमि केवल मुंह द्वारा घुसते हैं और बहुधा ये जल और भोजन में होते हैं। मल बहुधा ऐसे स्थानों में फेंका जाता है जहां उस का कुछ २ अंश कुओं, नालों, और तालाबों में चला जाता है। इस कारण पीने के लिये या मुंह धोने या उन भोजनों के लिये जो बिना पकाये खाये जाएं केवल उबाले हुए जल का उपयोग करो। मोती-झिरा ज्वर बहुधा दूध से भी लग जाता है इस लिये दूध को उपयोग के पूर्व उबालना आवश्यक है। मोती-झिरा ज्वर झींगों या छिलकेवाली मछली और ऑइस्टर (मछली की जाति oyster) खाने से भी होता है, ये मनुष्य के खाने योग्यपदार्थ नहीं हैं परन्तु यदि उन को खाओ तो खूब उबाल डालो॥

उस भूमि में जहां सबज़ी उत्पन्न होती है कभी २ मनुष्य के मल का खाद डाला है। रोग-कृमि जो मल में होते हैं सबज़ी के पत्तों और जड़ों में चिपक जाते हैं। इस लिए खाने के पूर्व साग तरकारी पकानी चाहिये। मैले कुचैले हाथों से फल तोड़े और एकत्र किये जाते हैं, और

फल बहुधा एकत्र कर के मैली जगह पर रक्खे जाते हैं इस कारण फल को पहिले उबाले पानी से धो के छील के खाना उचित है ॥

मक्खियां मोती-झिरा ज्वर फैलाती हैं। वे इस को फैलाने के कार्य्य में इतनी प्रवृत्त हैं कि साधारण मक्खी को "टाईफ़ाइड फ़्लाई" (typhoid fly) या मोती-झिरा की मक्खी का नाम मिला है। रसोई घर की खिड़कियां और द्वारों पर जाली लगा कर मक्खियों को दूर रक्खो। पक्का खाना अलमारी में रक्खो जहां पर मक्खी प्रवेश न कर सक्ती हो। जब भोजन मेज़ पर खाने के हेतु रक्खा है तो मक्खी दूर करने के लिये उसे जाली से ढांको॥ (देखो उदाहरण पृष्ठ ३१) ॥

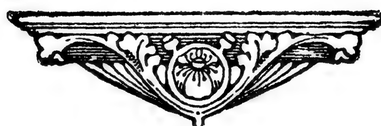


एक रीति मोतीझिरा, हैज़ा इत्यादि फैलाने की।

कभी कोई बर्तन थाली, प्याला, चम्मच, तौलिया या रुमाल जो मोती-झिरा के रोगी ने उपयोग किया है उपयोग में न लाओ। कभी ऐसा भोजन जो उस कमरे में रक्खा था जहां पर मोती-झिरा का रोगी है मत खाओ। मोती-झिरा, दस्त रोग, अश रोग और हैज़े के रोग-कृमि तालाबों में पाये जाते हैं। सो कभी तालाबों में स्नान न करो; कहीं पानी मुह में चला जाय और असाध्य रोग से बीमार हो जाओ॥

वर्तमान समय में एक नवीन उपाय मोती-झिरा ज्वर को रोकने का निकला है। यह बहुत कर वैसा ही है जैसा कि बड़ी माता के रोग को टीका लगा कर रोकने का है। चेप जो मोती-झिरा ज्वर के विरुद्ध है एक हाइपोडर्मिक (hypodermic) पिचकारी से शरीर में घुसाते हैं और जो कोई इस प्रकार का मोती-झिरा का टीका लगवाता है दो या तीन वर्ष तक सुरक्षित रहता है। यह उपाय उन लोगों को उपयोग करना चाहिये जो ऐसे स्थानों में जहां पर अधिक मोती-झिरा ज्वर है रहते हैं और उन लोगों को भी जो देशाटन करते हैं और इस लिए अपने भोजन और पानी के विषय में यथायोग्य सावधानी नहीं कर सक्ते हैं॥

एक और मुख्य बात मोती-झिरा रोग के रोक की यह है कि शरीर में एक स्वाभाविक विमुख शक्ति है जो रोग नहीं होने देती। मदिरा का उपयोग, तम्बाकू, पान सुपारी या अफ़ीम मोती-झिरा रोग के रोग-कृमि का मार्ग सुगम करती हैं और वे शीघ्र जड़ पकड़ते हैं। यदि किसी को अजीर्ण या दस्त रोग है तो उस का महास्रोत ऐसी दशा में है कि उसे मोती-झिरा शीघ्र लग सकता है उस पुरुष की अपेक्षा जिस का महास्रोत स्वस्थ दशा में है॥



अध्याय ३२।

हैज़ा।

पृथ्वी के प्रायः प्रत्येक देश में किसी न किसी समय हैज़े की मरी फैलती है और उन सब में से जो इस में ग्रस्त होते हैं १० में से ५ मृत्यु भक्ष्य होते हैं। यह रोग प्रायः सदैव ही एशिया के बड़े नगरों में रहता है। और सब को विदित होना चाहिये कि यह रोग कैसे फैलता है ता कि वे इस से रक्षित होने का उपाय कर सकें। और इस कारण कि इस रोग में सदा मृत्यु नहीं होती तो सब को इस की अति लाभकारी चिकित्सा भी जाननी चाहिये॥

इस रोग का कारण हैज़े के कृमि हैं। ये कृमि भोजन और पानी के साथ मुंह द्वारा शरीर में प्रवेश करते हैं या उंगलियों द्वारा या और किसी वस्तु को मुंह में डालने से घुस जाते हैं। जब कृमि शरीर में प्रवेश कर चुकते हैं तो एक या दो दिन में या अधिक से अधिक ५ दिन से कम में यह रोग हो जाता है। यह रोग कुछ पदार्थों में भी ऐसी वस्तु को खाने से लग जाता है जिस में बहुत से हज़े के रोग-कृमि हों॥

लक्षण।

एक उदाहरण की रीति पर हज़े के रोग के लक्षण ये हैं:—

१२ या १८ घण्टे भोजन या कुछ पीने के पश्चात जिस में हज़े के रोग कृमि हैं पेट में पीड़ा होगी, थोड़े ही काल में दस्त आने लगते हैं और ऐसी तेज़ी से होते हैं कि आंतों से चांवल के पानी सरीके दस्त लगातार होते रहते हैं॥

किसी २ दशा में रोग ठण्ड देके, प्यास, मैली जीभ और आमाशय में ज़रा २ सी पीड़ा से आरम्भ होता है और दिन में तीन चार पतले दस्त आते हैं। रोगी अति निर्बल हो जाता है। दूसरे दिन दस्त शीघ्र शीघ्र और बहुत होते हैं। दस्त श्वेत चांवल के पानी सरीके होते हैं और अति बेग से आते हैं। और क्रय बड़े ज़ोर से अधिक होती है। वमन में खाया हुआ भोजन प्रथम निकलता है। परन्तु पीछे दस्तों सरीकी क्रय होती हैं।

तीक्ष्ण प्यास लगती है; टांगों में, बांहों में, पीठ में और शरीर के और दूसरे भागों में कठिन पीड़ा होती है॥

ज्यूं २ रोग अधिकता पूर्वक बढ़ता है त्यूं २ रोगी की दशा भयंकर दीख पड़ती है। नेत्र धंस जाते और उन के नीचे काले गड्ढे पड़ जाते हैं। नाक नुकीली और नोकीली दिखाई देती है। गालों में गड्ढे पड़ जाते हैं, होंठ नीले शरीर ठण्डा पड़ जाता है और गीला होता है। बेशुमार पसीने से हाथों और उंगलियों की त्वचा धोबी के हाथों के चमड़े के समान जिस के हाथ सम्पूर्ण दिन गर्म पानी और साबुन में डूबे रहे हों बन जाती है। वाणी निर्बल हो जाती है, श्वास ठण्डा हो जाता है। अति कम मूत्र निकलता है॥

ऊपर दिये हुए वर्णन के समान सदैव विसूचिका रोग नहीं होता है। कभी २ रोगी को साधारण दस्त कुछ काल तक आते हैं और तब उन का परिवर्तन विसूचिका रोग में हो जाता है॥

विसूचिका की कई दशाओं में रोगी पलंग पर लेट नहीं जाता है। उसे दस्त आते हैं और कम मूत्र निकलता है और निर्बल हो जाता है। ऐसी दशाओं में रोग खूब अधिक फैल जाता है क्योंकि रोगी लोग घूमते फिरते और दूसरे लोगों से मिलते जुलते रहते हैं॥

हैज़े की मरी में रोग इतना कष्टदायक होता है कि जो रोग ग्रस्त होते हैं उन की टांगों और बांहों में इतनी भयंकर मरोड़ होती है कि बिना दस्त हुए थोड़े ही घण्टों में उन की मृत्यु हो जाती है॥

जब रोग के भयंकर लक्षण मिट चुके हों। तिस पर भी रोगी की मृत्यु का बड़ा भय रहता है यदि गुर्दों को मूत्र का उत्तेजन न किया जाय॥

रोग की परीक्षा करना।

जब विसूचिका रोग की मरी फैली हो तो किसी भी प्रकार के दस्त आने को इस रोग में गिनना उचित है और उस के समान औषधि भी करनी आवश्यक है। अधिक चांवल के पानी सरीके दस्त आने, अशक्त पड़ जाना, त्वचा का लसलसी और ठण्डी पड़ जाना, गालों का भटक जाना, नेत्रों का धंस जाना, और पैर की उंगलियों का सिकुड़ जाना, कम मूत्र निकलना, विसूचिका के मुख्य लक्षण हैं॥

हैज़ा बालकों में।

बालकों में हैज़ा जब होता है तो चिन्ता नहीं की जाती इस लिये कि वे लक्षण जो पूर्ण मनुष्य में होते हैं वही बालकों में नहीं होते हैं। बहुत बार जब बालकों को विसूचिका का रोग होता है तो उस के लक्षण दस्त पेचिश के लक्षणों की नाईं होते हैं (देखो २६ अध्याय)। बहुत से बालकों को जब हैज़ा होता है तब कुछ २ दस्त आते हैं और हाथ पांव में मुख्य ऐंठन दिखाई देती है। जब कभी किसी मुहल्ले में विसूचिका का रोग फैला हो और बालक को दस्त और पेट में मरोड़ होती हो या हाथ या पांव में ऐंठन हो तो जैसे हैज़े के रोगी की सेवा टहल करते हो वैसे ही उस की भी करनी चाहिये॥

चिकित्सा।

चिकित्सा जितनी शीघ्र हो सके करो। ज्यूं ही रोग का निर्णय हो जाए तो निकटवर्ती स्वास्थ्य अध्यक्ष (Health Officer) को संदेश भेजो और यदि हो सके तो चतुर डाक्टर को रोगी की देख भाल को बुलाओ॥

जैसे ही मरोड़ या दस्त हों रोगी को पलंग पर लिटा देना आवश्यक है। एक बेडपैन (बिस्तर पर टट्टी फिरने का बर्तन) और मूत्र करने का बर्तन लगाओ कि रोगी को पलंग से न उठना पड़े। बहुत सा ठण्डा उबाला हुआ जल पीने को दो और इस में निम्बू या काग़ज़ी निम्बू का अर्क़ डालो। कुछ भी भोजन चांवल के पानी और अण्डे की सफ़ेदी का पानी छोड़ कर मत दो। (देखो ४७ अध्याय) यदि वमन करने लगे तो पानी को छोड़ और भोजन कुछ समय तक बन्द कर दो पर खूब पानी दो। उदर में सेंकन सेवन करना लाभदायक होता है (देखो २० अध्याय)॥

कुछ काल से हैज़े की चिकित्सा के लिये एक अति लाभदायक चिकित्सा निकाली गई है। इस चिकित्सा में नमक घुला हुआ पानी नसों में डाला जाता है। निर्मल नमक के १२० ग्रेन एक सेर निर्मल उबाले जल में डाले जाते हैं और फिर उबाल कर स्वच्छ करते हैं और ठण्डा करते हैं, तब टांग या बांह की नस में डालते हैं। यह हैज़े के लिये उत्तम चिकित्सा है इस प्रकार से कई बार नसों में डालना पड़ता है और इस चिकित्सा का सेवन केवल एक डाक्टर या चतुर नर्स कर सकती है॥

यदि एक डाक्टर या चतुर नर्स न मिल सके तो निम्न लिखित चिकित्सा करोः—

रोगी को गर्म रक्खो। यदि आवश्यकता हो तो गर्म पानी की बोतलों को कपड़े में लपेट कर उस के शरीर पर लगाओ। प्रत्येक ३ घण्टे दो सेर नमक के पानी का गर्म (१०५ F. डीग्री) एनिमा पिचकारी दो। ८ चाय के चम्मच भर के नमक पानी में डालो और दिन में तीन बार (१०५ F. डिग्री उष्णता का) गर्म टैनिक एसिड (Tannic Acid) की पिचकारी दो। यह ७५ ग्रेन टनिक ऐसिड के आध सेर पानी में मिलाने से बनता है। और इस से दस्त रुक जाते हैं॥

एक और उपाय कुछ काल से प्रचलित है और वह भी लाभदायक है कि नमकीन पिचकारी के साथ पोटासियम परमेंगनेट (Potassium Permanganate) देते हैं। रोगी को पानी के बदले पोटासियम परमेंगनेट का गलाव पिलाओ वह ऐसे बनता है कि १० या बारा ग्रेन पोटासियम परमेंगनेट को १ सेर पानी में मिलाना और इस गलाव का दो वा तीन औन्स प्रत्येक बार पीने को देना इस के साथ प्रत्येक आध घण्टे एक गोली दो ग्रेन पोटासियम परमेंगनेट की खिलानी चाहिये। पोटासियम परमेंगनेट में ज़रा सा कैओलीन (Kaolin) और वेसलीन (Vaseline) मिलाओ तो गोलियां सुगमता से बन जाती हैं। जब उन की गोली बन गई तो केराटीन (Keratin) से लपेट देना आवश्यक है। पहिले दिन इन गोलियों में से एक २ गोली आध आध घण्टे में खिलानी चाहिये और इस के पश्चात् एक २ गोली प्रत्येक ४ घण्टे में खिलाओ ज्यूं ही दस्त बन्द हो जायें तो चांवल का मांड थोड़ा २ कर के रोगी को पिलाना चाहिये॥

यद्यपि लक्षण अच्छे हों और रोगी भी बहुत अच्छा लगने लगे तथापि नमक की पिचकारी बन्द न करनी चाहिये, पर लगातार देनी चाहिये। (जब दस्त बंद हो जायें तो टैनिक ऐसिड की पिचकारी बन्द कर दो) निम्बू का अर्क मिला कर रोगी को कहो कि खूब पिये॥

जब तक मूत्र न होने लगे रोग का भय दूर हुआ न समझो, इस लिए नमक की पिचकारी दो जब तक गुर्दे अपने मूत्र बनाने के काम में प्रवृत्त हो जायें। पीठ के निचले भाग में सेंकन सेवन करो और मालिश भी करो॥

कभी साधारण पेटेन्ट दस्त या संग्रहणी की औषधि का उपयोग न करो। न विस्की या कोई दूसरी नशे की वस्तु का उपयोग करो॥

हैज़े के रोग में नर्स के लिये जो टहल करती है शिक्षाएं।

प्रथम काम हैज़े के रोग में यह है कि यदि एक अलग इस रोग का

अस्पताल है। तो वहां पर रोगी को ले जाना चाहिये। यदि न हो तो रोगी को एक कमरे में रक्खो जिस में केवल एक पलंग, एक मेज़ और एक चौकी हो। खिड़कियों को खोल के रक्खो। और यदि बन पड़े तो द्वार और खिड़कियों पर चिक लगाओ जिस से मक्खियां भीतर प्रवेश न करें॥

एक हैज़े के रोगी के द्वारा यदि उस के दस्तों को सावधानी से औषधि द्वारा शुद्ध न करोगे तो सम्पूर्ण गांव या नगर में रोग फैल जा सक्ता है। एक बर्तन में दस्तों को डालो और तब १ से १००० बाइक्लोराइड आफ मरक्यूरी (Bi-Chloride of Mercury) गलाव (आध सेर पानी में साढ़े सात ग्रेन बाइ-क्लोराइड आव मरक्यूरी का मिला कर बनाओ) को समान कर के डालो। इस शुद्ध करने की औषधि को डाल कर फेंकने के पूर्व एक घण्टे रहने दो। मल मूत्र को कभी तालाब या नाले या कुए के निकट न फेंको॥

यदि बाइ-क्लोराइड आव मरक्यूरी प्राप्त न कर सको तो १०० फ़ीट या उस से और अधिक दूर कुओं और नालों के अन्तर पर एक गड्ढा खुदवाओ और मल मूत्र उस में फेंक दो और उस पर चूना और राख को डाल कर मून्द दो। यह उपाय केवल उन दिनों में जब पानी नहीं बरसता कर सकते हो, परन्तु बरसात में यदि कोई शुद्ध करने की औषधि प्राप्त न कर सको तो मल मूत्र को एक टीन में डाल कर उबाल डालो तब फेंक दो॥

विसूचिका रोग के मलमूत्र इतने विषैले होते हैं (क्योंकि उन में हैज़े के कृमि हैं) कि यदि उनका एक बून्द भी जो राई के दाने से बड़ा न हो किसी भोजन या पीने के पानी में चला जाय तो जो मनुष्य वह भोजन खाएगा या पानी पियेगा तो उसे हैज़ा हो जायगा॥

कोई भी बर्तन जो रोगी के खाने और पीने के उपयोग में आया है जब तक उबाला न जाय रोगी के कमरे से बाहर न ले जाओ। जिस २ वस्तु को हैज़े का रोगी अपने होठों और हाथों से छूए उन में इस रोग का विष प्रवेश करता है, क्योंकि रोगी के होठों और हाथों पर हैज़े के कृमि होते हैं। ऐसी वस्तुओं को अन्य लोगों को छूना अनुचित है। जो नर्स रोगी की सेवा टहल करती है वह अपने हाथ कई बार बाइ-क्लोराइड आव मरक्यूरी के पानी में जो १००० अंश जल में १ अंश डाला हो धोया करे। वह अपनी उंगलियां कभी मुंह में न डाले रोगी के कमरे में वह कोई वस्तु कभी न खाया करे। और सदैव अपना भोजन खाने के पूर्व उचित है कि साबून से भली भांति हाथ धो कर बाइक्लोराइड आव मरक्यूरी के १-१००० अंश में कई मिनिट तक डुबोए रक्खे॥

जब रोगी अच्छा हो जाय तो जिस कोठरी में वह रहता था, और जो २ सामान उस ने उपयोग किया उस सब को औषधि द्वारा शुद्ध करना चाहिये, इस शुद्ध करने की विधि ४७ वें अध्याय में लिखी है॥

कैसे प्रत्येक जन विसूचिका से रक्षित रह सकता है।

यह विदित है कि यदि अधिकाई से हैज़े के रोग कृमि न हों तो जठररस इन को नाश कर देगा, इस कारण इस रोग से रक्षित रहने का सब से उत्तम उपाय यह है कि आमाशय और आंतो को स्वस्थ रक्खो और सम्पूर्ण शरीर भी स्वस्थ रहे। जब विसूचिका मरी फली हो तो बहुधा वे ही जन इस रोग में ग्रस्त हो मर जाते हैं जो मदिरा आदि पी कर अपने शरीर को अशक्त कर लेते हैं॥

जब आमाशय खाली हो या शरीर थका हुआ हो तो ऐसी दशा में इस रोग के लग जाने का अधिक भय होता है॥

हैज़े के रोग-कृमि सदैव मुंह द्वारा प्रवेश करते हैं इस कारण इस रोग से बिलकुल रक्षित होने के लिये केवल यह ही आवश्यक है कि समस्त भोजन और पीने की वस्तुएं अवश्य उबाल ली जायें और इस की भी सावधानी करें कि इस के पश्चात् मक्खियां उस पर न बैठने पावें॥

उंगलियां मुंह में कदापि न डालनी चाहियें॥

बहुत सी दशाओं में यह रोग कच्चे फल अथवा तरकारी खाने से हो जाता है॥

हैज़े से रक्षित रहने के लिये आवश्यक है कि समस्त चेतनाएं जो ३० वें या ३१ वें अध्यायों में लिखी हैं पूर्ण रूप से पालन की जायें। हैज़े की मरी के समय में प्रत्येक जन को इस रोग से रक्षित रहने के लिये जो उपाय बताये गये हैं उन को हम फिर सुविधा के लिये दुहराते हैं॥

१. पूर्ण रीति से इस बात का निश्चय कर लो कि समस्त पानी जो पीने और दांतों को स्वच्छ करने के लिये उपयोग करते हो उबाला हुआ हो॥

२. ऐसा भोजन जो पकाया न जा चुका हो कदापि न खाना चाहिये और वह भी केवल ऐसा खाना चाहिये कि गर्म भाप निकलती हो॥

३. खरबूज़े, खीरे और कोई भी फल बिना पकाए हुए नहीं खाने चाहियें॥

४. जो वस्तुएं बाज़ार से मोल ली जाती हैं, वे सब हानिकारक होती हैं। इन को जब तक उबाल न लो तब तक न खाना चाहियें॥

५. जिन वस्तुओं को हैज़े के रोगी ने उपयोग किया हो जैसे तौलिया रुमाल, पलंग के कपड़े, कटोरे और चम्चे इन को रोगी की कोठरी के बाहर लाकर अच्छी रीति से उबाले बिना उपयोग में न लाना चाहिये॥

६. मक्खियां, तिलचट्टा और च्यूंटियों के द्वारा हैज़े के रोग-कृमि फैलते हैं इस कारण भोजन को ढांक कर रखना चाहिये कि यह दुखदाई जन्तु उस तक न पहुंच पावें। इस कारण भोजन पकाने के पश्चात् बड़ी सावधानी से ढांक के रखना चाहिये कि मुख्य कर मक्खियां उस तक न पहुंचें॥

७. भोजन या जल पान छूने के पूर्व हाथों को साबुन से खूब स्वच्छ करना चाहिये॥

८. जिन घरानों या मुहल्लों में हैज़े की मरी फैली हो उन से परस्पर सम्बन्ध न रखना चाहिये॥

९. देशाटन करते समय अपना गिलास, अपनी चिलमची और अपनी तौलिया पास रक्खो क्योंकि रेल गाड़ी और होटलों का यही सामान उपयोग करना हानिकारक है॥



अध्याय ३३।

"टाईफ़स' ज्वर" विषम ज्वर; महामरी।

"टाईफ़स" ज्वर (Typhus Fever)

टाईफ़स ज्वर एक ऐसा रोग है जिस के कई नाम हैं, यह बन्दी गृह का ज्वर, जहाज़ी ज्वर और अकाल का ज्वर भी कहलाता है। इन नामों से ज्वर का स्वभाव प्रगट हो जाता है। अर्थात् यह ऐसा ज्वर है जो उन लोगों में पाया जाता है जो पौष्टिक भोजन नहीं खाते अर्थात् जिन्हें यथोचित भोजन नहीं मिलता है जो घनी बस्ती में निवास करते हैं और अयोग्य स्थानों में वास करते हैं या अस्वस्थ्य स्थानों में वास करते हैं। अकाल ग्रस्त प्रदेशों में यह रोग मरी के समान हो जाता है॥

यह बात निश्चय पूर्वक निर्णय की गई है कि टाइफ़स ज्वर शरीर के चिल्लड़ और सिर की जुओं द्वारा फैलता है। दूसरे कीड़ों के द्वारा भी जैसे खटमल इस का लग जाना सम्भव है। यह भी सम्भव है कि टाईफ़स ज्वर के मल मूत्र द्वारा भोजन और पीने का जल बिगड़ जावे जिस से यह रोग औरों को लग जाए॥

लक्षण।

यह रोग एका एकी लग जाता है इस ज्वर से पीड़ित रोग की जुएं जब किसी जन को काटती हैं तो १२ दिन से अधिक न बीतेंगे कि वह रोग लग जायगा। प्रथम तो ठण्ड लगती है फिर तेज़ी से ज्वर चढ़ता है और सरसाम भी सम्भवतः हो जाये। नेत्रों में जल निकलता है और वह लाल हो जाते हैं। तीसरे या चौथे दिन ज्वर १०४ F. डिग्री या १०५ F. डिग्री या १०६ F. डिग्री ऊंचा चढ़ जाता है। तब चार या पांच दिन तक प्रातः काल के समय इस से कुछ कम चढ़ेगा परन्तु सन्ध्या काल के समय ज्वर १०३ या १०४ F. डिग्री तक पहुंच जायगा, साधारण नियमानुसार ज्वर एका एकी प्रायः १४ दिन रह कर चला जाता है। ज्वर के उतरते समय में बहुत ही पसीना निकलता है॥

ज्वर के दूसरे तीसरे दिन शरीर पर कुछ दाने से निकल आते हैं। सामने के हाथों और कन्धों पर तो बहुत अच्छी तरह से दिखाई देते हैं। यह दाने पहिले तो खसरे के दानों के समान दिखाई पड़ते हैं परन्तु थोड़ी देर के पश्चात् इन दानों के, जो पहिले दिखाई देते थे, मध्य में एक नीले रंग की नाक दिखाई देने लगती है ॥

चिकित्सा।

औषधि रोग को चंगा नहीं कर सकती है और न उस के नियत समय से पूर्व रोग को बन्द कर सकती है, जो चिकित्सा ३१ अध्याय में मोती झिरा ज्वर के विषय में वर्णन की गई है वही इस टाइफ़स ज्वर में भी अति उत्तम होगी। रोगी को पलंग पर रखना चाहिये। भला होगा कि पलंग को बरामदे में या बाहर सूर्य्य के प्रकाश से बचाव करके रक्खो। रोगी को उबला हुआ जल बहुत पिलाओ और फल के अर्क़ भी दो। उसे चांवल का मांड, अण्डे, शुरुआ, कस्टर्ड, सेंकी हुई रोटी, उबला हुआ दूध देना चाहिये ॥

कैसे रोग से सुरक्षित रह सकते हैं।

यह रोग उन लोगों में बहुधा नहीं पाया जाता है जो स्वच्छ घरों में रहते हैं और स्वच्छ कपड़े पहिनते हैं, क्योंकि ऐसे लोगों के न तो बिस्तर में न कपड़ों में जुएं होती हैं ॥

यदि किसी के पड़ोस में टाइफ़स ज्वर हो तो बड़ी सावधानी करो कि जुएं न काट लें। यदि रोगियों पे जाना आवश्यक है तो उन के कपड़ों को मत छुओ, उन के बिस्तर पर मत बैठो और उन के कोई कपड़े न पहिनो। टोपी, जूती, या मोज़े जो इस रोग के रोगी ने पहिने हैं न पहिनो ॥

रोगी की सेवा टहल में उन का पलंग और पलंग के कपड़े स्वच्छ रक्खो, उन के बाल काट के छोटे कर दो। जब रोगी चंगा हो जाता है तो उस के बिस्तर कपड़ों को उबाल कर स्वच्छ कर डालो ॥

विषम ज्वर (डेङ्गयू फ़ीवर Dengue Fever)

विषम ज्वर मच्छरों द्वारा फैलता है। जब वे मच्छर जो विषम ज्वर का विष ले जाते हैं काटते हैं तो ३ से ६ दिन व्यतीत होने पर यह रोग बढ़ता है। बहुधा एक दम से रोग आक्रमण करता है। प्रथम में ठण्ड लगती है फिर शरीर के भागों में तीक्ष्ण पीड़ा होती है। जैसे हाथ

पांव, पीठ या सिर में पीड़ा होती है। सदैव सिर में नेत्रों के सामने के भाग और पीछे की ओर अति ही तीक्ष्ण पीड़ा होती है। नेत्रों से जल बहता है और वे लाल हो जाते हैं। ज्वर १०३ से १०५ F. डिग्री तक चढ़ता है, भूक नहीं लगती। जी मितलाता है और वमन भी होती है। बालकों को तो सरसाम हो जाता है और हाथ पांव पेंठने लगते है तीसरे दिन बहुधा ज्वर बहुत पसीने के साथ उतरता है। कभी २ बहुत मूत्र होता है और कभी २ बड़े ज़ोर से दस्त आते हैं। इस के पश्चात् रोगी एक या दो दिन के लिये अच्छा रहता है फिर पीड़ा होने लगती है और फिर ज्वर चढ़ जाता है हाथों पर, धड़ पर और टांगों पर कुछ दाने से कदाचित् निकलें, दूसरी बार जब ज्वर चढ़ता है तो केवल थोड़ी ही देर तक रह कर उतर जाता है॥

चिकित्सा

रोगी को पलंग पर रात और दिन मच्छर दानी के भीतर सोना चाहिये क्योंकि मच्छर रोगी को काट कर दूसरों को भी काटेंगे और रोग फैलाएंगे। रोगी को केवल चांवल का मांड, अधकच्चे उबले अण्डे और फल यह भोजन दो। आरम्भ ही में एक खुराक अरंडी के तेल की या एपसम साल्टस (Epsom Salts) की दो। ठण्डा कपड़ा या बर्फ़ सिर की पीड़ा मिटाने के लिये रक्खो। रोगी को उबला ठण्डा पानी और फलों का सत या नीबू का शरबत (lemonade) पीने को दो। जिन २ भागों में पीड़ा हो उन्हें सेंकन सेवन करो॥

रोग से सुरक्षित होने के लिये उचित है कि मच्छरों के काटने से बचो। पलंग पर मच्छर दानी लगाओ और जब देशाटन करते हो सदैव मच्छर दानी साथ रक्खो।

महामरी (Plague)

महामरी (प्लेग) को 'काली मृत्यु' या गिल्टी की महामरी या ताऊन भी कहते है, यह महामरी के रोग-कृमि द्वारा उत्पन्न होते हैं। प्रथम ये रोग कृमि चूहों में रोग (an epizootic) उत्पन्न करते है और फिर चूहों के पिस्सुओं द्वारा यह मनुष्य को लग जाता है। और यह मनुष्य के लिये एक नाशक व घातक बीमारी है। जब यह किसी स्थान में मरी के रूप में फैलती है तो सहस्रों मनुष्यों को नाश करदेती है॥

लक्षण।

जब महामरी रोग के रोग कृमि शरीर में प्रवेश करते हैं तो रोग अति शीघ्र बढ़ता है साधारण समय तो ३ दिन है। एक दम से ठण्ड दे के ज्वर चढ़ता है और ऐसी शीघ्रता से बढ़ता है कि थोड़ी ही देरी में १०३ से १०४ F. डिग्री चढ़ता है सिर, पीठ और हाथ पांव में पीड़ा होती है। क्रय और दस्त भी होते हैं थोड़े ही घण्टों में नेत्र लाल हो जाते हैं और मुंह का भाव, भय और चिन्ता का हो जाता है। ज्वर शीघ्रता से १०७ F. डिग्री तक चढ़ सकता है, परन्तु ऐसी दशा में रोगी शीघ्र मर जाता है॥

यदि रोग ऐसा भयानक न हो तो बहुधा ज्वर प्रायः १०४ F. डिग्री तक चढ़ेगा। गिलटियां भिन्न २ प्रकार की जांघ के जोड़ बग़ल या गर्दन में निकलती हैं। ये पीड़ा देती हैं। ज्यूं २ रोग बढ़ता जाता है रोगी निर्बल हो जाता है और बहुधा उसे सरसाम हो जाता है॥

रोग के आरम्भ के थोड़े ही घण्टों पश्चात् मृत्यु हो जा सक्ती है। इस रोग की एक जाति जिसे काली मृत्यु कहते हैं उस में त्वचा पर काले धब्बे दिखाई देते हैं, उस में दो दिन पश्चात् प्रायः मृत्यु हो जाती है। इस रोग की दूसरी प्रकार न्यूमोनिक प्लेग (Pneumonic Plague) कहलाता है इस में फेफड़े बिगड़ कर तीन दिन में मृत्यु हो जाती है॥

चिकित्सा।

चिकित्सा जो महामरी के लिये अति ही उपयोगी है यह है कि महामरी का टीका लगवाएं, इस महामरी के रोग-कृमि के विष को यह नाश करता है। प्रत्येक महामरी के रोगी के विषय में स्वास्थ्य अध्यक्ष को समाचार देना चाहिये। महामरी रोग के रोगी की सेवा टहल का प्रबन्ध, देख भाल किसी चतुर डाक्टर को सौंपना चाहिये॥

रोगी की कोठरी की खिड़कियों को खोल दो, और रोगी को पलंग पर लिटा दो। उस को बहुत सा ठण्डा पानी पीने को दो। ज्वर के लिये जो ३१ वें अध्याय में ठण्डा स्पंज स्नान देने की विधि बताई है वही उपयोग करो (देखो सूचना पृष्ठ ११३-११४)। ठण्डे पानी में कपड़े भिगो के सिर पर रक्खो। समय २ पर कपड़े भिगोते जाओ। भोजन के लिये शुरुआ, चांवल का मांड, लपसी और अध कच्चे अण्डे उबाल कर या जेली बना कर दो (अध्याय ४७)॥

रोक।

जो २ रोक हैज़े के रोग में करने के लिए पिछले अध्याय में बताई गई हैं वही महामरी रोग में भी करो, इन के रोकने की विधि को अध्यक्ष लोग, लोगों के लिये करें और मनुष्य स्वयं भी करें॥

अध्यक्ष गण और प्रदेश के और २ लोग भी जहां महामरी फैली है यत्न करें कि सकल चूहों को नाश करें। यह तो बहुत दिनों से ज्ञात हो गया है कि चूहों को मनुष्यों के पूर्व महामरी लगती है। जब चूहा मरता है तब पिस्सू जो उस के शरीर में होते हैं और जिन ने उसे काटा था, मृतक चूहे को त्याग देते है और मनुष्यों के शरीर पर चढ़ जाते हैं। पिस्सुओं के शरीर में रोग-कृमि चूहों को काटने के कारण हो जाते है और जब वे मनुष्य को काटते है तो मनुष्य के शरी में प्रवेश कर उसे महामरी का रोगी कर देते है॥

जहां पर चूहे नहीं है वहां पर महामरी भी नहीं होती है। चूहों को नाश करने के लिये सभाएं होनी चाहियें ऐसे मनुष्यों की जो चूहों को मारने में चतुर हों कि इन्हें नियम पूर्वक नाश करें। चूहेदानी, विष, बिल्ली और चूहे पकड़ने वाले कुत्ते ये सब चूहों को अच्छी रीति से नाश करते हैं। परन्तु सब से उत्तम विधि इन्हें नाश करने की यह है कि अनाज और सब भोजन के पदार्थ ऐसे कोठों में रक्खो जहां पर चूहे प्रवेश न कर सकें। चूहे भोजन के बिना नहीं जी सकते है इस के उपरान्त उन घरों की भीतें और फ़र्श जहां पर चूहे अधिकाई से पाये जाते हैं खोद डालो और ऐसी भीतें और फ़र्श बनाओ कि जिन्हें चूहे न खोद सकें। नगर के भिन्न २ भागों के चूहों की परीक्षा कर के अध्यक्ष गण बता सकते हैं कि किन २ भागों में महामरी रोग है और किन २ में नहीं है॥

महामरी का रक्त-जल (Plague Serum) टीका-चेप के उपयोग में आता है। यह पाया गया है कि ये लोग जिन को इस चेप का टीका लगता है इस महामरी रोग से रक्षित रहते हैं उनकी अपेक्षा जिनको टीका नहीं लगा, और यदि रोगी भी हो जाएं तो उन की अपेक्षा जिन्हें बिलकुल ही टीका नहीं लगा है कम मरते हैं। यदि किसी मुहल्ले में महामरी रोग हो तो उस मंडली के समस्त निवासियों को, वृद्ध हो या युवा, इस महामरी के रक्त-जल का टीका लगवाना आवश्यक है कि रोग से रक्षित रहें॥

जब किसी भी मुहल्ले में महामरी का रोग प्रवेश करता है तो यह रोग चूहों को पहिले लगता है और वे मरते हैं तब मनुष्य को लगता है॥

जब कभी एक मरा हुआ चूहा घर में या घर के आस पास पाया जाए तो इस के द्वारा बड़ी ही चिन्ता होनी आवश्यक है। इस बात का सन्देश स्वास्थ्य अध्यक्ष को भेज दो। और जब तक स्वास्थ्य अध्यक्ष न आवे मरे हुए चूहे को रख छोड़ो। चूहे को हाथों द्वारा न उठाओ। उस को उठाने के पूर्व उस पर कारबालिक एसिड (Carbolic-Acid) डालो या उबलता पानी डालो॥

ऐसे पिस्सू जो महामरी का विष रखते हैं उन के काटने से सुरक्षित रहना चाहो तो जिस मुहल्ले में महामरी फैली हो न जाओ। घर में पिस्सू न होने का उपाय हो सकता है; वह यह है कि घर की भूमि या फ़र्श पर मिट्टी का तेल, फेनाइल (Phenyle) जीज़ फ़्लूइड (Jey's Fluid) और निरा मिट्टीका तेल छिड़को, इस बात पर ध्यान दो कि ये भीतों के नीचे और कोनों में छिड़का जाय। पिसी हुई फिटकरी भी भूमि पर फैलाने से पिस्सू कोठरी के बाहर रहेंगे॥

यदि यह आवश्यक हो कि उस घर में जहां पर महामरी रोग के रोगी हों तुम्हें जाना ही है तो प्रथम महामरी के रक्त-जल (Plague serum) का टीका लगा लो और इसके साथ एक मोमजामे का कपड़ा (Oil cloth suit) बना लो (जिस में पैर बने हों) वह शरीर को पिस्सू से रक्षित रक्खेगा, पिस्सू घुस न सकेंगे कि त्वचा को काटें॥

यदि रोग फेफड़ों की महामरी का है तो नर्स और सब कोई जो घर में रहते हैं उनको उचित है कि मुंह के ऊपर एक खोल जो रुई की पतली तह का बना हो और दो मलमल टुकड़ों के बीच में हो पहिने॥

रोगों में अधिक खून का और लगनेवाला रोग फेफड़ों की महामरी का रोग है। जो वायु श्वास में लेते हैं उस में नाक से इस रोग के कृमि घुसते हैं और इस कारण मुंह के ऊपर खोल पहिनना उचित है॥



अध्याय २८।

"बेरी बेरी"।

कुछ समय पूर्व यह रोग एशिया के सर्व साधारण रोगों में से एक था। इस के लक्षण भिन्न २ दशाओं में भिन्न २ होते हैं। कोई २ जिन को यह रोग होता है कुछ २ पक्षाघात उन की टांगों और बांहों में हो जाता है। उन की त्वचा शिथिल हो जाती है विशेष कर पिण्डली का चमड़ा, तलुवा और उंगलियों के पोरवों में रोग होता है। रोगी की टांगें पतली हो जाती हैं और यदि पिण्डली को ज़ोर से दबाओ तो रोगी पीड़ा के मारे चिल्लाने लगता है। टांगों के कुछ २ शिथिल हो जाने के कारण रोगी लड़खड़ाते २ चलता है और शीघ्र हांपने लगता है। कभी २ हृदय अति शीघ्रता से चलता है, वाणी निर्बल हो जाती व कभी २ बिलकुल जाती रहती है॥

दूसरे जिन को बेरी २ रोग होता है उन की बांह, टांगें और शरीर अधिक फूल जाते हैं। उन को श्वास लेने में बड़ी कठिनाई पड़ती है। और हृदय अति शीघ्र धड़कता है। यदि उन की पिण्डली को ज़ोर से दबाओ तो वे पीड़ित हो चिल्ला उठेंगे। इन दशाओं में ज्वर नहीं होता है। जीभ स्वच्छ होती है और या तो दस्त आते हैं या कोष्ठ-बद्ध होता है॥

बेरी बेरी सम्पूर्ण शरीर की चेतना तन्तुओं का सूज जाना है और इस सूजन के कारण कुछ २ या समस्त स्नायुओं का कार्य्य जो चेतना तन्तुओं के आधीन है जाता रहता है। इस सूजन का प्रभाव स्पर्शेन्द्रिय प्रगट करती है, जब शरीर के बहुत भागों में पीड़ा होती है। कोई २ चेतना तन्तु जो रक्त- नालियों पर अधिकार रखती हैं सूजन का प्रभाव उन नालियों के बाहर रक्त निकलने से प्रगट करती हैं इस से जलन्धर रोग की नाई टांगों, बांहों और धड़ में सूजन चढ़ जाती है॥

"बेरी बेरी" के कारण।

बेरी बेरी रोग प्रायः उन्हीं लोगों को होता है जो चांवल को मुख्य भोजन बना कर खाते हैं। रसायन शास्त्र वालों ने इस चांवल की परीक्षा कर के देखा है कि चांवल जैसा बाहर है वैसा ही भीतर नहीं है।

जब चांवल स्वच्छ किया जाता है तो ऊपर का भाग निकाल लेते हैं। ऊपरी भाग छिलका नहीं है यह लाल रंग की तह है जो चांवल पर रह जाती है धान से छिलका उतारने पर। इस लाल रंग के चांवल में वह वस्तुएं हैं जो अति आवश्यक हैं जिन के द्वारा चांवल शरीर को पूर्ण पुष्टि-कारक पदार्थ दे सक्ता है। यदि चांवल को स्वच्छ करो तो चांवल की ललाहट चली जाती है यह ललाहट वाला पदार्थ जो चांवल में होता है और २ पदार्थों में मुख्य कर फली (सेम) में भी होता है सो वे लोग जो स्वच्छ चांवल और मछली के साथ फली व सेम, तरकारी खाते हैं, उन्हें बेरी बेरी का रोग नहीं लगता है॥

बालकों को भी बेरी बेरी का रोग होता है और कहीं २ मुख्य कर मनीला नगर में एक वर्ष से कम आयु के बालकों की अधिकांश मृत्यु इसी के द्वारा होती है। यह सत्य है कि बालक चांवल नहीं खाते वरन् उन की माताएं खाती हैं और इस कारण कि माता का मुख्य भोजन निर्वाह स्वच्छ किये चांवल पर है तो उस के दूध में वह वस्तु जो चांवल के ऊपर होती है और जो मनुष्य के शरीर के स्वास्थ्य के लिये आवश्यक है नहीं है। इस कारण वह बालक जिस का निर्वाह ऐसे दूध पर होता है बहुधा बेरी बेरी रोग में ग्रस्त हो जाता है॥

बालकों में बेरी बेरी रोग के निम्न लिखित लक्षण होते हैं :—

बालक जिन को बेरी बेरी रोग होता है सदैव छाती का दूध पीनेवाले होते हैं। यह रोग जब वे दो महीने के होते हैं तब दिखाई देता है। बालक रोगी नहीं लगता क्योंकि उस का मुंह भरा हुआ होता है, वह लालसा से दूध पीता है और स्वाभाविक बालक के नाईं मुसकराता और खेलता है पर ध्यान पूर्वक रीति से देखने से उस के मुंह और नाक के पास कुछ नीलापन होता है, वह बेचैन रहता, सोता नहीं और वाणी भी जाती रहती है। कोई २ दशा में पहिला लक्षण बालक का रोना है और यह रोना बढ़ता ही जाता है यहां तक कि उसे ऐंठन आने लगती है और कुछ घण्टों में मर जाता है। वे बालक जिन को बेरी बेरी होता है श्वास रोग में (अर्थात कठिनाई से श्वास लेना) ग्रस्त हो जाते हैं। बालक कराहता है और ठण्डी श्वास लेता है, मुंह नीला हो जाता है और श्वास जल्दी २ लेता है और नाड़ी अति ही वेग से चलती है। ज्वर नहीं होता यदि इस बात की जांच करो तो विदित होगा कि माता का प्रायः पूर्ण भोजन निर्वाह चांवल पर ही होता है॥

बेरी बेरी को कैसे रोक सके हैं।

जो कुछ कहा गया है उस से प्रगट है कि बेरी बेरी रोग कैसे रुक सक्ता है। वह केवल यह है कि स्वच्छ चांवल न खाना, पर धान का छिलका उतारा हुआ चांवल खाना चाहिये। यह भयानक रोग बिना खर्च बढ़ाये पूर्ण रीति से रोक सक्ते हैं। जैसे सादा चांवल स्वादिष्ट हैं वैसे ही स्वच्छ चांवल हैं और यदि यह बुरा अभ्यास न पड़ा होता कि चांवल को स्वच्छ कर के उस से लजाहट निकाल लें, तो बेरी बेरी की मरी जैसी गत वर्षों में कष्ट दायक हुई न होती॥

यह मुख्य है कि जो लोग बेरी बेरी रोग होने का कारण जानते हैं दूसरों की सहायता कर के स्वच्छ किये चांवल खाने की हानि को समझाएं इस लिये कि साधारण चांवल प्रत्येक प्रकार से स्वच्छ किये चांवल से अच्छा है तो सब को साधारण चांवल उदाहरण देने के लिये खाने चाहिये। यह भी मुख्य है कि दाल, तरकारी खाने का महत्व सब समझ लें और केवल चांवल और मछली पर ही निर्भर न रहें॥

चिकित्सा

इस अध्याय के पहिले भाग में जो उपाय बेरी बेरी रोग की रोक के लिये बताया है यदि रोग असाध्य होने से पहिले उपयोग करो तो उसी से चंगे हो जाओगे। बेरी बेरी की असाध्य दशाओं में जो औषधि बताई जाती है वह उस चूर्ण-समान पदार्थ से, जो चांवल स्वच्छ करते समय घिस जाता है, निकाली जाती है॥

सूचना:॥ "बेरी बेरी की चिकित्सा:"—ये बेरी बेरी रोग से चंगा होने के उपाय हैं। बेरी बेरी रोग के प्रथम लक्षण पहिचानना मुख्य है। क्योंकि शीघ्र औषधि करने से फल प्राप्त होता है और प्राय: रोगी सदैव चंगा हो जाता है। चिकित्सा यह है कि विश्राम द्वारा लक्षणों को दूर करना, अंगों को मलना, गर्म जल का पैर-स्नान और आमाशय पर ठण्डक और गर्मी बारी २ से देना। अरंडी का तेल या नमक जुल्लाब देकर कोठा स्वच्छ रखना, शरीर के पोषण के लिये जो पदार्थ आवश्यक हों वे खिलाने चाहिये। भोजन में खमीर जो एक चाय के चम्चे से बड़े चम्चे भर हो इस को उबलते दूध में डालो और मलाई डाल कर

बनाओ कि स्वादिष्ट हो जाय और यह भोजन के पश्चात् खाओ। बेरी बेरी रोगियों के लिये ये भोजन उत्तम हैं:—अध कच्चा अगडा, ताज़ा दूध, सेम, मटर, फलियां, दाल, आटे की रोटी, नीबू का रस, पालक की भाजी, अखरोट और बने हुए विटामिन्ज़ (commercial vitamines) इत्यादि। सावधानी से कई दिनों और हफ़्तों तक भोजन की देख भाल करो जब तक कि इस के पूर्ण लक्षण दूर न हो जाएं॥

सम्पादक



अध्याय ३५।

आंतों के कृमि और ट्रिकीनी।

बहुत प्रकार के कृमि हैं जो मनुष्य के शरीर में रह सकते हैं। कुछ इन में से अति हानि करते हैं और कुछ थोड़ी हानि पहुंचाते हैं। इस अध्याय में केवल अति साधारण कृमि का वर्णन है॥

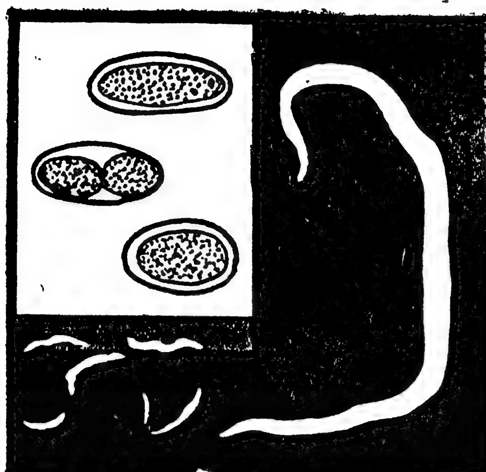
पेट के केंचुए (Round Worms)

पेट के केंचुए का शरीर लम्बा और गोल होता है और प्रत्येक छोर पर नुकीला। ये ४ से ६ इंच लम्बे होते हैं। यद्यपि ये छोटी आंत में रहते हैं पर ये आमाशय में प्रवेश कर सक्ते हैं। कभी २ वे वमन द्वारा निकलते हैं या वे गले तक चढ़ आते हैं। वे श्वास नल में भी प्रवेश करते हैं तब बालक का श्वास इन से घुट जाता है और वह मर जाता है। यदि एक बालक की आंत में थोड़े ही कृमि हैं तो इन से कुछ लक्षण न दिखाई देंगे। बहुधा यह लक्षण बालक में होते हैं कि उस की भूक मर जाती है और उसे मितली होती है। कभी २ बालक के पेट में पीड़ा भी होती है। नाक मलना और दांत कटकटाने से भी ज्ञात हो जाता है कि बालक के आमाशय में कृमि हैं, एक डाक्टर खुर्दबीन से बालक के मल के ज़रा से भाग को देख कर निश्चय पूर्वक बता देगा कि बालक के पेट में केंचुए हैं या नहीं हैं॥

चिकित्सा।

उत्तम उपाय छोटे बालक के लिये यह है कि दो पहर को उसे अरेंडी का तेल पिला दो, उसी संध्या को आधा ग्रेन सेनटोनीन (Santonin) दो। सेनटोनीन में कुछ शक्कर मिला लो कि बालक भली भांति पी ले। फिर दूसरे दिन प्रातः काल आधा ग्रेन सेनटोनीन दो और दो पहर को आधा ग्रेन फिर दो। फिर सेनटोनीन देने के दो घण्टे पश्चात् कुछ अरेंडी का तेल पिलाओ। इन दो दिन जब बालक को औषधि देते हो कुछ तरकारी खाने को मत दो पर उसे चांवल, शुरुआ और अण्डे भोजन के लिये दो। यदि इस प्रकार से भोजन की बन्धेज न करोगे तो सेनटोनीन पूर्ण कृमि को मार न सकेगी॥

इस कारण कि यह प्रायः असम्भव है कि बालक की आंत में कृमि न हों, भला होगा कि प्रत्येक बालक को वर्ष में एक बार सेनटोनीन दो, क्योंकि यदि केवल दो या तीन कृमि होंगे तो न दस्त और न उबकाई आवेगी पर वे भोजन पचने व सार बनने में बाधक होते हैं और यूं बालक के बढ़ने और स्वास्थ्य में रोक होती है ॥



आंतों के कृमि।

सेनटोनीम विष है और बालक को अधिक न दी जाए। जब सेनटोनीन देते हैं तो बालक का मूत्र पीला होता है और उसे पीला दिखता है पर न तो पीला मूत्र और न पीला दृश्य हानिकारक है और शीघ्र जाता रहता है ॥

कैसे पेट के केंचुए की रोक हो सक्ती है।

ये केंचुए जैसे कि कोई २ लोगों का विचार है बालकों की आंत में स्वाभाविक उत्पन्न नहीं होते हैं। भोजन और जल पान के साथ इन केंचुवों के अण्डे शरीर में प्रवेश करते हैं। आंतों के कृमि असंख्य अण्डे देते हैं और ये अण्डे मल द्वारा शरीर के बाहर निकलते हैं। ये अण्डे अन्त में मल के साथ भूमि में फैल जाते हैं और नदियों, तालाबों और बग़ीचे की हरियाली व सबज़ी पर अपना स्थान बना लेते हैं ॥

कृमि से बचने के लिये आवश्यक है कि पीने के लिये केवल उबला हुआ पानी उपयोग करो, जो वनस्पति बाज़ार में मोल ली जाय उसे पका कर ही खाना उचित है, फल खाने के पूर्व गर्म पानी में धोना और छीलना चाहिये। बालकों को मुंह में उंगलियां न डालने दो। क्योंकि उन के मैले हाथों में केंचुवों के अण्डे और दूसरे रोग कृमि जो धूलि में होते हैं सदैव पाए जाते हैं। प्रायः उन अगणित वस्तुओं के साथ जिन्हें बालक मुंह में डालता है ऐसे बहुत से अण्डे होते हैं ॥

कई आंतों के कृमि कुत्तों और बिल्लियों की आंतों में भी पाये जाते हैं। जब वह कुत्ता या बिल्ली बालक का हाथ चाटता है, तो कृमि के अण्डे बालक के हाथ में लग जाते हैं, फिर यदि बालक उंगलियों को मुंह में डाले या हाथ से भोजन खावे, तो इन कृमियों के अण्डे मुंह में चले जाते हैं। कुत्ते, बिल्ली को घर में न रखना चाहिये और उनको कभी बालक के हाथों या मुख को चाटने न देना चाहिये॥

कद्दू दाने का रोग (Hookworm Disease)

बहुत सी बस्तियों में १० में से चार जनों को कद्दू दाने का रोग होता है। यह अति ही साधारण और सुगमता से रुक जानेवाला रोग है। कुछ काल बीता कि किसी स्थान के लोग बहुत निकम्मे और सुस्त समझे जाते थे परन्तु कुछ समय पश्चात् यह प्रगट हुआ की वे कद्दू दाने के रोग की मरी के कारण निर्बल और काम करने में अशक्त पड़ गये थे। ज्यूंही इस रोग को नाश करने के उपाय किये गये और उसकी वृद्धि रोकी गई और रोगी चंगे हो गये तो जो लोग पूर्व काल में आलसी, निस्तेज थे परिश्रमी और तेजस्वी हो गये॥

कद्दू दाना एक स्वेत गोलाकार लम्बा और सूक्ष्म कृमि होता है। वह तिहाई इंच से आध इंच तक लम्बा और साधारण सीने के धागे सा मोटा होता है। यदि साधारण स्वेत धागे को प्रायः आध इंच के छोटे २ टुकड़ों में काट कर डाल दिया जावे तो वे कद्दू दाने की नाईं ज्ञात होंगे। ये छोटे कृमि बच्चों और युवकों दोनों के शरीर में प्रवेश करते हैं। कभी २ वे संख्या में थोड़े अर्थात् १० या २० ही होते हैं परन्तु अधिक भी हो सकते है अर्थात् कई सहस्र एक ही मनुष्य की आंत में हो जाते हैं। वे आंत की भीतरी परत में चिपक जाते हैं। और रक्त को चूसने लगते हैं। वे केवल रक्त ही नहीं चूसते परन्तु वहां पर घाव भी बना देते हैं। जिन से रक्त रिसता रहता है। इस लगातार रक्त के बहने से और उस विष से जो कद्दू दानों से उत्पन्न होता है मनुष्य निर्बल और पीला पड़ जाता है। शारीरिक शक्ति इतनी घट जाती है कि और रोग, मुख्य कर के क्षय रोग, सुगमता से लग जाते हैं। जिन बालकों को कद्दू दाने का रोग हो जाता है वे पीले पड़ जाते है और छोटे ही रहते हैं उन को शारीरिक और मानसिक उन्नति दोनों रुक जाती हैं। शारीरिक उन्नति में तो ऐसी बाधा होती है कि १८ या २० वर्ष का युवक १० या १२ वर्ष का बालक लगता है। यदि

एक बालक की देह में बहुत से कद्दू दाने हैं तो वह विद्योपार्जन में भी थोड़ी ही वृद्धि करेगा ॥

कद्दू दाने के रोग के मुख्य लक्षण ।

त्वचा का पीला पड़ जाना, आलस्य, आमाशय के भागों में कभी २ पीड़ा और मानसिक सुस्ती और मिट्टी और चूना खाने का अभ्यास, ये कई साधारण लक्षणों में से हैं जिन के द्वारा विदित हो जाता है कि एक बालक या युवक को कद्दू दाने हैं ॥

मल के थोड़े से भाग को खुर्दबीन द्वारा परीक्षा कर के डाक्टर निश्चयपूर्वक बता सकता है कि बालक और पूर्ण मनुष्य को कद्दू दाने का रोग है या नहीं है ॥

पांव के तलवे और अंगूठों के बीच में खुजली चलना भी एक लक्षण है जो उस समय प्रगट होता है जब कद्दू दाने पैर की त्वचा द्वारा शरीर में प्रवेश करते हैं ॥

कैसे कद्दू दाने का रोग फैलता है, और इसे कैसे रोक सकते हैं।

कद्दू दाने आंतों में असंख्य अंडे देते हैं। ये पेट के मल के साथ बाहर निकलते हैं और जहां कहीं मल फेंका जाता है ये भी फैल जाते हैं। अण्डे बढ़ते हैं और १० दिन के समय में छोटे कीड़े बन जाते हैं। ये छोटे कीड़े आंगन की मिट्टी में और बग़ीचे और खेतों में होते हैं। वे साग तरकारी और पानी में भी हो सकते हैं, वे कच्ची तरकारी खाने के द्वारा या कच्चा पानी पीने से शरीर में प्रवेश कर सक्ते हैं। बहुत से लोगों को कद्दू दाने का रोग नंगे पैर चलने के कारण से लग जाता है। छोटे २ कद्दू दाने जो मिट्टी में होते हैं पैर पर चढ़ जाते हैं और हाथों पर और चूतड़ों की नंगी त्वचा पर भी चढ़ सकते हैं और त्वचा में छेद कर के भीतर घुस जाते हैं जब तक कि आंतों तक नहीं पहुंचते हैं, यहां पर वे आंतों की भीतरी परत को काटते हैं और रक्त चूसते हैं ॥

इस रोग को रोकने के लिये मुख्य बात यह करनी चाहिये कि मनुष्य के मल से मिट्टी को मैला न करो इस के लिये उचित है कि अच्छे पायख़ाने बनवाये जाएं और उन का उपयोग हो। यदि वे सब जिन को कद्दू दाने का रोग है सावधानी करें कि मिट्टी को मल द्वारा मैला न करें परन्तु सदैव पायख़ाने को जावें तो यह रोग शीघ्र ही मिट जाएगा। परन्तु

जब तक लोग मिट्टी को मैला करेंगे और ऐसी टट्टियों का उपयोग करेंगे जहां कि मल वर्षा, सुअर और मुर्गी के द्वारा फैलेगा व मक्खियां घर में ले जायेंगी तो कद्दू दाने का रोग मरी ही बना रहेगा॥

टट्टियों में ढकनेदार बालटियां होनी चाहियें इन का मल मूत्र बग़ीचे पर न फेंकना चाहिये परन्तु भूमि के भीतर गाड़ देना चाहिये। यदि यह असम्भव हो कि ऐसी टट्टियां बनवाओ जिस में जाली लगी हों कि मक्खियां न घुस सकें तो यह उत्तम है कि भूमि में एक गड्ढा खोदो, एक बड़ा सन्दूक़ लो (इस में कोई दरारें इतनी बड़ी न हों कि मक्खियां घुस सकें) इस की पन्दी में एक छेद करो इस सन्दूक़ को उलटा कर के भूमि पर रक्खो, और इस के नीचे के सिरे को मिट्टी से चारों ओर उठा दो। एक चपटा तख़्ता सन्दूक़ के छेद से बड़ा लो, कि छेद अच्छी तरह बन्द हो सके जब कि सन्दूक़ का उपयोग नहीं करते हो। कुछ काल पश्चात् सन्दूक़ को हटाना चाहिये और गड्ढों को मिट्टी से भर देना चाहिये इस प्रकार के उपाय से मक्खियां मल मूत्र पर न बैठेंगी और यूं मल मूत्र भूमि पर भी फेंकने और फैलाने में रोक होगी॥

कद्दू दाने मिट्टी में ६ महीने या इस से अधिक रह सके हैं। सो बग़ीचों और खेतों में नंगे पैर वहां जाना हानिकारक है जहां पर मल मूत्र एक वर्ष से कम समय से एकत्र हो रहा हो॥

कभी नंगे पैर न चलने से एक मनुष्य कद्दू दाने के रोग से सुगमता से रक्षित रह सकता है। और खेत व बग़ीचे की मिट्टी को नंगे हाथों से न खोदे और कभी कच्चा पानी न पीवे। और कभी कच्ची तरकारी को पकाये बिना न खावे या उन्हें उबलते पानी में खूब धो कर खावे तो कद्दू दाने के रोग से सुरक्षित रहेगा॥

यह सम्भव है कि वे बालक जो बिलकुल नंगे फिरते हैं या जिन के चूतड़ नंगे हैं भूमि पर बैठने द्वारा कद्दू दाने के रोग में ग्रस्त हो जायें॥

चिकित्सा

कद्दू दाने का रोग बहुधा एपसम साल्टस (Epsom Salts) और थायमोल (Thymol), कैपसूल (Capsul) में देने से चिकित्सा होती है। एपसम साल्टस इस आशय से दिया जाता है कि आंतों को स्वच्छ करे कि थायमोल कीड़ों तक पहुंच सके। थायमोल लेने के पूर्व सन्धया समय रोगी बहुत ही थोड़ा भोजन खावे। सन्ध्या को एक ख़ुराक एपसम साल्टस

की लो। दूसरे दिन भोर को ज्यूं ही टट्टी हो जाए तो आधी खुराक थायमोल की लो और दो घण्टे के पश्चात् आधी खुराक ले लो फिर थायमोल की दूसरी खुराक लेने के दो घण्टे पश्चात् दूसरी बार एपसम साल्टस लो। एपसम साल्टस कद्दू दानों को जो आंतों की परत पर से थैमोल ने छुटाये हैं निकाल फेंकेगा। थायमोल की प्रत्येक खुराक पीने के पश्चात् रोगी को कम से कम आधे घण्टे तक दहनी ओर लेट रहना चाहिये। जिस दिन थायमोल दिया जाय कुछ भी भोजन न करना चाहिये उस समय तक जब तक कि अन्तिम खुराक एपसम साल्टस की अच्छी रीति से आंतों को स्वच्छ कर चुकी हो। थोड़ा सा पानी या चाय पी सकते हो पर कुछ भी भोजन न खाओ। यदि किसी प्रकार की मदिरा किसी रीति से ली जायगी या तेल या मांस खाया जावेगा तो थायमोल विष हो जायगा इस कारण से इन वस्तुओं का कदापि उपयोग न करो॥

थायमोल की खुराक को कूट के महीन करो और उन को कैपसूल में डाल दो, दो घण्टों के बाद लो। इस की खुराक भिन्न २ आयु के अनुसार नीचे दी है:—

बालक	के	लिये	१–३	वर्ष तक	थायमोल की	खुराक	साढ़े	सात ग्रेन	
,,	,,	,,	५–१०	,,	,,	,,	,,	१६	,,
,,	,,	,,	१०–१५	,,	,,	,,	,,	३०	,,
पूर्ण मनुष्य	के	लिये	१५–२०	,,	,,	,,	,,	४५	,,
,,	,,	,,	२० से अधिक	,,	,,	,,	,,	६०	,,

कीड़े जब मल में निकलते हैं तो एक पतले कपड़े में धोकर छानने से मिल सकते हैं॥

दूसरी चिकित्सा कद्दू दाने के लिये यह है कि एक बून्द चेनोपोडियम (Chenopodium) की प्रति वर्ष के लिये १५ वर्ष की आयु तक दो। एक पूर्ण मनुष्य के लिये १५ बून्द को तीन भागों में विभाग करो कि ५ बून्द प्रति खुराक में हों और ५ बून्द एक चम्मच शक्कर में दो २ घण्टे के बाद दो, एक दिन पूर्व सन्ध्या को एक खुराक एपसम साल्टस की पिला दो। और चेनोपोडियम की अन्तिम खुराक के पश्चात् दो घण्टों के पश्चात् एपसम साल्टस पिला दो।

*सूचना—कद्दू दाने की अति उत्तम और लाभ दायक औषधि कार्बन टेट्राक्लोरिड Carbon Tetrachlorid है और यह पूर्ण मनुष्य को ४५ बून्द गोली में खाली पेट एक खुराक दी जावे॥ ए. ई. सी.

महीन धागे की नाईं कृमि।

धागे की नाईं कृमि छोटे, स्वेत और तिहाई इंच लम्बे होते हैं। साधारण रीति से वे केवल आंत के निचले भाग में होते है, जहां पर इन के द्वारा गुदा के मुख पर और गुदा के चहुं ओर बहुत खुजली और जलन होती है। यह कीड़े मैल द्वारा निकल आते हैं, वे आंतों से निकल कर कपड़ों पर भी आ जाते हैं। लड़कियों में जब ये होते हैं तो योनि में घुस जाते हैं और वहां पर खुजली होती है और पानी सा निकलता है। ये कीड़े बहुधा अशक्त और मैले बालकों में होते हैं॥

चिकित्सा।

इन सूत सरी के कीड़ों से छुटकारा प्राप्त करने के लिये बालक के भोजन पर ध्यान दो। केवल स्वच्छ, पोषण दायक भोजन खाना चाहिये। भोजन के समय से पहिले या बीच में कुछ न खाने दो॥

थोड़ा सा अरेंडी का तेल पिलाओ और इस के पश्चात् आंत में आध सेर गर्म जल जिस में २० ग्रेन क्विनीन घुली हो डालो। क्विनीन के स्थान पर तीन चाय के चम्मच भर नमक घोल सक्ते हो। बालक को समझाओ कि जितनी देर वह यह जल रोक सकता है उतना ही भला होगा। क्विनीन गलाव (Quinine Solution) को या नमक के घुले हुए पानी को प्रति रात एक सप्ताह तक पिचकारी द्वारा डालो। यदि यह उपाय निष्फल हो तो क्वासिआ (Quassia) की छोटी २ लकड़ी जला कर भपारा लो। क्वासिआ के टुकड़े लो और उन को आध सेर से कुछ अधिक पानी में १२ घण्टों तक भिगो कर रक्खो, पानी को छान कर लकड़ी के टुकड़े फेंक दो और जल को आंत के भीतर डालो॥

खुजली को बन्द करने के लिये दो चाय के चम्मच वेसलीन के लो और उस में ५ बून्द कारबोलिक एसिड की डालो तब इस मरहम को गुदा के मुख और उस के चहुं ओर लगाओ॥

यदि बालक गुदा के मुंह के भाग को खुजलाता है या मलता है तो उस की उंगलियों और नखों के भीतर कीड़ों के अण्डे घुस जायेंगे। तो यह आवश्यक है कि जिन २ बालकों को यह रोग है उन के हाथों को बार २ धोना और नखों को स्वच्छ रखना चाहिये और नखों को काट के छोटे रखना भी आवश्यक है। बालक के चूतड़ों को प्रति दिन धोना चाहिये। इन उपयों को अवश्य करना चाहिये नहीं तो बालक को घड़ी २ यह रोग होगा॥

टेप वर्म (Tape Worm)

यह १० से लेकर २० फ़िट तक लम्बा होता है। ये बहुधा कुत्ते बिल्ली के निकट रहने से व सुअर और गाय के बुरे मांसाहार करने से हो जाते हैं। ये दगोला मांस उस सुअर और गाय का मांस होता है जिस पर श्वेत दाग़ होते हैं और ये श्वेत दाग़ छोटे २ कृमि हैं यदि इस को खूब उबाले और भूने बिना कोई खा लेवे तो ये छोटे कृमि आंत के भीतर प्रवेश कर के अति वृद्धि करते हैं॥

इस के निश्चय पूर्वक कोई विशेष लक्षण नहीं है जिन से विदित हो जाए कि इस रोगी को टेप वर्म का रोग है। लक्षण ये हैं:—अजीर्ण होता है। मरोड़ कर पीड़ा होती है। वह मनुष्य जिसे ये है पीला पड़ जाता है और सिर दुखता है और उसका सिर घूमता भी है! मल में इस कीड़े के छोटे २ जोड़ (अवयव) देखना यही केवल एक निश्चयपूर्वक लक्षण है॥

चिकित्सा।

चिकित्सा का मुख्य उद्देश कृमि का सिर निकाल देना है। क्योंकि यदि इस कीड़े का सिर बाहर न निकलेगा तो यह कीड़ा बढ़ता चला जायगा। इस चिकित्सा की विधि निम्न लिखित है:—

चिकित्सा आरम्भ करने से दो दिन पूर्व किसी प्रकार का कड़ा भोजन न खाना चाहिये। केवल चांवल का शुरुआ, अध कच्चे उबले अण्डे और शुरुआ! रोगी को पलंग पर दो दिन तक लिटा कर रक्खो। पहिले दिन प्रातः काल के समय कुछ अरेंडी का तेल पिलाओ और शेष दिन भर उसे कुछ और भोजन न दो। दूसरे दिन यदि बालक ५ वर्ष को आयु का हो तो आधा ड्राम या ३० बून्द आले ओरिसिन आफ़ मेल फ़र्न (Oleoresin of Male Fern) का दो। इस का स्वाद बुरा है सो कुछ चांवल के शुरुआ के साथ मिला कर दो। दो या तीन घण्टे पश्चात् फिर आधा ड्राम मेल फ़र्न का दो। रोगी को इस सम्पूर्ण समय शान्त हो कर लेटे रहना आवश्यक है। मेल फ़र्न की दूसरी खुराक देने के चार या पांच घण्टे पश्चात् खूब अच्छी रीति से अरंडी का तेल पिला दो। जब बालक मल करता है तो एक स्वच्छ बर्तन में जिस में गर्म जल हो करे, कि देख पड़े कि लम्बे कृमि का सिर निकला है या नहीं॥

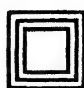
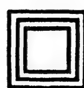
टेप वर्म के रोग की रोक इस प्रकार से हो सकती है कि मल औषधि द्वारा शुद्ध किया जावे या सब मल को गाड़ देना चाहिये और जो

मांस भोजन के लिये उपयोग हो उसे खूब पकाना चाहिये, इस लिये कि कुत्तों और बिल्ली की आंतों में टेप-वर्म होते हैं उन को घर में न रखना चाहिये और उन को कभी बच्चों के मुख और हाथों को चाटने न दो॥

ट्रिकीनी (Trichinœ)

यह एक कृमि है जो सुअर का मांस खाने के द्वारा हो जाता है। ये कृमि आंतों में तो नहीं रहते परन्तु स्नायु में घुस कर पीड़ा का कारण हो जाते हैं। कुछ ज्वर भी आ जाता है। और शरीर के भिन्न भिन्न भागों की स्नायुओं में पीड़ा होती है। और अंगों को गति देने से तीक्ष्ण पीड़ा होती है पर जोड़ों में कुछ भी पीड़ा नहीं होती है। स्नायु दबाने से दुखते हैं। और नेत्रों के नीचे सूजन भी होती है और जल्दी हांपने लगता है॥

इस के लिये कोई भी चिकित्सा अति लाभकारी नहीं होती है। प्रति दिन अरेंडी का तेल और पिचकारी दो कि यदि कोई कृमि आंतों में हों तो निकल आवें। सम्पूर्ण शरीर के स्नायु में जो कृमि हैं उन को निकालने के लिये कुछ भी नहीं किया जा सकता है। इस रोग की रोक करने के लिये केवल एक ही बात उचित है कि सुअर का मांस मत खाओ॥

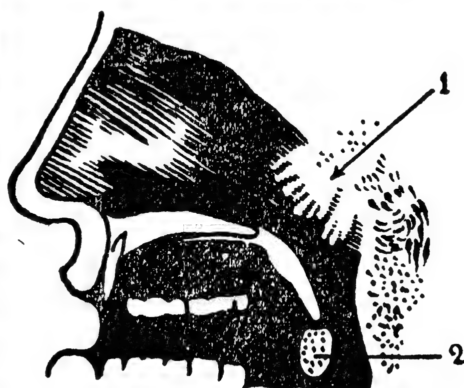
अध्याय ३६।

कहवे–ग़दूद–ज़ुकाम–गले की पीड़ा–खांसी–वायु नली की सूजन–इनफ़्लूएन्ज़ा

कहवे, गल सुए (tonsils) और ग़दूद (adenoids)।

नाक का बहना, नाक खुजलाना, नाक सुड़कना, मुंह और नाक का दुखना, लाल नेत्र, पढ़ने में धीरापन, सोते समय नाक से शब्द निकलना, मुंह खोल कर सोना, हाथों को कानों पर लगाना मानो कान में कुछ पीड़ा है, मुंह खोल कर टकटकी लगाना, ये मुंह द्वारा श्वास लेनेवालों के कुछ लक्षण हैं। मुंह द्वारा श्वास लेने का कारण बहुधा ग़दूदों या कहवों का बढ़ जाना होता है। बालक जिन को पौष्टिक भोजन नहीं मिलता है और जो अस्वस्थ स्थानों में निवास करते हैं उन के ग़दूद निकल आते हैं। अंगूठे को चूसना या रबर की चुसनी को चूसने से भी ग़दूद निकल आते हैं॥

गले के पिछली ओर जहां पर नाक और गले का जोड़ है ग़दूद निकलते हैं उन का आकार छोटे गोभी के फूल के समान होता है पर लाल रंग का होता है पे बहुत कुछ मस्से के समान होते हैं जो हाथों पर निकलते हैं। वे नाक की पिछली ओर लटकते हैं और उसे बन्द कर देते हैं और यूं बालक को मुंह द्वारा श्वास लेना पड़ता है। (उदाहरण में देखो) जब मुख द्वारा श्वास लिया जाता है तो बहुत सी धूल और बहुत से कृमि शरीर में प्रवेश करते हैं, नाक



(१) ग़दूद (२) कहवे में चकता

द्वारा श्वास लेने की अपेक्षा। वे बालक जिन के ग़दूद होते हैं बहुधा कान की पीड़ा से पीड़ित होते हैं थोड़ा सा पीप कभी २ बहता है और कभी नहीं बहता है। यदि कान की पीड़ा हो या कान बहता हो तो केवल बालक के बहिरे होने ही का भय नहीं है परन्तु एक असाध्य रोग जिसे मस्तिष्क का ज्वर (ब्रेन फ़ीवर Brain fever) कहते हैं होने का भय है॥

बालक से मुंह खुलवाओ, एक चम्चे के दस्ते से जीभ को दबाओ और देखो कि कहवे (गलसुए) गले में तो नहीं बढ़े हुए हैं। यदि कहवे रोगी न हों तो वे गले की ओर बढ़े हुए नहीं होते है। और उनका रंग वैसा ही गुलाबी होता है जैसा गलेका चहुं ओर का होता है पर बढ़े हुए कहवे का रंग गहरा लाल होता है या वह स्वेत चकत्तों से भरा हुआ रहता है। कभी २ उस पर पीला पीप भरा होता है। यदि एकाएकी कहवे बढ़ जाते हैं तो बालक का गला दुखता है और उसे ज्वर और सिर पीड़ा भी होती है। और गले की पीड़ा भोजन या पानी निगलने से बढ़ जाती है॥

बालक की परीक्षा कर के देखो कि गर्दन और कानों के पीछे चमड़े पर कुछ गठीला चमड़ा तो नहीं है। ये बढ़ी हुई गिल्टियां हैं इन के होने से विदित होता है कि नाक, गले या कानों या दांतों में कुछ विष या विकार है जिसे निकाल देना आवश्यक है ताकि सम्पूर्ण शरीर स्वस्थ रहे॥

ग़दूद और बढ़े हुए कहवों द्वारा नाक बन्द हो जाती और गला बैठ जाता है तो बालक उचित रीति से श्वास नहीं ले सकता है। सो यह फल होता है कि शरीर को पर्याप्त वायु प्राप्त नहीं होती है॥

बढ़े हुए कहवे और ग़दूदों में विषैले कृमि होते है और वे रक्त द्वारा हृदय में पहुंच कर हृदय का रोग उत्पन्न करते हैं या जोड़ों में पहुंच कर गठिया रोग हो जाता है। कहवे और ग़दूद के कृमि शरीर के और २ भागों में भी पहुंचते हैं और दूसरे रोगों को उत्पन्न करते हैं। इन के कारण शरीर के यथोचित बढ़ने में बाधा होती है सो जिन बालकों के ग़दूद हैं उन के शरीर कम बढ़ते हैं। कहवे और ग़दूद के कृमि धीरे २ बालक के शरीर को विषैला कर देते हैं सो वह अपने पढ़ने लिखने में पीछे रहता है और ऐसे बालकों को डिफ्थीरिया, लाल ज्वर, और खसरा, होने का अधिक भय है। यदि इन में से एक भी रोग लग जाय तो बालक को असाध्य रोग हो जाता है और वह अति धीरे २ चंगा होता है॥

चिकित्सा।

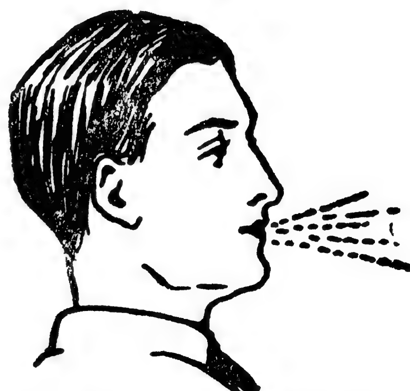
यदि किसी बालक को ग़दूद हैं तो उस के लिये केवल एक ही चिकित्सा है कि उसे अस्पताल या किसी चतुर चीर फाड़ करने वाले डाक्टर के पास ले जाओ और ग़दूद निकलवा डालो। यह सोच कर कि ग़दूद असाध्य रोग नहीं है विलंब मत करो परन्तु जितनी शीघ्र अवसर मिले इन ग़दूदों को निकलवा दो। और यूं बालक को कुरूप मुख और बौने शरीर होने और असंख्य असाध्य रोगों में ग्रस्त होने से बचाओ॥

यदि कहुवे सदैव नहीं बढ़ते हैं परन्तु सूजन और पीड़ा अकस्मात् आ गई है तो अरेंडी का तेल या एपसम साल्टस पिलाओ और गले की दोनों ओर जबड़े के नीचे सेंकन सेवन करो। उपचार नम्बर ९ या १० (देखो ५० वां अध्याय) का कुल्ली करने के लिये उपयोग करो और फाहा बनाकर दिन में कई बार फूले हुये कहवों पर लगाना चाहिये। यदि कहुवे बढ़े हुए रहते हैं या बहुत बढ़े हुए भी न हों परन्तु उन पर सदैव चकते पीले पीप के होते हैं तो उन को निकलवा डालना चाहिये॥

ज़ुकाम।

कोई ऐसा रोग नहीं हैं जिस से बहुत लोग पीड़ित होते हैं जैसे कि साधारण ज़ुकाम से होते हैं। किसी के "सिर में सर्दी" होती है और किसी २ की "छाती पर सर्दी" होती है। वर्ष में कई बार कठिनता से एक सर्दी से चंगा होने न पाये कि दूसरी ने आक्रमण किया॥

अधिकतर ज़ुकाम कृमि द्वारा होता है। ज़ुकाम "लगने-वाला" होता है ठीक जैसे कि खसरा और शीत "लगनेवाले" रोग हैं। शरद् ऋतु और ठण्डी वायु द्वारा ज़ुकाम नहीं होता है। आर्कटिक में देशाटन कर के खोज करनेवाले जिन को शीत प्रधान देशों में यात्रा करनी पड़ती है और अति शीत वायु लगती है उन को जब तक वे लौट कर अपने साथियों के साथ नहीं



खांसने से ज़ुकाम के रोग कृमि फैलते हैं

मिलते ज़ुकाम नहीं होता है। इस से प्रगट है कि ज़ुकाम उन लोगों से लगता है जिन को ज़ुकाम हुआ है। मरी के समय साधारण ज़ुकाम होता है ठीक जैसे हैज़ा या खसरा। यह बहुधा होता है कि जब घराने के एक जन को ज़ुकाम हुआ तो उस के पश्चात् घराने के सब लोगों को हो जाता है॥

साधारण ज़ुकाम से कभी मृत्यु तो नहीं होती है पर यह इन रोगों के लिये, जैसे शीत, क्षय रोग, गांठों का ज्वर और बहरापन इत्यादि, मार्ग तैयार करता है॥

रोक।

ज़ुकाम का रोकना कई बातों पर निर्भर है, इन में से एक मुख्य बात तो यह है कि उचित भोजन और प्रति दिन व्यायाम द्वारा शरीर को भली दशा में रक्खें। वह जो प्रति दिन उचित व्यायाम कर पसीना नहीं निकालता है परन्तु भली भांति खाता है उस को ज़ुकाम बहुत हुआ करेगा। अधिक खाना और व्यायाम न करना ये दो साधारण बातें हैं जिन से ज़ुकाम होता है। सम्पूर्ण शरीर का प्रति दिन ठण्डे पानी में स्नान करना एक उत्तम उपाय है जिस से शरीर ऐसी दशा में रहता है कि ज़ुकाम नहीं लगता। उन लोगों से जिन्हें ज़ुकाम है न मिलो। वह स्थान जहां पर मनुष्य को ज़ुकाम सुगमता से हो जाता है वह कोठरी है जिस में और लोग भी हैं और जिस के द्वार बन्द हैं, और ट्राम कार में और ऐसे स्थानों में जहां पर साधारण सभाएं होती हैं ज़ुकाम लग जाता है। यदि वह रोगी जिसे ज़ुकाम है दूसरे जन के मुख पर छींकता या खांसता है तो उस दूसरे जन को सर्दी लगने का भय है॥

एक ही प्याले में पानी पीने से और एक ही तौलिया को मुंह और हाथों को पोंछने में उपयोग करने से, हुक्का, खिलौने और उंगलियां इन में नाक और मुंह का मैल लग जाता है और वे साधारण रोग-कृमि के लेजानेवाले हैं जिन के द्वारा ज़ुकाम होता है। कम प्रकाशित और कम वायु संचार वाली कोठरी में वास करने द्वारा, धूलि पुरित वायु में श्वास लेना, ठण्ड में खुले रहना या भीगना, वायु में बैठना जब कपड़े पसीने से गीले हैं, कम सोना और अधिक परिश्रम करना इन सब कारणों से ज़ुकाम लगता है। वे लोग जो मुंह द्वारा श्वास लेते हैं, जिन के दांत सड़ गये हैं या कड़वे बढ़ गये हैं इन को बहुधा बार २ ज़ुकाम होता है। इन बातों का

ज्ञान होने से सावधान हो और उन वस्तुओं से बचो जिन से जुकाम होता है ॥

चिकित्सा

यदि आरम्भ में चिकित्सा कर लो तो जुकाम शीघ्र अच्छा हो जाता है। जब किसी एक को जुकाम होने के लक्षण जैसे छींक आना, नेत्रों से जल बहना, कुछ थोड़ी सिर पीड़ा, नाक बंद होना विदित हों तो उस को तुरन्त रोग को बढ़ने से रोकने का उपाय करना उचित है। एक उत्तम उपाय यह है कि घर के बाहर निकल कर बग़ीचा खोदने में खूब परिश्रम करे या जल्दी जल्दी चले या और किसी प्रकार का शारीरिक काम करे। परिश्रम करो जब तक कि पसीना न निकले तब गर्म जल में स्नान करो। गर्म जल से निकल कर शरीर पर एक लोटा ठण्डा पानी डालो और त्वचा को एक सूखी तौलिया से भली भांति पोंछ कर सुखा डालो॥

यदि जुकाम को हुए एक या दो दिन हो चुके हैं तो एक गर्म पैर-स्नान और टांग-स्नान करो (देखो २० वां अध्याय) गर्म जल डालते रहो कि पानी खूब उष्ण हो जाय। जब पैर और टांगें गर्म जल में हैं तो कई सेर गर्म द्रव्य पियो चाहे सादा गर्म जल या ऐसा गर्म जल जिस में निंबू का अर्क़ डाला हो। पैर और टांग गर्म जल में रक्खो जब तक कि पसीना न आवे और यूं पसीना आने दो। भोर को उठ कर शरीर को गर्म जल से स्पंज करो या कपड़ा भिगो के पोंछ डालो। और दिन में चांवल का शुरुआ, कोमल उबले अण्डे और फल ही का आहार करो। यह चिकित्सा जुकाम चंगा करने में अत्यंत लाभकारी है ॥

पैर और टांगों का गर्म स्नान लेने के पूर्व भला होगा कि कुछ जुल्लाब की औषधि जैसे रेचक गोली या एपसम साल्टस (Epsom Salts) या गलौबर्ज़ साल्टस (Glauber's Salts) या अरंडी का तेल पियो। या इन के बदले १०६ F. डिग्री की उष्णता की पिचकारी लो (देखो २० वां अध्याय)। उपचार नम्बर ६ या १० (देखो ५० वां अध्याय) से दिन में ३ बार कुल्ली करो। यदि नाक बन्द हो या उस से दुर्गन्धित रेंट निकलती है। तो कुल्ले की कुछ औषधि लेकर गर्म कर के नाक में नास लो॥

यदि ज़ुकाम कुछ समय से है और सदैव नाक बह रही है तो नाक को उपरोक्त विधिपूर्वक धोना भला है और उपचार नम्बर १६ (अध्याय ५० वां) को तब सूंघो॥

गला बैठना या कण्ठ पीड़ा (Sore Throat)

कहवे का सूज जाना, कण्ठ पीड़ा का साधारण कारण है। इस अध्याय के पहिले भाग में इस दशा के लिये चिकित्सा बताई गई है। कण्ठ पीड़ा की किसी भी दशा में उचित चिकित्सा सेंकन सेवन करना है। (देखो अध्याय २० वां)। पर १५ मिनिट तक दिन में तीन बार सेंकना चाहिये और प्रत्येक दो घण्टे पर नम्बर १ उपचार से कुल्ला करो (देखो अध्याय ५० वां) एक फांया (ज़रा सी रुई, अर्थात् फाहा) इसी औषधि से बना कर कण्ठ में लेप करना भी अच्छा है॥

वायु नली की सूजन (Bronchitis)

इस रोग का साधारण नाम "छाती में सर्दी" लगना है। बहुत सी सर्दी के रोगों में पहिले नाक में फिर वायु नली या श्वास नली में और फेफड़ों में रोग-कृमि पहुंचते हैं। पहिले रह २ कर सूखी खांसी आती है कुछ दिन पश्चात् खांसी के साथ खखार (Sputum) भी निकलता है॥

इस प्रत्येक रोग को जो "छाती की सर्दी" का है भली भांति से चिकित्सा करनी चाहिये क्योंकि इस के द्वारा असाध्य रोगों के, जैसे शीत और क्षय के, होने का भय है॥

चिकित्सा

छाती में जब सर्दी लगी हो तो वही चिकित्सा जो ज़ुकाम के लिये बताई गई है, प्रारम्भिक दशा में इस के लिये भी करनी चाहिये। पर यह भी उस के साथ करना चाहिये कि प्रति दिन में तीन बार छाती के सामने के भाग को सेंकन सेवन करना चाहिये। यदि सूखी खांसी है और खांसते समय पीड़ा होती है, तो उपचार नम्बर १८ (देखो अध्याय ५० वां) सेंकन सेवन के साथ करो॥

खांसी यदि कई सप्ताहों तक रहे तो अति ध्यान देना आवश्यक है क्योंकि कदाचित क्षय रोग का कारण हो और जैसी ३८ वें अध्याय में चिकित्सा बताई गई है वैसी ही करनी आवश्यक है॥

वे लोग जो तम्बाकू पीते हैं उन को बहुधा खांसी आती है और जब वे तम्बाकू पीना बन्द करते हैं तो खांसी भी बन्द हो जाती है॥

इनफ़्लूएञ्ज़ा (La Grippe)

इनफ़्लूएञ्ज़ा प्रत्येक वर्ष होता है। और जैसे साधारण ज़ुकाम के वैसे ही इस के भी लक्षण होते हैं परन्तु उस से कहीं अधिक बढ़ के होते हैं।

आरम्भ में नाक बन्द होती है छींक आती है, नेत्रों से जल गिरता है, सिर पीड़ा होती है, पीठ में पीड़ा होती है; सूखी खांसी होती है, और कुछ ज्वर भी आता है ॥

यह एक बड़ा असाध्य रोग है। इस से प्रति वर्ष बहुत से वृद्ध जन मरते हैं। जब यह निर्बल जनों को होता है तो वे बहुधा इस से मर जाते हैं ॥

चिकित्सा।

इनफ़्लूएञ्जा अति शीघ्र लग जानेवाला रोग है। यदि घर के एक जन को होता है तो उसे अपने नाक और मुंह के ऊपर खांसते व छींकते समय रुमाल लगाने में सावधानी करनी चाहिये। उसे नाक पोंछना और छींकना काग़ज़ के टुकड़ों पर करना उचित है और फिर इन्हें जला देना चाहिये। उसे वे ही प्याले, खाने के बर्तन और तौलिया जो घर के और लोग उपयोग करते हैं ख़ुद भी उपयोग न करने चाहियें॥

रोग के आरम्भ में ही रोगी को पलंग पर लेट जाना चाहिये और गर्म पर और टांगों का स्नान जो जुकाम के रोग में सेवन करने को बताया है (इसी अध्याय के पहिले भाग में बताया है) करना चाहिये। रोगी को जल या नीबू का शर्बत (Lemonade) अधिक पीना चाहिये; कम से कम पाव भर या उस से कुछ अधिक प्रत्येक घण्टे पीना चाहिये। पैरों को गर्म रक्खो। यदि आवश्यक हो तो पैर के नीचे गर्म जल की बोतलें रक्खो। शुरुआ, ग्रूएल (एक प्रकार की लपसी), कोमल पके अण्डे, और फल, केवल ये भोजन खाओ। खांसी के लिये वह चिकित्सा जो इस अध्याय में छाती की सर्दी के लिये बताई है करो। नम्बर १ के उपचार (देखो ५० वां अध्याय) का उपयोग दिन में तीन बार कुल्ला करने में करो। इस से मुंह और कण्ठ स्वच्छ रहेगा और यूं रोग को कान तक जाने और बहिरा होने से रोकेगा॥



अध्याय ३७।

"निमोनिया" और "प्लूरिसी" (Pleurisy)

'फेफड़ों का ज्वर' फेफड़ों का एक रोग है जो शीत के कृमि से होता है। यह रोग एका एकी अति ठण्ड लग कर आरम्भ होता है। शीघ्र ज्वर चढ़ता है और छाती में पीड़ा होती है। सूखी खांसी होती है और खांसते समय पीड़ा होती है और श्वास लेने का वेग अति अधिक बढ़ जाता है, रोगी या तो दहनी ओर वा बाईं ओर लेटता है पर चित नहीं लेटता, मुख लाल पड़ जाता है विशेष कर दोनों गाल लाल हो जाते हैं और ज्वर की पपड़ी होंटों पर पड़ जाती है, खखार (Sputum) जो निकलता है उस में रक्त के चिन्ह होते हैं जब ज्वर सात या आठ नो दिन तक खूब चढ़ा रहता है तो बहुत पसीने के साथ आकस्मिक टूट जाता है। इस के पश्चात् रोगी को अधिक विश्राम होने लगता है और यदि कोई आकस्मिक घटना न हुई तो रोगी चंगा होता जायगा और दो या तीन हफ़्तो में अच्छा हो जायगा। कोई २ ज्वर उतरने के पूर्व ही मर जाते हैं। ज्वर उतरने के पश्चात् कोई २ निमोनिया के कारण, या फेफड़ों में क्षय रोग के उत्पन्न होने के करण से मर जाते हैं। उन १० में से जिन को शीत रोग होता है ३ या ४ इस रोग में मर जाते है। वे लोग जो मदिरा पान भली भांति करते हैं कदाचित् ही शीत रोग (Pneumonia) से अच्छे होते हैं॥

रोक और चंगा होना।

शीत रोग के कृमि बहुत फैले रहते हैं हम उन से बच नहीं सके हैं परन्तु यदि शरीर हृष्ट पुष्ट है तो शीत के रोग-कृमि कुछ भी हानि नहीं पहुंचा सके हैं। रोग को रोकने की "स्वाभाविक शक्ति" तम्बाकू पीने और किसी भी प्रकार की मदिरा पीने से, यथोचित भोजन न खाने से वा बहुत अधिक भोजन खा लेने से और अन्धेरे और कम वायु संचार के घरों में वास करने से, या द्वार और खिड़कियां मून्द कर सोने से, या सिर ढांक कर के सोने से, या झुक के बैठने से या सर्दी लग जाने से कम पड़ जाती है॥

शीत रोग नाक के बहने से, खखार से और खांसने और छींकने से फैल जाता है। यह दूसरों के गिलास में पानी पीने से भी हो सक्ता है। सड़कों पर धूल वाली वायु में श्वास लेने से या घर में झाड़ू देते समय उस धूलि पूरित वायु में श्वास लेने से शीत रोग के कृमि हमारी श्वास में मिल जाते हैं और इसी रीति से यह रोग हम को लग सक्ता है। जब रोग के फैलने के कारण हम को विदित हो गये तो किन २ उपायों द्वारा इस रोग से बच सक्ते हैं सब को सुगमता से प्रगट हो जावेगा॥

शीत रोग औषधियों से अच्छा नहीं हो सकता, रोगी की भली भांति से सेवा टहल करने की आवश्यकता है और औषधियों की अपेक्षा इस से अधिक लाभ होता है। जहां तक सम्भव हो सके रोगी को खुली वायु में रक्खो। उसे घर के बाहर पलंग पर पड़ा रहने दो जहां उसे धूप से रक्षित होने के लिये किसी प्रकार की छाया हो। रोगी के पैरों को गर्म रक्खो और यदि आवश्यक हो तो उस के पैरों के निकट पानी की गर्म बोतलें भी रक्खो। आरम्भ ही में एक ख़ुराक एपसम साल्टस (Epsom salts) और एक पिचकारी १०० F. डिग्री के उष्ण जल की दो। नीबू का शरबत (Lemonade) नीबू का अर्क़ या सादा पानी ख़ूब पिलाओ, द्रव्य पदार्थ का भोजन हो, जैसे चांवल का पानी, शुरुआ, कच्चे अण्डे या कोमल पकाये अण्डे के खिलाने चाहियें। कोठा स्वच्छ करने के लिये प्रति दिन पिचकारी देनी चाहिये॥

बहुत गर्म सेंकन (देखो अध्याय २० वां) प्रत्येक घण्टे में ५ मिनिट तक वहां पर जहां छाती में पीड़ा है सेवन करने से खांसी और पीड़ा मिट जायगी। उष्ण जल धीरे २ पीने से खांसी कुछ अच्छी हो जाती है। चिकित्सा का मुख्य काम यह है कि एक अति महीन कपड़ा लो इस को ६ या ८ परतों में तह करो। कपड़ा जब लपेटा जाय तो इतना बड़ा हो कि छाती के सामने के भाग को ढक सके। इस कपड़े को अति शीतल जल में जो प्राप्त हो सके भिगो के निचोड़ो, इस प्रकार से कि पानी न टपके। इस कपड़े को छाती के सामने के भाग पर रक्खो। इस कपड़े का प्रत्येक १५ या २० मिनिट पश्चात् फिर भिगोओ, जब २ गीला कपड़ा बदला जावे तो शरीर को भली भांती सुखा लेना चाहिये। यदि बर्फ़ प्राप्त हो सके तो उस के टुकड़े कपड़े में लपेट कर छाती के रोगी भाग पर रखने चाहियें। बर्फ़ और शरीर के मध्य में दो या तीन तह कपड़ा होना चाहिये। जिस समय छाती के सामने के भाग पर बर्फ़ सेवन किया जाता है उस समय रोगी के पैरों को गर्म रखना

चाहिये यदि ज्वर तेज़ होवे तो रोगी के शरीर को ठण्डे पानी के स्पंज से दिन में दो तीन बार पोंछना चाहिये। स्पंज से स्नान करने की उसी विधि का उपयोग करो जो ३१ वें अध्याय में लिखा है। (देखो सूचना पृष्ठ ११३-१४)॥

इस लिये कि रोगी की खखार में शीत रोग के कृमि (pneumonia germs) अधिक पाये जाते हैं इस लिये यह खखार अति हानिदायक है रोगी को उचित है कि काग़ज़ और पुराने चिथड़ों पर थूका करे और इन को पीछे जला देना आवश्यक है ॥

बालकों की पसली चलना।

जो रीति इस अध्याय के पहिले भाग में बड़े लोगों की चिकित्सा निमित्त बताई है बालकों की चिकित्सा की रीति भी बहुत कुछ उसी प्रकार की है। बालक को ऐसे स्थान पर रखना चाहिये जहां पर ताज़ी वायु का उचित संचार हो, बालक के पैरों को गर्म रक्खो और उस के प्रति दिन के नियत भोजन को कम कर दो। छाती के ऊपर ठण्डे कपड़े लगाते रहो और पैरों को गर्म रक्खो जैसे इस अध्याय के पहिले भाग में वर्णन किया गया है। छाती के पीड़ित भाग पर राई का पलस्तर लगा सक्ते हैं। छः या सात भाग आटे में केवल एक अंश राई का डालना चाहिये और उस को उष्ण जल से मिला कर एक पतले कपड़े पर फैलाना चाहिये। तब उस को त्वचा के ऊपर लगाना चाहिये जब त्वचा लाल हो जाय तो उस को उठा लो उस को फिर गर्म कर के चार पांच घण्टों के पश्चात् फिर लगा सक्ते हैं। बालक को जितना पानी वह पी सके देना चाहिये यदि पानी में नीबू मिला कर दिया जाय तो उत्तम होगा। प्रति दिन गर्म जल की पिचकारी देनी चाहिये। यदि बालक लगातार खांसा करे परन्तु खखार न निकले या यदि खांसी के कारण नींद न आती हो तो उपचार नम्बर १८ (देखो अध्याय ५० वां) देना चाहिये ॥

तपेदिक़ (tuberculosis) से रक्षित होने का उपाय।

शीत पश्चात् क्षय रोग का हो जाना साधारण बात है। इस कारण यह आवश्यक बात है कि शीत का रोगी जब तक चंगा होने के पश्चात् बिलकुल स्वस्थ और बलवान न हो जाय अपने पलंग पर से न उठे और न इधर उधर चला करे, न अपना काम काज करे। शीताङ्ग लगने से भी बचने का बहुत उपाय करना चाहिये और किसी कमरे में खिड़कियां और द्वार बन्द कर के न सोना चाहिये। लम्बी श्वास लेने का व्यायाम प्रति दिन करना आवश्यक है जैसा कि ६ वें अध्याय में बताया गया है ॥

प्लूरिसी या फेफड़ों की झिल्ली की सूजन।

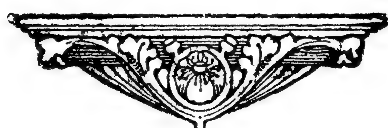
जब वह पतली झिल्ली जो श्वास या फेफड़ों के चहूं ओर होती है और जो छाती की भीत की भीतरी ओर लगी रहती है सूजती है तो उस की सूजन को प्लूरिसी कहते हैं। शीत की प्रत्येक दशा में इन फेफड़ों की झिल्ली की सूजन के कारण से पीड़ा हुआ करती है। कभी २ प्लूरिसी छाती पर चोट खाने से या शीताङ्ग हो जाने से भी हो जाती है। सब से प्रथम ठण्ड सी लगती है तब छाती की केवल एक ओर पीड़ा होने लगती है। पीड़ा चुभती सी होती है और खांसने या गहरी श्वास लेने से पीड़ा बढ़ जाती है। थोड़ा सा ज्वर भी होता है। इस रोग का सब से मुख्य लक्षण पसली में की पीड़ा है और जिस ओर रोग होता है उस ओर रोगी लेट नहीं सक्ता है। जिस ओर रोग होता है उस ओर रोगी सो भी नहीं सक्ता। कुछ काल पश्चात् झिल्ली की दोनों तहों के मध्य में कुछ द्रव्य पदार्थ एकत्र हो जाता है। उस के पश्चात् पीड़ा घट जाती है॥

चिकित्सा।

बहुधा प्लूरिसी रोग में ज्वर एक सप्ताह या १० दिन तक रहता है। यदि रोगी को दो या तीन सप्ताह तक दो पहर के पश्चात् और सन्ध्या काल में गर्म और बुरा लगने लगे, तो कदाचित् इस का अर्थ यह है कि उस को क्षय रोग है और यदि हो तो जो विधियां ३८ वें अध्याय में दी हैं उन को करो॥

प्लूरिसी के रोगी को एक ऐसी कोठरी में रक्खो जहां पर द्वार और खिड़कियां खुली हों कि ताज़ी वायु का संचार हो। केवल द्रव्य पदार्थ भोजन के हेतु दो। एक पट्टी वा कपड़ा तीन इंच चौड़ा छाती पर लगाओ। रोगी से श्वास बाहर निकलवाओ और जब फेफड़े खाली हैं तो छाती संकुचित होगी तब पट्टी लपेटो और उसे बांध दो इस से छाती की स्वतंत्र गति नहीं होती और पीड़ा घट जाती है। पीड़ा मिटाने के लिये गर्म सेंकन सेवन प्रति दो घण्टे के पश्चात् २० वा अधिक मिनिट तक करो। एक गर्म पानी की थैली एक कपड़े में जो गर्म जल में डुबो के निचोड़ा हुआ हो लपेट के सेंकन के बदले छाती पर लगा सक्ते हो। जुल्लाब (एपसम साल्टस Epsom Salts) वा अरंडी का तेल दो, कभी २ ठण्डे कपड़ों को छाती पर लगाने से रोगी को अति अनुकूल होता है। यदि गर्म सेंकन सेवन से लाभ न हो तो ठण्डे से सेंकन सेवन करो॥

यदि कुछ दिन पश्चात् बालक को लाभ न हो और अल्प श्वास लेता जावे परन्तु पीड़ा न होवे तो उसे एक ऐसे स्थान में ले जाओ जहां पर एक चतुर डाक्टर उस की देख भाल करे। यदि रोगी की सेवा टहल बिना डाक्टर के करनी पड़े तो रोगी के जहां पर पीड़ा है वहां दिन में तीन बार सेंकन सेवन करो (देखो अध्याय २० वां) प्रथम गर्म सेंकन करो ज्यूं ही वह ठण्डा होने लगे तो उसे उठा लो और इसी स्थान पर कुछ सेकण्ड के लिये एक कपड़ा (जो पतले कपड़े की दो या तीन तहों का बना हो) अति शीत जल में जो प्राप्त हो सक्ता है भिगो के निचोड़ के लगाओ। तब फिर एक और गर्म सेंकन सेवन करो ततूपश्चात् ठण्डा कपड़ा कुछ सेकण्ड तक रक्खो। बीस वा अधिक मिनिट तक इस प्रकार से गर्म और ठण्डे सेंकन सेवन को बारी २ से करो। यदि एक या दो हफ़्ते में प्लूरिसी का रोग चंगा नहीं हो जाता है तो जैसे ३८ वें अध्याय में दिया गया है क्षय व तपेदिक़ (tuberculosis) के रोग की चिकित्सा करो॥



अध्याय ३८।

क्षय या तपेदिक़।

(Tuberculosis or Consumption)

भारतवर्ष में क्षय रोग से प्रायः प्रत्येक मिनिट, दिन या रात कोई न कोई मरता ही है। इस का अर्थ यह है कि हिन्दुस्तान में बहुत से ऐसे लोग हैं जिन को यह रोग है॥

सब मृत्यु जो संसार में होती हैं उन का १-६ अंश इस मरी द्वारा होता है। प्रत्येक रात दिन के प्रत्येक पल में, वर्ष के आरंभ से अन्त तक, कोई न कोई तपेदिक़ के रोग द्वारा मरता ही है। सो इस से यह विदित प्रत्यक्ष रूप में हो गया है कि शीतला व विसूचिका की मरियों से भी भारी क्षय रोग है॥

जैसा चाहिये वैसे लोग तपेदिक़ के रोग से भय नहीं खाते हैं। यह इस कारण से है कि क्षय रोग में इतना कष्ट और पीड़ा नहीं भोगनी पड़ती है जैसे बहुत से साधारण रोगों में भोगनी होती है, इस के उपरान्त यह एक धीरे २ होने वाला रोग है क्योंकि ये हैज़े और महामरी की नाईं शीघ्र मारने वाला रोग नहीं है। वे लोग जिन को क्षय रोग हो जाता है, कई महीनों या एक वर्ष या और अधिक समय तक रोगी रह के मरते हैं। इस लिये कि यह रोग बहुत काल तक रहता है और यह कि तपेदिक़ (क्षय) ऐसा रोग है जो लोगों को उन की युवावस्था में जब वे अपने जीवन के मुख्य काम काज में प्रवृत्त हैं हो जाता है (उन को जो २० से ४० वर्ष की आयु के हैं) इस से इस रोग में अति व्यय होता है॥

एक समय था जब यह रोग असाध्य गिना जाता था। वे जिन को यह रोग लग जाता था सब आशा छोड़ देते थे और चंगे होने का कुछ भी यत्न न करते थे। यह विचार भूल का है क्योंकि वर्त्तमान काल में यह प्रमाणित हो चुका है कि प्रायः सब लोग जिन्हें यह रोग होता है यदि ज्यूंही यह आरम्भ होता है यथोचित चिकित्सा करें तो चंगे हो जाएंगे॥

क्षय रोग केवल असाध्य ही नहीं है वरन् यह एक ऐसा रोग है जिस की रोक हो सक्ती है॥

इस लिये कि यह रोग रुक सक्ता है और यदि आरम्भ ही में

औषधि की जाय तो अच्छा हो जाता है इस लिये यह अति मुख्य बात है कि सब इस के लक्षणों, रोक के उपयों और चिकित्सा को समझें॥

लक्षण।

रोगी का चंगा होना इस बात पर अवलम्बित है कि रोग आरम्भ ही में पहिचान लिया जाय। इस लिये सब को क्षय रोग (tuberculosis) के प्रथम लक्षणों को जानना चाहिये॥

वे लोग जिन की पतली चपटी छातियां और कन्धे झुके हुए होते हैं उन को यह रोग होने का भय रहता है। धीरे धीरे वज़न कम हो जाना तपेदिक के लक्षणों में से प्रथम है और बहुतों में जिन्हें तपेदिक़ का रोग है पाया जाता है। त्वचा पीली पड़ जाती है और समय २ पर गाल लाल सा हो जाना इस रोग के प्रथम के साधारण चिन्ह हैं। बार २ जुकाम का होना भी इस का प्रथम लक्षण है। कोई २ जिन को यह रोग होता है नहीं जानते हैं कि वे रोगी हैं परंतु वे शीघ्र ही थक जाते हैं और कुछ सप्ताह पश्चात् वे कहते हैं कि उन को दोपहर पश्चात् हलका ज्वर आता है और प्रातःकाल और सन्ध्या काल को ठसके की खांसी आती है। कुछ काल पश्चात् रात को पसीना आने लगेगा और देखा जायगा कि थूक लाल है (यह इस कारण से कि उस में रक्त है) छाती में पीड़ा हो या न हो। भूक मर जाना इस रोग का पहिला लक्षण है दूसरा लक्षण मनुष्य की प्रकृति में भेद हो जाना है कि वह जो प्रसन्न चित और सीधे हैं वे चिड़चिड़े और शीघ्र निराश, कम हिम्मत हो जाते हैं॥

खखार में बहुधा इस रोग के रोग-कृमि (the tuberculosis bacillus) मिल सके हैं २१ वें अध्याय में एक चित्र है जिस में इन रोग-कृमि को १,००० गुना बढ़ा कर दिखाया गया है। जब कभी यह सन्देह हो कि किसी को तपेदिक़ का रोग है तो उस के खखार को एक डाक्टर से जांच करा लो और देखो कि उस में क्षय रोग के रोग-कृमि हैं या नहीं। पर यह भी होता है कि बहुत से लोग हैं जिन को क्षय रोग है पर उन के खखार में इस के रोग-कृमि नहीं मिलते हैं। पर यदि रोग-कृमि खखार में भी न पाये जायें तिस पर भी तपेदिक़ के रोग की चिकित्सा होनी चाहिये॥

ये लक्षण जो ऊपर लिखे हैं साधारण फेफड़ों के तपेदिक़ के रोग के लक्षण हैं। तपेदिक़ न केवल फेफड़ों को होता है पर शरीर के और २ भागों

में भी होता है। यह रोग कण्ठ में से भी हो सकता है, उपरोक्त लक्षणों के साथ इस में रूखा स्वर और निगलने में पीड़ा होती है। इस का हड्डियों पर प्रभाव पड़ना साधारण बात है। यह कूल्हे के जोड़ पर बहुधा होता है और इस कारण से एक टांग छोटी पड़ जाती है। जब यह रोग रीढ़ की अस्थि में है तो कुब्बड़ निकल आता है। कण्ठ माला का क्षय रोग बालकों में होता है गर्दन पर और सामने और पीछे गिलटियां होती हैं, बालक पीला और दुबला पतला रहता है और बहुधा नेत्र दुखते हैं और कान पीड़ा होती है॥



कैसे रोग कृमि फैलते हैं।

किस प्रकार से क्षय रोग के कृमि शरीर में प्रवेश करते हैं।

१. उस वायु में जिस में हम श्वास लेते हैं मिल कर श्वास द्वारा यह कृमि फेफड़ों में पहुंचते हैं॥

२. जो भोजन हम खाते हैं उस में हो कर शरीर में प्रवेश करते हैं। बहुत सी गाय और दूसरे जन्तुओं को क्षय रोग होता है सो इन जन्तुओं का मांसाहार करने से या इन का दूध पीने से तपेदिक़ हो जाता है। यदि वे लोग जिन को तपेदिक़ का रोग है बाज़ार में कुछ भोजन अपने हाथों से उठावें या रसोई घर में छुयें तो क्षय रोग के कृमि उन के नाक, मुंह और हाथों

द्वारा भोजन पर लग जायेंगे और इस भोजन के खाने से हम को भी क्षय रोग लग जायगा॥

३. त्वचा में चोट लगे हुए भाग द्वारा शरीर में प्रवेश करते हैं॥

क्या करना उचित है कि क्षय रोग के फैलने में रोक हो॥

तपेदिक़ के रोगी को यह जानना चाहिये कि वह खांसने और थूकने से यह रोग फैलाता है जब वह खांसता है या छींकता है तो बहुत सी छोटी छोटी बूंदें उस के नाक और कण्ठ से मुंह और नाक द्वारा निकलती हैं इन बूंदों में बहुत से तपेदिक़ के रोग-कृमि हैं और ज्यूं ही ये छोटी २ बूंदें वायु और धूलि में मिल जाती हैं तो स्वस्थ लोगों के फेफड़ों में श्वास द्वारा प्रवेश करती हैं और यूं उन को यह रोग लग जाता है। उन लोगों के खखार में जिन को यह रोग है असंख्य तपेदिक़ के रोग-कृमि पाये जाते हैं। इसे ऐसे स्थान में जहां पर सूख जाय कभी न थूकना या फेंकना चाहिये क्योंकि निःसन्देह रोग साधारण रीति से थूकने से फैल जाता है॥

वे जिन को यह रोग है खांसते या नाक साफ़ करते समय अपने नाक और मुंह पर सदैव कपड़ा या काग़ज़ लगावें। यदि काग़ज़ का उपयोग हो तो उसे जला डालना चाहिये। यदि कपड़ा उपयोग करो तो उसे इसी कार्य्य के लिये रक्खो और साधारण रुमाल के समान उसे उपयोग न करो इसे उपयोग पश्चात् या तो उबाल डालो या जला डालो॥

वह जो क्षय रोग से रोगी हों और अपने घर में हों उन्हें एक पीकदान ढकनेदार रखना चाहिये इस पीकदान को बाहर से स्वच्छ रक्खो और ढकने से ढका रक्खो कि मक्खियां बैठ कर इस के रोग-कृमि न ले जावें और यूं अन्य लोगों को भी यह रोग लग जाय॥

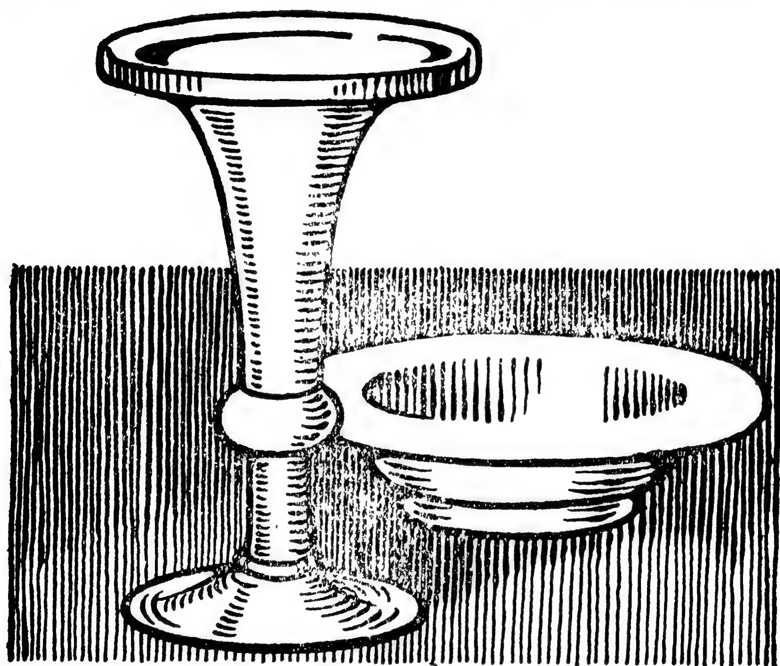
जब तपेदिक़ का रोगी घर से बाहर हो तो वह अपने साथ जेब में एक छोटा प्याला ले जाया करे। इस प्रकार के बहुत प्याले मिल जायेंगे एक अच्छा काम चलाऊ प्याला टीन वाला बना देगा। एक टुकड़ा मोटे काग़ज़ का प्यालाकार में बनाया जाय इस प्रकार का कि ठीक उस में बैठ जाय। जब प्याले को खाली करो तो भीतर का काग़ज़ और वह काग़ज़ जिस में थूक खखार है सब निकाल कर जला डालो। इस जेब के प्याले को प्रति दिन वा दूसरे दिन पांच या दस मिनिट तक उबाल डालो॥

वह रोगी जिसे तपेदिक़ का रोग है उस भोजन को न छूवे जिसे अन्य लोग खावेंगे॥

यह मनुष्य या स्त्री जिसे यह रोग है कभी अपना थूक न निगल जाय। यदि ऐसा करेगा तो आंतों में रोग-कृमि उत्पन्न हो जाएंगे और प्रायः निश्चय पूर्वक शीघ्र इस की मृत्यु हो जायगी॥

कैसे तपेदिक़ के लगने से सुरक्षित रहें।

यह रोग इन लोगों के थूक के द्वारा जिन्हें तपेदिक़ है फैलता है। वह धूलि जो गलियों में, दुकानों में, नाटकालयों में, तमाशों में, ट्राम गाड़ियों में



कई प्रकार के पीकदान

और रेल के स्टेशन पर उड़ती है थूक से मिली हुई है और जिस को रोगियों ने थूका है इस कारण ऐसी धूलि में तपेदिक़ के रोग-कृमि हैं इस से बचना असम्भव है इस लिये कि प्रत्येक मनुष्य में इस के रोग कृमि कभी न कभी प्रवेशही करते हैं परन्तु जब शरीर पुष्ट और आरोग्य है और नाक में ज़ुकाम नहीं है तो रक्त कुछ न कुछ कृमि को अवश्य ही नाश कर डालेगा। परन्तु जब शरीर थोड़े और अपथ्य भोजन से, अधिक परिश्रम

से या विषय-वासना से निर्बल होता है तो शरीर में इन कृमि को नाश करने की शक्ती नहीं रहती है। वे लोग जो किसी प्रकार की मदिरा का पान करते हैं उन को तपेदिक्र के रोग लगने का अधिक भय है और यदि उन्हें एक बार लग जावे तो उन के बचने की आशा कम है॥

तम्बाकू पीने से फेफड़ों और कण्ठ का बिगाड़ होता है और तपेदिक्र लग जाने का मार्ग सुगमता से तैयार होता है॥

जब कोई ऐसे स्थान पर रहता है जहां पर घर निकट २ बने हैं जैसे शहरों में, तो इस रोग के लग जाने का अधिक भय है उस की अपेक्षा कि ऐसे स्थान में रहे जहां पर घर निकट २ न बने हों॥

निवास स्थान के घर की दशा पर मनुष्य का स्वास्थ्य अधिक निर्भर है। यदि रहने का घर छोटा है और बहुत लोग उस में रहते हों तो उस में बहुधा रोग होता है। साधारण कोठरी में दो या तीन से अधिक लोग न सोवें और इतने भी तब सोवें जब उस कोठरी में दो या और अधिक बड़ी २ खिड़कियां हों। प्रत्येक कमरे की भीतों पर दो या और अधिक बड़ी बड़ी खिड़कियां हों॥

रात के समय एक खिड़की खुली रहे क्योंकि यदि बन्द कर दी जाय तो भीतर की वायु दुर्गन्धित हो जाती है और स्वास्थ्य को हानि पहुंचती है॥

ग्रीष्म ऋतु में जब बहुधा धूल होती है तो सदैव झाड़ने के पूर्व पानी छिड़को॥

यदि तपेदिक्र से बचना चाहो तो अपने घर और उसके आस पास के स्थानों को स्वच्छ रक्खो कि मक्खियां न हों क्योंकि मक्खियां तपेदिक के रोग-कृमि लिये फिरती हैं। देखो ४८ वें अध्याय में कैसे मक्खियों की रोक होती है॥

इस में जोखिम है कि तपेदिक के रोगी का प्याला, चम्मच, बर्तन, तोलिया या चिलमची को उपयोग करो। हां यदि उस के उपयोग करने के पश्चात् उबाले गये हैं तो काम में ला सक्ते हो। तपेदिक्र मांसाहार और दूध उपयोग करने से भी लग सक्ता है सो खाने के पूर्व इसे खूब पका लेना चाहिये और दूध उपयोग करने के पूर्व उबाला जाय॥

कोई २ पेशों के लोगों को तपेदिक्र लग जाने का भय रहता है। ऐसे पेशे जिन में काम करनेवाले को धूलि पूरित और धुआं वाली वायु में श्वास लेना पड़ता है। उदाहरण हेतु सिगार और सिगरेट बनाने वालों, पत्थर

काटने वालों, चावल को पुतली घर (मिल) में स्वच्छ करनेवालों को। तपेदिक़ उन लोगों में बहुत होता है जो झुक के काम करते हैं जैसे दर्ज़ी, टोपी बुननेवाले, टोकरी बुननेवाले और छापा ठीक करनेवाले। बहुत सी पाठशालाओं और विश्व-विद्यालयों के विद्यार्थियों को अपने पाठ को सारे समय झुक के सीखने के कारण से और बाहर व्यायाम न करने से हो जाता है॥

तपेदिक़ कैसे अच्छा हो जाता है।

जिसे क्षय रोग हो वह आशा न छोड़े। क्षय रोग चंगा हो सका है। जब किसी को यह रोग लग जाए तो जितनी शीघ्र चिकित्सा आरम्भ करोगे यह निश्चयपूर्वक चंगा हो जायगा। इस से यह बात प्रगट होती है कि यह



क्षय रोगी को खुली वायु में रक्खो

कैसी मुख्य बात है कि वे लक्षण जो इस अध्याय के आरम्भ में बताये गये हैं यदि किसी की देह में दिखाई दें तो फ़ौरन चिकित्सा आरम्भ कर दे कि शीघ्र अच्छा हो जाए॥

केवल एक ही चिकित्सा तपेदिक़ के रोग की विदित है, वह यह है कि शारीरिक बल को बढ़ाना चाहिये कि वह धीरे २ इन रोग-कृमि को नाश करे। यह अति धीरे २ होता है सो रोगी को जान लेना चाहिये कि वह एक या दो हफ़्ते में अच्छा नहीं हो सका है। सब से उत्तम उपाय शारीरिक

बल बढ़ाने और रोग के अच्छे होने का यह है कि बहुत सी ताज़ी वायु और अच्छा और बहुत सा पौष्टिक भोजन, सारे समय मिले, खुली वायु में घर के बाहर जीवन व्यतीत करना, विश्राम करना और चिन्ता न करना॥

मुख्य अस्पताल थोड़े से स्थानों में तपेदिक्र की चिकित्सा के लिये बने हैं और जहां तक बन पड़े इन अस्पतालों में जाना चाहिये। कई बड़े २ शहरों में औषधालय मुख्यतः क्षय रोग के रोगियों की औषधि हेतु खुले हैं। इन में से कई औषधालयों में दरिद्री लोगों को औषधि और सम्मति सेतमेत, मुफ़्त दी जाती है॥

यदि क्षय का रोगी अपना घर नहीं छोड़ सक्ता है तो भी उसे निराश न होना चाहिये, क्योंकि निम्न लिखित शिक्षाओं को पालन करने से यह रोग घर ही में अच्छा हो सक्ता है:—

रोगी की एक अकेली कोठरी होनी चाहिये जिस में केवल उस को छोड़ और कोई दूसरा न रहे। इस कोठरी में बड़ी २ खिड़कियां हों, जो रात दिन खुली रहें। एक विश्रामदायक पलंग भी होना चाहिये। दिन के समय में रोगी को घर के बाहर एक वृक्ष की छाया में झूले पर पड़े रहना भला है। रोगी की कोठरी के फ़र्श और भीतों को बार २ गर्म जल से धो के स्वच्छ रखना चाहिये। (इस धोने के पानी में एक बड़ा चम्मच भर कारबोलिक एसिड या क्लोराइड ऑव लाइम को प्रत्येक गिलास भर पानी में डालो)॥

रोगी के तकिये और बिस्तर को प्रति दिन कुछ समय तक धूप में डाल देना चाहिये॥

जहां तक बन पड़े रोगी को उत्तम और पौष्टिक भोजन दो, अण्डे, दूध, मलाई, ख़ूब पका भात, ख़ूब पका मांस, ताज़ी हरी तरकारी और ताज़े फल ये सब क्षय के रोगी के लिये उत्तम भोजन हैं। देखो ५ वां अध्याय उचित भोजन के विषय में और उसे तैयार करने की विधि॥

शरीर को समय २ पर स्नान करा के स्वच्छ रक्खो। कपड़े भी स्वच्छ रखने चाहियें॥

दांतों को प्रातःकाल और सन्ध्याकाल कूची से धोकर स्वच्छ रखना चाहिये। ४ था अध्याय दांतों को स्वच्छ रखने की विशेषता के विषय में देखो॥

यदि तपेदिक्र के रोगी को कुछ ज्वर हो तो उसे शान्त रखना चाहिये। यदि ज्वर न भी हो तो भी बड़ी सावधानी करनी चाहिये कि चलने फिरने में थकान न हो जावे या ज्वर न आ जाये॥

तपेदिक़ के रोगी को अति सावधानी करनी चाहिये कि दूसरों को जो घर में हैं उनको उस से उसका रोग न लग जाय। रोगी को अपने ही छुरी, कांटा, चम्मच, तौलिया, प्याला, थाली और बिस्तर उपयोग करने चाहियें। और लोगों को भी रोगी की उपयोग की हुई वस्तु उपयोग न करना चाहिये। और घर के शेष बर्तनों के साथ उन को धोना भी न चाहिये॥

तपेदिक़ के रोगी को किसी बच्चे को चूमना या प्यार न करना चाहिये। और उसे कभी वह खाना जो दूसरे लोग खायेंगे छूना न चाहिये॥

मक्खियों को रोगी की कोठरी से दूर रक्खो, यदि ऐसा न हो सके, तो रोगी के थूक और खखार पर मक्खियां कभी न बैठने दो। थूक को ढांक के रक्खो॥

दूसरी मुख्य बात तपेदिक़ की चिकित्सा में प्रसन्न चित्त रहना है। वह जो क्षय के रोग में ग्रस्त है ईश्वर पर भरोसा करने से बड़ा लाभ प्राप्त करेगा क्योंकि ईश्वर मनुष्यों के सारे रोगों को चंगा कर सक्ता है। यदि वह निराश हो जाए और यह सोचे कि वह मर जायगा तो निश्चय वह मर जायगा॥

जिस मनुष्य को तपेदिक़ हो उसे अपने आप को बिना किसी डाक्टर को दिखाये और उस से उपचार लिये बिना कोई औषधि खानी उचित नहीं है। इस रोग की चिकित्सा करने में मछली का तेल (Cod Liver Oil) उत्तम वस्तु है परन्तु यह औषधि नहीं भोजन है; मछली के तेल के परिमाण के विषय में शिक्षाएं बोतल के ऊपर लिखी हुई होती हैं, साधारण रीति से एक छोटा चम्मच भर कर दिन में तीन बार भोजन के साथ देना चाहिये॥

रोगी को प्रति दिन टट्टी अवश्य होनी चाहिये, देखो २१ वें अध्याय की शिक्षाएं। कई गिलास भर जल दिन में पीना चाहिये कि शरीर के विषले पदार्थों को निकालने में सहायक हो॥

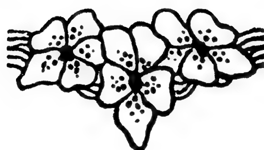
यदि खांसी से दुःखित हो तो जो शिक्षाएं ३६ वें अध्याय में बताई गई हैं ज़ुकाम और खांसी के लिये, उन्हीं का पालन करो॥

कभी २ उनको जिन्हें तपेदिक़ का रोग है प्रातःकाल खांसी आती है। भोर की हाज़िरी (निहारी) के पूर्व एक गिलास भर गर्म दूध पीने से बन्द हो जायगी या एक गिलास गर्म जल का जिस में १५ ग्रेन (एक चाय के चम्मच का चौथा भाग) खाने पकाने का सोडा डालो॥

यदि ज्वर अधिक चढ़ा हो तो थोड़ा ठण्डा पानी ले कर स्पंज करो (या कपडे से पोंछ कर स्नान कराओ)। ठण्डे पानी से आधे घण्टे या अधिक स्पंज करते रहो। (देखो सूचना पृष्ठ ११३-११४)॥

जब रोगी रक्त थूकता है तो उसे अति शांत हो लेटना चाहिये। बहुधा कोई भारी वस्तु उठाने के कारण से या तेज़ी से व्यायाम करने से रोगी के मुंह से रक्त निकलता है। यदि बहुत सा रक्त निकलने लगे तो बर्फ के जल में कपड़े भिगो के रोगी की छाती की सामने के भाग पर रखना चाहिये इन कपड़ों को लगातार ठण्डे रखने के लिये बार २ भिगोओ यदि हिम या बर्फ न मिल सके तो कपड़े ठण्डे पानी में भिगाओ और तब दो ओर से पकड़ कर वायु में कई बार आगे पीछे हिलाओ इस से वे अति ठण्डे हो जायेंगे॥

जब वह जिसे क्षय रोग था अब अच्छा दिखता है और चंगा हो गया है उसे स्मरण रखना चाहिये कि रोग के लौट आने का बड़ा भय है सो स्वास्थ्य की उन वस्तुओं से बड़ी सावधानी करनी चाहिये जिन का वर्णन इस अध्याय में है जिन से यह रोग लग जाता है॥



अध्याय ३१।

"मलेरिया"

"मलेरिया" भारत वर्ष में एक अति साधारण रोग है। और प्रति बर्ष कई सहस्रों मनुष्यों की मृत्यु इसी से होती है। मलेरिया रोगों में अति सुगमता से रुकनेवाला रोग है। क्योंकि वर्तमान रसायन शास्त्रवालों ने इस का निश्चयपूर्वक प्रमाण दिया है कि वह केवल एक ही रीति से लग सकता है और वह यह है कि उस मच्छर के काटने द्वारा लगता है जिस ने प्रथम ऐसे मनुष्य को काटा हो जिसे मलेरिया था॥

मलेरिया का ज्वर मलेरिया के कृमि से जो किसी मलेरिया के रोगी के रक्त में होता है लग जाता है। मच्छर रोगी को काटते और रक्त के साथ ज्वर के कृमि को भी अपने आमाशय में चूस लेते हैं। इस रक्त में मलेरिया के रोग कृमि हैं और कुछ दिनों पश्चात् यह मच्छर किसी अन्य पुरुष को काटता है और उस के शरीर में इन रोग कृमि को घुसेड़ता है और इस से उसे शीघ्र जाड़ा चढ़ता और ज्वर आता है॥

प्रत्येक मच्छर मलेरिया के रोग कृमि नहीं रखते हैं। यह एक मुख्य प्रकार के होते हैं जिन की पहिचान उन के आकार और किसी वस्तु पर खड़े होने के ढंग से की जाती है; चित्र में साफ़ २ अन्तर साधारण मच्छरों में और मलेरिया रखने वाले मच्छरों के मध्य में विदित होता है॥

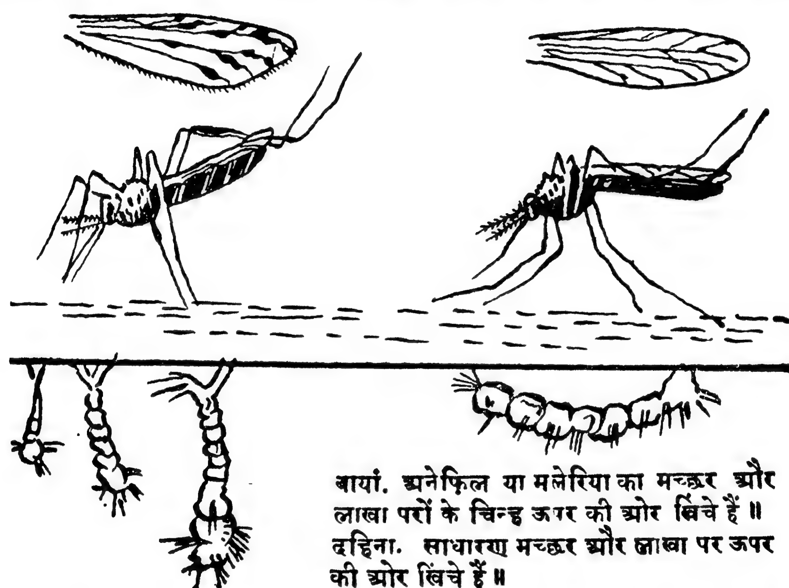
यद्यपि मलेरिया रखने वाले मच्छर ऐसे साधारण नहीं होते जैसे और प्रकार के मच्छर होते हैं तिस पर भी यह कह सके हैं कि साधारण नियम यह है कि जहां पर दूसरे प्रकार के मच्छर होते हैं वहां पर मलेरिया विष रखने वाले मच्छर भी होते हैं॥

मलेरिया फैलने से कैसे रोक सके हैं।

मलेरिया को फैलने से रोकने के लिये केवल यह करना आवश्यक है कि सब मच्छरों को नाश कर डालो। सब से उत्तम उपाय इस का यह है कि मच्छरों को न उत्पन्न होने दो। मच्छर केवल जल में उत्पन्न होते हैं। मादा अपने अण्डे तालाब के पानी में, धान के खेत में, पोखर में, बालटी

में, घड़े में, एक खाली टीन के पीप में, एक खाली नारियल के छिलके में, या पानी में या किसी पानी के बर्तन में देती है। अण्डे दो या तीन दिनों में रेंगनेवाले जन्तुओं का आकार ले लेते हैं प्रत्येक मनुष्य इन रेंगनेवाले कीड़ों की गति को और आकार को जो तालाब और पोखरों में दिखाई देते हैं जानता है। दो हफ़्ते में ये रेंगनेवाले कीड़े पूरे मच्छरों में परिवर्तन हो जाते हैं॥

मच्छरों के बढ़ने से रोकने के लिये तालाब और पोखरों में नालियां बना देनी चाहियें। बहते जल में मच्छर उत्पन्न नहीं होते हैं, खाई और



बायां. अनेफिल या मलेरिया का मच्छर और लार्वा परों के चिन्ह ऊपर की ओर खिंचे हैं॥
दहिना. साधारण मच्छर और लार्वा पर ऊपर की ओर खिंचे हैं॥

नालियां गहरी खोदनी चाहियें और किनारे खड़े और घास पात उन में न होनी चाहिये। बर्षा ऋतु में बहुधा सब पानी को नाली द्वारा बहा नहीं सके हैं यूं उस को तालाबों और पोखरों में एकत्र होने से रोको। यदि तालाब में नालियां नहीं बन सकी हैं तो उस में बहुत सी छोटी मछलियां डालो या बतख़ रक्खो क्योंकि छोटी मछलियां और बतख़ इन रेंगनेवाले कीड़ों को खा जायेंगी और इस प्रकार से मच्छरों को बढ़ने से रोकेंगी। तालाबों में जहां कहीं पानी एकत्र होता है तो वहां पर पानी की सतह पर मिट्टी का तेल छिड़क देने से मच्छर निःसन्देह और अवश्य न बढ़ेंगे।

तेल पानी पर फैलता है और एक पतली सतह बनाता है जिस से रेंगनेवाले कीड़ों को वायु नहीं मिलती है और इस प्रकार से वे शीघ्र मर जाते हैं। इस में अधिक तेल की आवश्यकता नहीं है। एक बड़े पीप के लिये या उतने बड़े पानी के बर्तन के लिये एक बड़ा चम्मच भर मिट्टी का तेल बस होगा। एक २० फ़िट लम्बे और २० फ़िट चौड़े तालाब के लिये एक बड़ा गिलास मिट्टी के तेल का छिड़कने के लिये बस है। यदि पानी प्रति दिन या दूसरे दिन बरसता है तो तालाब में हफ़्ते में एक बार तेल छिड़कना चाहिये॥

मच्छर जिस स्थान पर उत्पन्न होते हैं उस से अधिक दूर नहीं उड़ते हैं। इस कारण अपने घर में मच्छर न रहने के लिये अपने घर से २०० फ़िट की दूरी पर जितने तालाब या ऐसे स्थान हों जहां पर पानी भरा हो, इन में मट्टी के तेल का छिड़काव करो। सावधानी करो कि पानी पुराने टीन के बर्तनों, घड़ों या बांस के ठूंठ पर इकत्र न होने पावे, यदि घर की छत के किनारे पर नाली हो तो उसे कुछ हफ़्तों के पश्चात् स्वच्छ किया करो कि उस में पानी एकत्र न होने पावे॥

मलेरिया रोकने का एक दूसरा उपाय है जिसे प्रत्येक मनुष्य बुड्ढे या युवा कर सक्ते हैं वह यह है कि प्रत्येक रात को मच्छरदानी के भीतर सोओ। मच्छर जो मलेरिया का विष रखते हैं दिन को बहुत कम काटते हैं वे बहुधा सूर्य्य अस्त होने के पश्चात् काटते हैं। मच्छरदानी की जाली महीन होनी चाहिये और उसे अच्छी रीति से लपेटना चाहिये कि मच्छर घुसने न पावें। मच्छरदानी का प्रत्येक रात उपयोग करो। जब घर से बाहर यात्रा करने जाते हो तो मच्छरदानी भी लेते जाओ कि प्रति रात उपयोग करो। बालकों के पलंग पर भी मच्छरदानी होनी चाहिये॥

लक्षण।

मलेरिया के साधारण लक्षण तो प्रत्येक को विदित हैं:—जाड़ा लगना, ज्वर चढ़ना, पसीना आना और सिर पीड़ा। जाड़ा चढ़ने के पूर्व रोगी को निर्बलता सी लगती है और कभी जी वमन करता और क्षय भी होती है और सिर में दर्द होता है, बालकों को कभी २ ऐंठन भी होती है। ठण्ड लगने के पश्चात् ज्वर १०३ या १०४ F. डिग्री चढ़ आता है ज्वर दो या तीन घण्टे चढ़ा रहता है तब पसीना निकलने लगता है और तत्पश्चात् ज्वर उतर जाता है। यह ज्वर प्रति दिन आता है परन्तु साधारण रीति से प्रत्येक दूसरे दिन चढ़ता है या दो दिन छोड़ कर चढ़ता है। कभी २

रोग के नियमानुसार भी नहीं चढ़ता है। हफ़्ते में और कभी २ महीने में दो बार चढ़ता है।

मलेरिया कई प्रकार का होता है। मलेरिया के कोई २ रोगियों के लक्षण मोती भिरा ज्वर के लक्षण की नाईं होते हैं और कोई २ रोगियों में सब से मुख्य लक्षण विषम सिर-पीड़ा होती है। बालकों में कभी २ दस्त और निर्बलता ही के लक्षण होते हैं॥

चिकित्सा।

ऋतु ज्वर के लिये सब से उत्तम औषधि जो इस समय तक विदित है कोनीन है। जब जूड़ी दूसरे या तीसरे दिन नियत समय पर आवे तो कोनीन खिलाने की सब से उत्तम रीति यह है कि जिस दिन जूड़ी आने वाली हो तो उस के पूर्व सन्ध्या काल को एक खुराक कोठा स्वच्छ करनेवाली औषधि (अर्थात अरंडी का तेल या एपसम साल्टस) दी जाय। यदि जूड़ी दो पहर के पश्चात् तीन बजे आने वाली हो तो ६ बजे भोर के समय १५ ग्रेन कोनीन खानी चाहिये। और इस प्रकार से दूसरे समय जूड़ी चढ़ने के छः घण्टे पूर्व फिर १५ ग्रेन कोनीन खानी चाहिये। दो हफ़्ते तक इसी प्रकार कोनीन खाते रहो। कभी २ प्रत्यक्ष में एक ही बार कोनीन खाने से मलेरिया अच्छा ज्ञात होता है परन्तु धोका खाकर कोनीन खाना बन्द न कर देना चाहिये, क्योंकि ऐसा करने से थोड़े ही हफ़्तों में मलेरिया निश्चय पूर्वक फिर से हो जायगा। मलेरिया के सकल कृमियों को जो शरीर के भीतर हैं नाश करने के लिये आवश्यक है कि कोनीन कई बार खाई जाए॥

जब जूड़ी (बुखार) चढ़ने का कोई नियत समय न हो तो उत्तम चिकित्सा यह है, कि भोर का खाना खा कर १० ग्रेन कोनीन लो और सन्ध्या काल के खाने पश्चात् १० ग्रेन प्रति बार दिन में दो बार खाओ। तब दो या तीन हफ़्तों तक दिन में दो बार ५ ग्रेन कोनीन प्रति बार लो।

बालकों को जिन्हें मलेरिया (ऋतु ज्वर) है १ ग्रेन कोनीन एक दिन में पांच बार दो। बालक जिन की आयु एक से तीन वर्ष की है उन को १ या दो न ग्रेन कोनीन दिन में पांच बार दो। बालक जो ३ वर्ष की आयु से १० वर्ष तक की आयु के हैं उन को २ या ३ ग्रेन कोनीन दिन में पांच बार दो॥

एक छः वर्ष के बालक को २ ग्रेन कोनीन प्रति दिन रोग से रक्षित रहने के लिये दो। परन्तु प्रति दिन कोनीन लेना बहुत काल तक भला नहीं है क्योंकि इस से स्वास्थ्य को हानि होती है॥

चेचक का टीका लगाना।

शीतला समस्त असाध्य रोगों में असाध्य और छूतका लगने वाला रोग है। यह रोग मनुष्य को अति शीघ्र लग जाने वाला है। जब मरी इस रोग की फैलती है तो यदि १०० जन हों जिन के टीका न लगा हो तो उन में से केवल एक या दो जन बचेंगे जिन को यह रोग न लगे। यह बुड्ढे और युवा, पुरुष और स्त्री सब को लगती है। प्राचीन समय से कोई और ऐसा रोग किसी भी देश में नहीं है जिस से लोग इतना भय खाते हैं जितना कि शीतला से क्योंकि यह न केवल अति ही लगने वाली है परन्तु जब उन को होती है जिन्हें टीका नहीं लगा है तो प्रति सैकड़ा २५ से लगा कर ५५ तक मृत्यु होती हैं। और यदि वह जिसे यह रोग हुआ है मृत्यु से बच भी जाता है तो वह निस्सन्देह कुरूप हो जाता है। उसका मुंह शीतला दानों के चिन्ह से भर जाता है या कानों से बहरा या नेत्रों से अन्धा हो जाता है॥

वैद्यों का शीतला के विषय में एक मत है कि यह रोग किसी सूक्ष्म अदृश्य रोग कृमि द्वारा होता है। परन्तु अब तक उस मुख्य कृमि का कुछ पता नहीं लगा है यह तो विदित है कि रोगी के नाक और मुंह से जो कुछ निकलता है और सूखे छिलके और दिवली जो रोगी की त्वचा से जब वह चंगा होने लगता है निकलते हैं ये अति लगने वाले हैं। यह भी प्रगट हुआ है कि यह रोग प्रति सैकड़ा ९५ या ९९ ऐसे मनुष्यों को होता है जिन को शीतला का टीका नहीं लगा है और ऐसे मनुष्यों को जो मदिरा तम्बाकू नहीं पीते और सदाचारी हैं उन की दशा दूसरों की अपेक्षा बहुत ही भली रहती है॥

लक्षण

जब इस रोग के कृमि किसी में प्रवेश करते हैं। तो १२ दिन तक शीतला प्रगट नहीं होती है। बालकों को आरम्भ में जूड़ी आती है, फिर सिर में दर्द होता है और पीठ और अङ्ग में अति तीक्ष्ण पीड़ा होती है।

आरम्भ होने के चौथे दिन दाने निकलते हैं; बहुधा माथे पर और कलाई की ऊपरी ओर दीख पड़ते हैं। यह दाने लाल मसूर के दाने के समान होते हैं परन्तु एक दो दिन में बढ़ जाते और स्वेत दूध के प्रकार के लस से भर जाते हैं तब एक दो दिन में इस दूध के समान लस का परिवर्तन पीप में हो जाता है॥

चिकित्सा।

शीतला के लिये कोई विशेष औषधि नहीं है। मुख्य बात सावधानी से सेवा टहल करना है। रोगी को पलंग पर शान्त रक्खो। कोठरी को बिलकुल बन्द न करो ऐसा करो जिस से रोगी को ताज़ी वायु मिलती रहे। उबला हुआ पानी ठण्डा कर के रोगी को पीनेको बहुतसा दो। जब ज्वर अधिक चढ़े तो रोगी को शीत जल से स्पञ्ज कर डालो (कपड़े को जल में भिगो के शरीर पोछना)। कोठा साफ़ करने की औषध जैसे एपसम साल्टस प्रति दिन या दूसरे दिन एक खुराक दो॥

चेप और खिलली के लिये निम्न लिखित बातों को करना चाहिये। लिन्ट (पट्टी का कपड़ा) को ठण्डे जल में जिस में २।१०० अंश कारबोलिक एसिड का मिला है भिगो कर रोगी के चहरे और हाथों पर लगातार लगाते रहो। जब दाने सूखने लगते हैं और पपड़ी गिरने लगती है तो उन पर बार २ वेसलीन का लेप करो। बालक को दानों को खुजलाने न दो क्योंकि ऐसा करने से शीतला के गहरे चिन्ह पड़ जायेंगे॥

नेत्रों की सावधानी करना अति मुख्य बात है। बोरिक एसिड के लोशन में लिन्ट के एक टुकड़े को भिगो के चार घण्टे पश्चात् पलकों को धोया करो (देखो ५० वां अध्याय, उपचार नम्बर १) आंख के पाटे को धो और सुखा कर पलकों के किनारे थोड़ा सा वेसलीन लगा दो। प्रति तीन घण्टे या इस से जल्दी बोरिक एसिड के भीगे हुए लोशन की कई बून्दें नेत्रों में डालनी उचित हैं॥

मुंह और कण्ठ बार २ मुंह धो के और कुल्ला कर के स्वच्छ रखना चाहिये॥ (देखो अध्याय ५० वां, उपचार नम्बर ६)॥

शीतला का टीका लगाना।

१७१६ सन् ई० के पूर्व शीतला रोग के चंगा करने का कोई उपाय विदित न था। न कोई इस से रोक का उपाय जानते थे। परन्तु उस वर्ष

में एक अंग्रेज़ वैद्य "जेनर" नामक ने खोज कर टीका लगाने का उपाय शीतला से सुरक्षित रहने का निकाला ॥

वे अदृश्य रोग-कृमि जो मनुष्य में शीतला रोग उत्पन्न करते हैं बहुत कुछ इसी प्रकार का रोग गाय में भी उत्पन्न करते हैं जिसे "गाय मसूरिका" कहते हैं। बछड़ा जिसे गाय मसूरिका का रोग है उस से जीफ़ या लेप टीका लगाने के लिये लिया जाता है यह लेप मनुष्य के शरीर में डाला



शीतला का टीका

जाता है। एक टीका का दाना जहां पर मनुष्य को टीका लगा है उठता है और संपूर्ण शरीर में कुछ ज्वर चढ़ आता है। इस के पश्चात् अधिक काल तक या अल्प काल तक मनुष्य की शीतला रोग से रक्षा होती है यदि वह टीका के पश्चात् रोगी के साथ भी सोवे तो उसे न लगेगी ॥

जब से "जेनर" ने यह उपाय निकाला पश्चिमीय लोग इस उपाय का उपयोग करने लगे हैं और फलतः यह हुआ है कि १०० वर्ष से पश्चिमीय देश के लोग शीतला रोग से बहुत कम मरते हैं। उदाहरण के लिये १८७४ में जर्मन ने एक नियम निकाला कि "शीतला का टीका सब को लगाना और दुबारा लगाना अनिवार्य्य है।" नियमानुसार सब बालकों को १२ महीने

के पूर्व टीका लगना है फिर बारा वर्ष की आयु में फिर टीका लगता है। इस नियम के प्रचलित होने के वर्ष से जर्मनी में शीतला रोग की मरी नहीं हुई। जर्मनी में एक वर्ष में १० जन से अधिक (इस में बच्चे और बुड्ढे सम्मिलित हैं) । शीतला, चेचक, से नहीं मरते हैं, जबकि वहां की मनुष्य-संख्या ५ करोड़ ४० लाख है ॥

फ़िलिपाइन टापुओं में, मनिला राजधानी के चहुं ओर के प्रान्तों में शीतला रोग की ओर और शीतला के टीके की ओर ध्यान न दिया। और परिणाम यह हुआ की ६००० या अधिक लोग प्रति वर्ष शीतला रोग से मरते थे। इस के पश्चात् जब टीका लगाने का प्रचार नियम पूर्वक हुआ तो उसी भाग में एक पूरे वर्ष में शीतला रोग से एक भी मृत्यु न हुई ॥

सन १८८६ ई. के पूर्व जापान में शीतला की मरी अति भयानक थी। उसी वर्ष सरकार ने यह नियम प्रचलित किया कि प्रत्येक बालक को तीन महीने का होने के पूर्व शीतला का टीका लगाना पड़ेगा, फिर दूसरे वर्ष दुबारा टीका लगाना होगा और फिर जब १० वर्ष की आयु का हो तो फिर लगाना होगा। उस वर्ष से ले कर अब तक उन लोगों की संख्या जो शीतला रोग से मरते हैं जापान में घटती जाती है इस कारण बहुत ही थोड़े जापानी अब शीतला रोग से मरते हैं ॥

यह निर्णय हो चुका है कि चेप जो गाय मसूरिका से लिया जाता है निःसन्देह शीतला से रक्षित रखता है। प्रत्येक माता पिता का कर्तव्य है। कि बालक को १ वर्ष का होने के पूर्व (चाहे लड़का हो या लड़की) टीका लगवायें और फिर १० वर्ष की आयु में फिर टीका लगवावें ॥



अध्याय ४१।

सूज़ाक और गर्मी

जब किसी मनुष्य को सूज़ाक (Gonorrhœa) रोग हो तो मूत्र नली में सूजन हो जाती है और स्वेत या पीले रंग की धातु गिरती है ॥ यह रोग सूज़ाक के रोग-कृमि द्वारा होता है और जिसे सूज़ाक है उस के साथ सहवास करने से लग जाता है। यह रोग गांवों की अपेक्षा नगरो में अधिक होता है यह रोग कभी २ वस्तुओं से जैसे तौलिय या वहां पर पायख़ाना करने से जहां कि इस रोग के रोगी ने टट्टी फिर कर मैला स्थान कर रखा है लग जाता है परन्तु इस प्रकार से बहुत कम को लगता है ॥

यह रोग प्रायः सब दशाओं में अनुचित सहवास (स्त्री गमन) द्वारा फैल जाता है इस को रोकने के लिये पवित्र जीवन निर्वाह करना चाहिये ॥

लक्षण।

यह रोग सहवास करने के तिसरे दिन से सातवें दिन तक आरम्भ होता है। उस के लक्षण ये हैं कि मूत्र नली में खुजली और जलन और चुभनेवाली पीड़ा होती है मूत्र निकालते समय पीड़ा होती है और पानी सरी का पदार्थ मूत्र नली से निकलता है कुछ समय पश्चात् वह पानी सरी के पदार्थ का स्वेत वा पीली धातु में परिवर्त्तन हो जाता है ॥

यदि इस रोग की यथोचित चिकित्सा हो तो यह दो महीनों में अच्छा हो जायगा परन्तु बहुधा ऐसा होता है कि पुरानी सूजन मूत्र नली पर चढ़ी रहने के कारण कई महीनों और वर्षों तक पीड़ा सहनी पड़ती है ॥

सूज़ाक के कारण हृदय, जोड़ों, अस्थि कलेजा तक गुर्दे का रोग हो जाता है। जब इन अवयवों का रोग होता है तो उस का परिणाम मृत्यु होती है। यह अति साधारण बात है कि जिन को सूज़ाक के रोग-कृमि नेत्रों में हो जाते हैं इस से नेत्रों में सब से कठिन असाध्य रोग हो जाता है जिस से रोगी बहुधा अन्धे हो जाते हैं ॥

चिकित्सा।

वैद्य की सम्मति लेनी चाहिये। रोगी को अति शान्त होना चाहिये

यदि बन पड़े तो पलंग पर लेटा रहे और बहुत सा पानी पिया करे, पानी में नीबू का अर्क़ मिलाना अच्छा है। प्रति दिन एपसम साल्टस या सोडियम सल्फ़ेट लो। रोगी-अंग को गर्म जल में तीन बार भिगोना चाहिये कि पीड़ा मिटे और स्वच्छ रहे। सम्पूर्ण कपड़े, रूई और क़ागज़ जिस में पीप या धातु लगा हो जला डालना उचित है। और प्रत्येक बार रोगी को हाथ से छूने के पश्चात् हाथों को भली भांति धोना चाहिये। ऐसा न हो को रोग-कृमि नेत्रों में चले जायें और अन्धे हो जाओ। एक चाय का चम्मच भर के सोडा बाइ कारबोनेट (Soda Bi carbonate) (जो पकाने में काम आता है) या पोटासियम साइट्रेट (Potassium Citrate) आधे गिलास पानी में दिन में तीन बार पीना चाहिये। यह औषधि भोजन के एक या दो घण्टे पश्चात् पीना चाहिये। जब सूजन और पीड़ा जाती रहे तो मूत्र नली में दिन में दो बार आरगिरॉल (Argyrol) की पिचकारी देनी चाहिये, सौ अंश में १५ अंश आरगिरॉल की बोतल लेनी चाहिये, इस में से आधा चाय का चम्मच भर औषधि छोटी बून्द पिचकारी के द्वारा मूत्र नली के भीतर डालनी चाहिये प्रत्येक बार औषधि डालने के पश्चात् मूत्र नली को उंगलियों में दबा कर बन्द कर देना चाहिये और इस रीति से कम से कम पांच मिनिट रोके रखना चाहिये कि औषधि बाहर न निकल पड़े। आरगीरॉल को छोड़ ओलिआरिज़िन आव क्यूबेबस (Oleoresin of Cubebs) के ५ ग्रेन या कोपायबा बालसम (Copaiba Balsam) के १० ग्रेन के केपसूल (Capsule) (जिलेटीन की छोटी नली या शीशी) भोजन के पश्चात् दिन में ३ बार खानी चाहिये। इस रोग को चंगा करने के लिये ये औषधियां कई सप्ताहों तक प्रति दिन खानी चाहियें॥

प्रत्येक दशा मे एक विश्वास पात्र डाक्टर की सम्मति लेनी चाहियें ऐसे डाक्टरों के पास नहीं जाना चाहिये जो अपने आप को सूज़ाक और उपदन्श के रोग में अति निपुण छपवाते हैं, जो २ औषधियां समाचार पत्रों में ऐसे प्रख्यात की जाती हैं कि सूज़ाक को निस्सन्देह चंगा करनेवाली हैं उन का कदापि उपयोग न करो। ऐसे डाक्टर और ऐसी औषधि सब झूठी होती हैं। और वे रोगी को हानि अधिक पहुंचाती है और उन से लाभ अति थोड़ा होताहै॥

स्त्रियों में सूज़ाक।

बहुत से मनुष्यों को विवाह से पूर्व ही सूज़ाक हो जाता है फिर जब वे विवाह करते हैं तो रोग उन से उन की पत्नियों को लग जाता है। बहुत सी स्त्रियां अपनी लज्जा के कारण इस रोग की चिकित्सा कराने को नहीं जातीं, परन्तु इस रोग को बढ़ जाने देती हैं, यहां तक कि उन का स्वास्थ्य बिलकुल बिगड़ जाता है॥

लक्षण।

इस रोग में पहिले पहल मूत्र करते समय जलन और पीड़ा होती है, फिर मूत्र करने की इच्छा होती है और उत्पत्तिस्थान से श्वेत या पीले रंग की धातु गिरती है। जब कभी स्त्री को सूज़ाक होता है तो उस के कुछ काल पश्चात् स्त्री को गर्भ का रोग भी हो जाता है। तब उस से मूत्रातिसार रोग हो जाता है (देखो अध्याय ४२ वां) स्त्रियों में बांझपन का मुख्य कारण मूत्रातिसार ही होता है, केवल यह ही नहीं परन्तु इस रोग से उन को कई वर्षों तक क्लेश भोगना पड़ता है। जितनी स्त्रियों के उत्पत्तिस्थान के चीर फाड़ के काम होते हैं उन में से आधे से अधिक का कारण सूज़ाक होता है॥

चिकित्सा।

पलंग पर शान्त हो पड़े रहो, योनि में पिचकारी देनी चाहिये वैसे ही जैसे की मूत्रातिसार के रोग में (देखो अध्याय ४२ वां) गर्म जल का बैठक-स्नान प्रति दिन करना चाहिये (देखो अध्याय २० वां) मुंह द्वारा पीने की वही औषधियें होनी चाहियें जो पुरुषों के लिये सूज़ाक में वर्णन की गई हैं। यदि किसी स्त्री को सूज़ाक हो जाय तो यह अति असाध्य रोग है और किसी चतुर डाक्टर से उस की चिकित्सा करानी चाहिये॥

गर्मी (Syphilis)।

गर्मी ऐसा रोग है जो प्रायः प्रत्येक दशा में ऐसे जन के साथ जिसे यह रोग प्रथम हो सहवास करने से हो जाता है। यदि किसी माता को गर्मी का रोग हो तो उस के बच्चे को जन्म लेने के पूर्व, गर्भ के भीतर ही यह रोग हो सक्ता है। गर्मी और क्षय रोग संसार की दो बड़ी मरी हैं, परन्तु दोनों में से उपदन्श रोग ही अति अधिक पाया जाता है॥

यदि उपदन्श साधारण रीति पर सहवास से होता है तो भी और रीति से भी लग सक्ता है, जैसे चूमा लेने से या अकस्मात रोगी के घाव

को छू लेने से या ऐसे मनुष्य के जिसे उपदन्श हो तम्बाकू पीने का हुक्का, प्याले, चम्मचे, बर्तनों का उपयोग करने से लग जाता है ॥

लक्षण ।

उपदन्श का प्रथम लक्षण एक छोटी फुंसी या फोड़ा वृषण पर या जिस किसी भाग पर यह लग जाय है । यह सहवास करने के बहुधा पांच हफ़्ते पश्चात् दिखाई देता है । एक कच्ची फुंसी जो कड़ी लगती है, फोड़ा निकलता है और इस फोड़े के साथ गिल्टी जांघों के जोड़ में दिखाई देती है ॥

पहिले फोड़े या फुन्सी निकलने के ६ या सात हफ़्ते के पश्चात् एक लाल रंग के ऐसे दाने खसरे सरी के शरीर पर निकलते हैं । और भी लक्षण होते हैं जैसे सिर पीड़ा, जी मितलाता है और मुख बन्द हो जाता है । गला भी बैठ जाता है । चेप वाले घाव बग़ल, गुदा के आस पास त्वचा पर दिखाई देते हैं । बाल गुच्छे के गुच्छे गिर जाते हैं । ये लक्षण उपदन्श की प्रत्येक दशा में नहीं होते हैं ॥

रोग की तीसरी अवस्था तब होती है जब रोग कई महीनों या कई वर्षों का हो जाता है । बड़े गहरे घाव शरीर के भिन्न २ भागों में निकलते हैं । बहुधा नाक सड़ जाती है और गिर पड़ती है और नाक के स्थान में केवल एक छेद रह जाता है ॥ खोपड़ी की अस्थि के टुकड़े या शरीर के किसी भी भाग की अस्थि के टुकड़े उपदन्श के कारण सड़ जाते हैं । और मस्तिष्क, चेतना यन्त्र, हृदय और रक्त और नाड़ियों के असाध्य रोग उपदन्श द्वारा होते हैं ॥

चिकित्सा

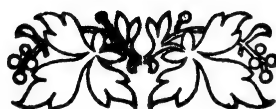
यह मुख्य बात है कि पूरा २ निर्णय कर लिया जावे कि रोगी मनुष्य को उपदन्श रोग है या नहीं, क्योंकि जितनी जल्दी चिकित्सा आरम्भ होगी उतना ही निश्चयपूर्वक लाभ चंगा करने में होगा । प्रत्येक दशा में एक चतुर डाक्टर को इस का निर्णय करना चाहिये ॥

थोड़े समय से डाक्टर वासरमेन ने एक उपाय निकाला है जिस से विदित हो जाता है कि उपदन्श रोग है या नहीं है ॥

अति लाभदायक औषधि जो उपदन्श की विदित है सालवरसन ("६०६") ("Salwarsan 606") है । पारा [(मरक्यूरी

(Mercury) और आइओडाइड आव पोटाश (Iodid of Potash) ये भी लाभदायक औषधियां हैं। ये औषधियां बिना डाक्टर की आज्ञा के रोगी को कभी न देनी चाहियें॥

यदि एक उपदन्श का रोगी विवाह करना चाहे तो उसे न करना चाहिये जब तक कि उस ने दो वर्ष तक चिकित्सा न कराई हो। और इस रोग के सब लक्षण मिट जाने के एक वर्ष पश्चात् विवाह कर सक्ता है। यदि वह इस के पूर्व करे तो अपनी स्त्री को यह रोग देगा और उस बच्चे को भी जो उत्पन्न होगा। यहां तक कि एक मनुष्य जिस को उपदन्श या सूज़ाक रोग कई वर्ष बीते हुआ था और अब उस रोग के कोई लक्षण भी उस में नहीं हैं तो भी यदि वह विवाह करे तो उस की स्त्री को यह रोग लग सक्ता है॥



अध्याय ४२।

स्त्री रोग।

प्रकृति के अनुसार रज-स्राव का वर्णन १५ वें अध्याय में हुआ है। कई रोग ऐसे हैं जो रजस्राव से सम्बन्ध रखते हैं जैसे रज-स्राव का बन्द हो जाना। पीड़ा के साथ रज-स्राव होना, अधिक रज-स्राव होना, धातु का निकलना (श्वेत धातु जो रज-स्राव के समयों के मध्य में निकलता है) और एक रोग है जिसे क्लोरोसिस (Chlorosis) कहते हैं वह रोग कन्या को रज-स्राव आरम्भ होने के समय में होता है॥

रजस्राव का बन्द हो जाना।

उष्ण देशों में कभी कभी ६ वर्ष की आयु में भी कन्या को रजस्राव आरम्भ हो जाता है, परन्तु सम्भव है कि १५ वर्ष तक भी उन को रजस्राव आरम्भ न हो। यदि कन्या १६ वर्ष की आयु की हो जाय और रज-स्राव आरम्भ न हो तो उसे अस्पताल ले जाओ या किसी डाक्टर से उस की परीक्षा कराओ। यदि रज-स्राव के न होने के अतिरिक्त कन्या का शरीर यथोचित रीति से बढ़ा है और स्वास्थ्य भी अच्छा है तो १७ या १८ वर्ष की आयु तक यह रज-स्राव का न होना कुछ चिन्ता का कारण नहीं है। यदि रजस्र व होने की आयु कन्या की हो गई है तिस पर भी नहीं होता परन्तु नियमित समय पर पीड़ा होती है तो सम्भव है कि इस कारण योनि का मुख बन्द होना हो। यदि परीक्षा करने पर योनि का मुख बन्द पाया जाय, तो कन्या को अस्पताल में चिकित्सा के लिये ले जाओ॥

यदि कन्या को रज-स्राव नहीं होता है और वह निर्बल और अशक्त दशा में है, कुछ शक्ति नहीं है, खांसी है और कभी २ ज्वर सा चढ़ता ज्ञात होता है तो कदाचित् कन्या को क्षय रोग है। ऐसी कन्या को जब तक क्षय रोग अच्छा न हो जाय रज-स्राव न होगा॥

जब क्लोरोसिस का रोग होता है तो बहुधा कन्या ऋतुमती नहीं होती है। इस रोग की चिकित्सा निम्न लिखित है:—

गर्भाशय और स्त्री-अण्ड-कोष के यथोचित रीति से न बढ़ने और उन

के छोटे रहने के कारण रज-स्राव नहीं होता। यह डाक्टर से परीक्षा करवाने से निर्णय हो सक्ता है॥

जब रज-स्राव आरम्भ भी गया तिस पर भी वह समय, असमय पर हो सक्ता है, बिना कोई रोग के ये कई महीनों तक बन्द हो जाता है। एक स्थान से दूसरे स्थान को जाने से जहां के ऋतु में अन्तर है कई महीने तक रजस्राव बन्द हो जाता है, ऐसी दशाओं में बहुधा कन्या को रजस्राव नहीं होता पर वह वज़न में भारी होती है और स्वास्थ्य भी भली रहती है॥

कई रोगों में रज-स्राव बन्द हो जाता है। मोती-झरा-ज्वर, लाल ज्वर और ऐसे अन्य २ रोगों में ३ महीने से ६ महीने तक या इस से अधिक समय तक रज-स्राव बन्द रहता है॥

कभी कन्या का ऋतुमती होना हस्त-मैथुन द्वारा बन्द हो जाता है। इस प्रकार की दशा में बुरे अभ्यास को छोड़ना ही चिकित्सा है॥

ऋतुमती न होना या रजस्राव का बन्द हो जाना ऐसी स्त्री में जो ऋतुमती हुआ करती है और गर्भवती नहीं है भय या ठण्ड के कारण से भी हो जाते है। इस के साथ नियत समय पर जब ऋतुमती होना था मुख्य कर पीठ में अति पीड़ा होती है॥

चिकित्सा।

जब ऋतुमती न होने के अन्य २ कारण हैं तो प्रत्येक दशा में इन कारणों को हटा देना आवश्यक है। विवाहित स्त्री जब ऋतुमती नहीं होती तो बहुधा यह उस के गर्भवती होने के कारण होता है॥

नीचे लिखी चिकित्सा रज-स्राव होने के लिये लाभकारी है। यदि कन्या का पालन पोषण ठीक नहीं हुआ है तो उसे अधिक और अच्छा और पौष्टिक भोजन देना चाहिये। उस से अधिक परिश्रम का कार्य्य न कराना चाहिये। प्रति दिन व्यायाम करना, घर के बाहर खुली वायु में रहना, प्रति रात ८ या ९ घण्टे सोना ये उपाय लाभदायक हैं। कदाचित् कोष्ट बद्ध हो तो इस की उपचार चिकित्सा २९ वें अध्याय की विधि के समान करनी चाहिये। एक कन्या जो कभी ऋतुमति नहीं हुई है उस की चिकित्सा करने में एक गर्म जल की पिचकारी दो, तत्पश्चात् (११० F. डिग्री) उष्ण जल का १० मिनीट तक बैठकी-स्नान कराओ। पैर गर्म जल

में हों और सिर पर ठण्डा कपड़ा लगा हो (देखो अध्याय २० वां)। भोजन पश्चात् प्रति दिन उपचार नम्बर १६ (देखो अध्याय ५० वां) तीन बार दो। गर्म पिचकारी और गर्म बैठकी-स्नान जब भय से या ठण्ड से रज-स्राव रुक गया है तो वह लाभ दायक हैं॥

अधिक रज-स्राव होना।

गर्भाशय के रोग से प्रायः सदा अधिक रज-स्राव बहता है। यह बहुधा प्रसव होने के पश्चात् या गर्भपात होने पर होता है जब बालक उत्पन्न होने के पश्चात् मल गर्भ में रह जाता है या जब गर्भ फट जाता है। कभी कभी असावधानी और प्रसव के समय मैले प्रबंध द्वारा रोग-कृमि गर्भ में प्रवेश हो गये या ऋतुमती होने के समय मैले काग़ज़ या कपड़ों के उपयोग से रोग-कृमि प्रविष्ट हुए ऐसी गर्भ की रोगी दशामें रज-स्राव अधिक होता है और कष्ट भी होता है॥

इन दशाओं में घर में चिकित्सा करना कठिन है। भला है कि अस्पताल को जाओ या डाक्टर की सम्मति लो। यदि यह असम्भव हो तो गर्म योनि की पिचकारी लो (देखो अध्याय २० वां)। योनि पिचकारी के हेतु जितना गर्म जल सहन योग्य हो उतना उष्ण लो, पिचकारी लेने के पश्चात् बाहर के उत्पत्तिस्थान के अवयवों और जांघों को ठण्डे जल से धोओ। ऋतुमती होने के समय पलंग पर लेट कर विश्राम करो॥

पीड़ित रज-स्राव।

स्वाभाविक प्रकार से ऋतुमती होने के समय कुछ दुःख होता है। परन्तु यदि पीड़ा है तो रोगी दशा के कारण से हैं। उपरोक्त वर्णन के अनुसार अति अधिक रज-स्राव होने के साथ पीड़ा होती है। पीड़ित रज-स्राव में पीड़ा पीठ में या कोख में होती हैं। कभी२ उदर के नीचे के भाग में भार सा लगता है या गर्भाशय के ओर तीक्ष्ण पीड़ा होती है ये पीड़ाएं लगातार नहीं होती परन्तु अन्तर पर होतीं है॥

चिकित्सा।

यह आवश्यक होगा कि अस्पताल को जाओ और एक डाक्टर की सहायता लो कि यु पिड़ित रज-स्राव अच्छे हो जायं। गर्भाशय रोगी दशा में है और केवल डाक्टर ही चिकित्सा कर सक्ता है॥

घर में चिकित्सा इस प्रकार से लेनी चाहियेः—ऋतुमती होने के पहिले रोगी को गर्म पैर स्नान और गर्म योनी पिचकारी लेनी चाहिये, दूसरे दिन वह गर्म बैठकी-स्नान ले सक्ती है, यदि कोष्ठ बद्ध है तो गर्म पिचकारी लेनी चाहिये (देखो अध्याय २० वां योनी पिचकारी और कोष्ठ बद्धपिचकारी की विधियां) सोने के पूर्व चिकित्सा करनी उत्तम होती है। आमाशय के नीचे के भाग पर ऋतुमती होने के समय सेकन या गर्म जल की बोतलें लगानी चाहिये। खूब गर्म जल पीना भी लाभकारी है॥

श्वेत धातु का गिरना।

लुकोरिया (Leucorrhœa) या धातु गिरना, इस में श्वेत धातु योनि से निकलती है इस से निर्बलता, पीठ पीड़ा और गर्भाशय में दर्द और योनि के मुख पर या आस पास खुजली होती है। इस कि चिकित्सा करने के लिये अस्पताल जाओ या एक डाक्टर से सम्मति लो॥

ये ठण्ड लगने से, अति परिश्रम करनेसे, बुरा भोजन खाने से, अधिक सहवास से अनुचित मैथुन से गर्भाशय के रोग के कारणों से होती है। प्रमेह रोग से भो बहुधा श्वेत धातु गिरने का भी रोग होता है॥

जैसा कारण हो वैसी चिकित्सा होनी चाहिये। घर में जो उत्तम चिकित्सा हो सक्ती है वह योनि में गर्म पिचकारी देना है। तीन से चार सेर पानी जो १२० F. डिग्री की उष्णता का है लो उस में ८ चाय के चम्मच भर बोरासिक एसिड (Boracic Acid) या एक चाय का चम्मच परमेगनेट आव पोटाश (Permanganate of Potash) डालो, यदि परमेगनेट आव पोटाश का उपयोग करो तो एक सेर पानी में मिलाओ और हिलाओ जब तक सब न घुल जाय, तब शेष पानी में मिलाओ। इस चिकित्सा को प्रति दिन करो और सप्ताह में ३ बार गर्म पिचकारी लो। (देखो अध्याय २० वां, योनि पिचकारी देने की विधि)॥

क्लोरोसिस (Chlorosis)।

क्लोरोसिस को "हरा रोग" भी कहते हैं, यह रोग कन्याओं में जब वह प्रायः ऋतुमती होने की अवस्था की होती हैं होता है। यह रक्त की रोगी दशा है। कन्या वज़न में तो नहीं घटती है और पुष्ट और मोटी दिखाई देती है परन्तु त्वचा का रंग ऐसा हो जाता है कि इस रोग को

"हरा रोग" का नाम दिया गया है। कभी भूक लगती है और कभी नहीं लगती, और सदैव रोगी खट्टी वस्तुओं के खाने की इच्छुक रहती है॥

चिकित्सा।

इस रोग में रक्त में लोहे की न्यूनता होती है, कन्या को उत्तम भोजन देना उचित है। उन्हें जिन को क्लोरोसिस है सदैव कोष्ट बद्ध होता है इस कारण जो चिकित्सा २१ वें अध्याय में वर्णन की गई है देना चाहिये, नं० २० उपचार की गोलियां (देखो अध्याय ५० वां) देनी चाहियें। पहिले सप्ताह प्रति दिन में तीन बार एक २ गोली दो, दूसरे सप्ताह में प्रति दिन तीन बार दो दो गोलियां दो, तीसरे सप्ताह में तीन तीन गोलियां प्रति दिन तीन बार दो। दिन में ३ गोलियां तीन बार एक महीना या और अधिक समय तक दो॥

योनि के बाहरी अवयवों के रोग।

योनि के मुख के पास खुजली, जलन और फुड़ियां मैले पन के कारण होती है। उत्पत्ति स्थान के ऊपरी अवयवों को कई बार धोना चाहियें। कमल मुख की नली के भीतरी परत को और सलवटों को धोना चाहिये। योनि के मुख पर सूजन, ललाहट और खुजली अनुचित मैथुन, प्रमेह, धातु के गिरने से, अधिक मूत्र के निकलने से या मले मोटे काग़ज़ या मैले कपड़े की ऋतुमती होने के समय गद्दी बना कर उपयोग करने से होता है॥

चिकित्सा

कारण को हटाना चाहिये। यदि योनि में से धातु निकलने के कारण पीड़ा और क्लेश है तो धातु बन्द करने की चिकित्सा करनी चाहिये। यदि अनुचित मैथुन के कारण से है तो वह बन्द करना चाहिये॥

वह जुएं के कारण से हो सक्ता है यदि ऐसा हो तो उपचार नम्बर १२ (देखो अध्याय ५० वां) का उपयोग करो। यदि गुदा के मुख और आंत के सिरे पर खुजली है तो चिनाने (thread-worms) के कारण से है सो अध्याय ३५ वें में जो चिकित्सा दी है सो करो॥

उपचार नम्बर २२ से उस भाग को जहां पर खुजली हो धोने से लाभ होगा। इस औषधि से धोने के पश्चात् नम्बर २३ या नम्बर ११ उपचार को मलो। यदि फुंसियां हैं तो उन को खोल कर टिंक्चर आयोडाईन का फाहा सा लगा दो॥

गर्भाशय (uterus) और स्त्री-अण्ड-कोष (ovaries) के रोग।

पीठ की पीड़ा आमाशय में निचे की ओर जनने की सी पीड़ा, आमाशय का फूल जाना, ज्वर, दुर्गन्धित धातु का योनि से निकलना, और और २ अन्य लक्षण गर्भाशय या फल कोष के रोगी होने के कारण से होते हैं। जब किसी दशा में ये लक्षण रहते हैं और उपरोक्त चिकित्सा द्वारा नहीं मिटते तो स्त्री को अवश्य अस्पताल या चतुर डाक्टर के पास परिक्षा और चिकित्सा के हेतु जाना चाहिये। कोई रोग जिन के ये लक्षण हैं अति असाध्य हैं और यदि औषधि न की जाय तो शीघ्र मृत्यु हो जायगी॥

बांझपन।

विवाह समय से ही किसी २ स्त्री में सन्तानोत्पत्ति की शक्ती नहीं रहती है या एक या दो बच्चों को जन्म देने के पश्चात् यह दशा हो जाती है। यदि बांझपन विवाह समय से ही है तो इस का कारण यह हो सक्ता है कि उत्पत्तिस्थान के कई अवयव यथोचित रीति से नहीं बढ़े हैं। बांझपन पति के रोग के कारण से या स्त्री के रोगी दशा से भी हो सक्ता है। डाक्टर खुर्दबीन के द्वारा पति के वीर्य्य की जांच कर के बता सक्ता है कि उन में जीवित बिन्दु, उत्पादक जन्तु हैं या नहीं हैं। बांझपन की १०० दशाओं में से १६ दशाएं डाक्टर ने परिक्षा द्वारा पुरुष में दोष से बताईं। दोष दशाएं स्त्री को प्रमेह या गर्मी द्वारा हो सक्ता है। ये रोग पति के अनुचित विषय-वासनाओं में फंस जाने के कारण होते हैं॥

स्त्री में कई बांझ की दशाएं गर्भाशय वा स्त्री-अण्ड के असाध्य रोगों से भी हो जाता है। कभी २ किसी दशा में चीर फाड़ करने से ये दशाएं अच्छी हो जाती हैं, अर्थात यदि गर्भाशय पहिले बच्चा जनने में फट गया है तो इस की मरम्मत हो सक्ती है या गर्भ शय या स्त्री-अण्ड को गिल्टी निकाल दी जा सक्ती है॥

किसी २ दशा में बांझपन असाध्य नहीं होता और उन की चिकित्सा घर ही में निम्न लिखित रीति से हो सक्ती है:—

गर्भवती न होने का कारण अधिक सहवास भी हो सक्ता है। सहवास ऋतुमती होने के पूर्व और पश्चात् महीने में केवल एक या दो बार से अधिक न करना चाहिये। (देखो अध्याय २३ वां अध्याय)॥

कभी २ गर्भाशय या योनि से धातु निकलने द्वारा गर्भवती होना

सकता है क्योंकि वे बिन्दु उत्पादक जन्तु को नाश करते हैं। यह दशा प्रति दिन बोरिक पेसिड की योनि पिचकारी लेने से मिट जाती है। आधा औंस बोरिक पेसिड चार सेर पानी में डाल कर योनी पिचकारी का जल तैयार करना चाहिये। पानी इतना गर्म रक्खो जो सहन हो सके। सहवास के समय और उस के कई दिन पश्चात् योनि की पिचकारी बन्द कर देनी चाहिये। सहवास के पश्चात् कई घण्टा तक स्त्रीको लेटा रहना चाहिये॥

यदि स्त्री का स्वास्थ्य ठीक नहीं है, तो उसकी शक्ती प्राप्त करने वाली चिकित्सा होनी चाहिये, उसे उत्तम पौष्टिक भोजन मिलना चाहिये, उस से अधिक परिश्रम न करवाना चाहिये, जिस से वह शीघ्र थक जाए॥



अध्याय ३७।

त्वचा के रोग और कोढ़

खुजली।

खुजली एक सूक्ष्म कृमि के त्वचा के भीतर छेद कर के घुस जाने से होती है। साधारण स्थिति में बहुधा खुजली उंगलियों के मध्य की त्वचा या कलाई की त्वचा या नाभि या छाती की त्वचा में आरम्भ होती है॥

लक्षण।

प्रथम खुजली होती है, फिर खुजाने के कारण छाले, फुड़ियां और लाल चकत्ते पड़ जाते है। यह बीमारी घराने में एक जन से दूसरे जनों को अति शीघ्र लग जाती है॥

खुजली से रक्षित रहने के लिये, रोगी के पलंग पर बैठना या लेटना न चाहिये क्योंकि खुजली रोगी के बिछौने या पहिनने के वस्त्र या तौलिया उपयोग करने से भी लग जाती है॥

चिकित्सा।

रोगी को उचित है कि प्रथम अपने शरीर को गर्म जल और साबुन से भली भांति धो ले, तब तीन भाग गन्धक और ७ भाग वेसलीन या नारियल का तेल भली भांति मिला कर एक लेप बनाले, गन्धक और तेल को एक कांच के ऊपर, भली भांति मिलाना चाहिये एक लम्बी पतली छूरी से गन्धक को मल २ कर मिश्रित करना चाहिये। प्रत्येक रात और प्रातः काल को तीन दिन तक इस लेप को खुजली वाले स्थानों पर खूब मलना चाहिये। इन तीन दिनों में बिछौना या पहिनने का वस्त्र न बदलना चाहिये। तीन दिन पश्चात् गर्म जल और साबुन से स्नान करने के पश्चात् वस्त्र और बिछौना बदलना चाहिये। मैले बिछौने और वस्त्र को दूसरी बार उपयोग करने के पूर्व, कई मिनिट तक उबालना चाहिये। ये इस कारण आवश्यक है कि खुजली के रोग-कृमि जिन के द्वारा रोग उत्पन्न होता है नाश हो जायं॥

चीलड़ (जुएं) lice।

जो लोग अपने शरीर या वस्त्र को स्वच्छ नहीं रखते है बहुधा उन के सिर और शरीर पर जुएं और चीलड़ पड़ जाते हैं। जो कोई स्वच्छ वस्त्र पहिनता है और अपने शरीर को स्वच्छ रखने के हेतु बहुधा स्नान करता है वह चीलड़ और जुओं से बचा रह सक्ता है॥

चीलड़ों द्वारा खुजली होती है और खुजाने से शरीर के भिन्न भिन्न अंगों पर घाव हो जाते हैं। चीलड़ कपड़ों में मुख्य कर सीवनों में रहते हैं। चीलड़ों (जुओं) को नाश करने के लिये केवल यह ही अवश्यक है कि वस्त्रों का कुछ समय तक खूब उबाल डालो॥

एक प्रकार की चीलड़ ऐसी होती है जो नाभि के नीचे के केशों में रहती है और कभी २ यहां से शरीर के और भागों में फैल जाती है, इन चीलड़ों को नाश करने के लिये दो ग्रेन 'दाल चिकना' अर्थात कर्रोसिव सबलीमेट (Corrosive Sublimate) एक औन्स जल में अर्थात दो बड़े चम्मचों में घोल कर इस पानी से हफ़्ते में एक बार कई सप्ताहों तक चीलड़ों वाले भाग को धोना चाहिये 'दाल चिकना' या कर्रोसिव सबलीमेट एक अत्यन्त तीक्ष्ण विष है, और इस को उपयोग करते समय अति सावधान होना चाहिये। ५० वें अध्याय के उपचार नम्बर २१ से भी ये चीलड़ मर जाते हैं॥

सिर की जुएं (Head Lice)।

जब किसी के सिर में जुएं हो जायें तो उन के मारने का उपाय यह है कि मिट्टी के तेल और नारियल के तेल के समान भाग मिला कर दो तीन दिन तक यह तेल बालों में रात के समय भली भांति मला करो। यह तेल मलने के पश्चात् सिर के ऊपर एक कपड़ा बांध देना चाहिये फिर प्रातः काल के समय गर्म पानी और साबुन से तेल धो डालना चाहिये। रोगी को सावधान होना चाहिये कि जब तक यह तेल उस के सिर में लगा रहे तब तक वह चूल्हे या दीपक के निकट न जाए। यदि सिर में घाव हो गये हों तो उन पर वेसलीन या नारियल का तेल लगाना चाहिये॥

जुओं के अण्डे या लीखें बालों में लगी हुई होती हैं। ये छोटे २ मोतियों की नाईं बालों में पिरोई हुई देख पड़ती हैं। लीखों को नाश करने के लिये हफ़्ते में दो बार बालों को सिरके से धो डालना चाहिये और धोने के बाद महीन दांतों की कन्घी से बालों को भली भांति स्वच्छ करना और काढ़ना चाहिये॥

खटमल ।

खटमल केवल काटने ही में दुःख नहीं देते परन्तु उन के काटने से बहुत से भयानक रोग भी लग जाते हैं। बिछौने या वस्त्र से उन को नाश करने का उत्तम उपाय यह है कि बिछौने या वस्त्र को उबलते जल में डुबो दो यदि चारपाई की चूल में खटमल गुप्त रहते हों तो एक भाग कारबोलिक ऐसिड (या क्रीसोल या इज़ाल या सेनीटस या फ़िनीरल) दशांश जल में मिश्रित कर चारपाई की सब चूल और छेदों में डाल देना चाहिये। तारपीन (turpentine) का तेल भी इस में उपयोग हो सक्ता है॥

फुंसियां (Pimples) या काले मुख वाली फुंसियां।

फुंसियां (Pimples) चहरे पर कंधों और पीठ पर बहुधा दिखाई देती है। काले मुख वाली फुंसियां, फुंसियों की नाई होती है, केवल यह अन्तर है कि इन फुंसियों के सिर पर काला धब्बा होता है॥

चिकित्सा।

मिठाई, पकवान, केक, काफ़ी, तम्बकू और मदिरा को छोड़ देना आवश्यक है। प्रातःकाल को उठने समय एक प्याला गर्म पानी का पीना चाहिये। दिन में कई गिलास पानी के पीने चाहिये। यदि नीबू का अर्क़ पानी में मिला दिया जाय तो रोग शीघ्र अच्छा हो जायगा। प्रति दिन स्नान कर के एक मोटी तौलिया से रगड़ के मलना भी चिकित्सा का एक उपयोगी भाग है। कोठा प्रति दिन स्वच्छ होना आवश्यक्त है। यदि अवश्यकता हो तो कुछ जुलाब की गोलियां जैसे 'कासकारा' की गोलिया उपयोग करो। फुंसियां और काले मुख की फुंसियां एक सुई से खोल सक्ते हैं (सुई को आग की लौ में गर्म करो कि रोग-कृमि मर जाएं)। चहरे को बहुत गर्म जल से धो कर और सुखा कर उस पर लेप दिन में तीन बार मलो। लेप को ऐसे बनाओः—आधा छोटा चम्मच गन्धक पिसी हुई लो और दो २ बड़े चमचे स्वेत सार (starch) और वेसलीन प्रत्येक के लो और इन्हें एक साथ मिश्रित करो॥

अम्हौरी (अंधौरी)

अति ही उष्ण ऋतु में बच्चों को और कभी २ बड़ों को भी लाल ददोड़े या अति छोटे दाने त्वचा पर निकलते हैं। ये पसीना निकलने के कारण से होते हैं॥

चिकित्सा।

त्वचा को ठण्डे पानी से स्पंज करो अर्थात् कपड़े से भिगो के पोंछो तब टालकम पावडर (Talcum Powder) छींड़को। यदि टालकम पावडर नहीं मिल सकता है तो गेहुं का आटा या स्वेतसार (Starch) पदार्थ का उपयोग करो। आधे गिलास पानी में ३ बड़े चमचे पकाने का सोडा (Soda Bicarbonate) को घोलो, और इस में १५ या २० बून्द कारबोलिक पेसिड को डालो, यदि इस में कपड़े के टुकड़े या बादल के टुकड़े को भिगो के त्वचा को पोंछो तो खुजली और जलन बन्द हो जायगी॥

उकौत, छाजन (Eczema)।

शरीर की त्वचा पर इस के चकत्ते होते है, ललाहट खुजली और रस (एक प्रकार का द्रव्य पदार्थ खुजली के स्थानों से निकलता है) पीछे पपड़ी बन जाती है। उकौत (छाजन) से कभी २ त्वचा फट भी जाती है। उकौत चिहरे पर, खोपड़ी पर, जोड़ों के पास, त्वचा की तहों में होता है॥

चिकित्सा।

इस त्वचा के रोग की चिकित्सा करना अति ही कठिन है। मांसाहार और तम्बाकू और मदिरा का त्याग करने से चंगा होने में लाभ होता है। प्रति दिन अधिक जल पान करना चाहिये, फल प्रति दिन खाओ, पानी में नीबू का अर्क मिलाकर पीने से लाभ होता है। टट्टी प्रति दिन होनी चाहिये। यदि रोगी का काष्ट बद्ध है तो रोग चंगा नहीं हो सक्ता है॥

रोगी स्थानों में साबुन और पानी न लगाओ, स्वच्छ नरयल का तेल या वैसलीन को पिघला कर पपड़ो को हटाने के लिये चुपड़ना चाहिये।

रोगी स्थानों को न खुजलाओ। छोटे बालकों के हाथों को कोई तह कपड़ों से बान्ध दो कि वह त्वचा को खुजला न सकें॥

उकौत के आरम्भ में प्रथम खुजली वाले भागों को लोशन से स्पंज करो। लोशन ऐसे बनाओः—एक खूब भर के बड़ा चम्मच पकाने के सोडा को एक गिलास पानी में डालो कि इस पर टालकम पावडर या कुछ श्वेत सार पदार्थ या स्टार्च छिड़को और तब पट्टी बाँधो॥

यदि कुछ गीली है और पपड़ी भी है तो एक लेप लगाओ इस प्रकार बनाओः—जिंक आक्साइड (Zinc Oxide) दो छोटे चम्मच, इतना ही स्टार्च, इतना ही वेसलीन या निर्मल नारियल का तेल एक बड़े चमचे भर इन तीनों को एक साथ मिश्रित कर रोगी भाग पर लगा दो॥

यदि एकज़ीमा बहुत काल से है और रोगी स्थान सूखे और छिलके वाले हैं तो आधा बड़ा चम्मच कोलटार के द्रव्य पदार्थ का लो और दो बड़े चम्मच ज़िङ्क आक्साइड, इन को मिला कर रोगी भाग पर लगाओ। किसी २ रोगी को गन्धक का लेप भी खुजली के लिये है लाभदायक होता है॥

दाद।

दाद् त्वचा का रोग है जो शरीर के किसी भी भाग में हो सक्ता है यह एक रोग-कृमि द्वारा होता है, जो उस फफून्दी के नाई होता है जो भात के ऊपर हो जाती है, यदि वह रात भर बर्तन में रक्खा रहे॥

यह रोग ऐसे जन के शरीर के रगड़ने से, वस्त्र से, या तौलिया या बिछौने से, जिसे दाद् रोग है, हो जाता है। यह शीघ्र फैल जाता है और उन बालकों को जिन के शरीर या सिर पर दाद् है पाठशाला न भेजो जब तक कि अच्छे न हो जाएं॥

दाद् एक छोटे लाल या भूरे धब्बेसे आरंभ होता है और सब दिशाओं में फैलता है। कुछ काल पश्चात् धब्बे का केन्द्र त्वचा के स्वाभाविक रंग पर आ जाता है जब यह होता है, तो रोग का आकार छल्ले के सामान हो जाता है, और खुजली तीक्ष्ण होती है॥

चिकित्सा।

हलकी दशा में नीचे दिया हुआ लेप सन्ध्या काल को लगाओ :—

एक छोटा चम्मच भर (१ ड्राम) रेसॉर्सिन, (Resorcin), १० ग्रेन सेलिसिलिक एसिड (Salycilic Acid) और दो बड़े चम्मच (या ८ ड्राम) वैसलीन या नारियल का तेल इन को मिश्रित करो। प्रातः काल तारपीन लगाओ और दो या तीन दिन तक रात को लेप और भोर को तार पीन (turpentine) लगाया करो॥

असाध्य दशाओं के लिये आइओडीन का लेप प्रति तिसरे दिन दो या तीन बार लगाओ और लाभकारी औषधि इस प्रकार से बनाई जाती है कि दो बड़े चम्मच (या १ औन्स) मरहम में २० ग्रेन क्रिसेरोबीन अर्थात गोआ पावडर [chrysarobin (goa powder)] डाल कर मिला लो यह मरहम जलन उत्पन्न करता है और इस को प्रति दिन उपयोग न करना चाहिये॥

रोगी के वस्त्र पर दाद के रोग कृमि होते हैं इस कारण से बनियान इत्यादि वस्त्र जो त्वचा पर पहिने जाते है उन्हें सप्ताह में एक बार अवश्य उबालना चाहिये॥

सिर का दाद।

सिर का दाद बच्चों में बहुधा होता है। इस से बाल सफ़ेद हो जाते और गिर भी पड़ते हैं, बड़े बड़े छिलके पपड़ी वाले घाव सिर पर हो जाते हैं कभी २ सिर के समस्त बाल झड़ जाते हैं॥

चिकित्सा।

सिर के दाद की चिकित्सा बाल काटे बिना नहीं हो सकी। सब से उत्तम उपाय यह है कि दाद वाले स्थान और उसके निकटवर्ती स्थान को उस्तुरे से स्वच्छ करवाओ॥

बालों को मुंडाने के पश्चात् वही चिकित्सा हो सकी है जो उपरोक्त शरीर के दाद के लिये बताई गई है। एक प्रकार का सिर का दाद अति कठनाई से अच्छा होता है, यदि उपर लिखे हुए उपायों द्वारा अच्छा न हो तो किसी डाक्टर की सम्मति लेनी चाहिये, नहीं तो रोग बढ़ कर सम्पूर्ण सिर को गंजा कर देगा॥

फोड़े और त्वचा के घाव।

बहुत से बालकों में किसी न किसी प्रकार के घाव शरीर की त्वचा के किसी न किसी भाग में होते हैं। इन घावों का साधारण कारण मैलापन है। यदि बालकों को प्रति दिन स्नान कराते तो वे रोग कृमि जिन से ये घाव होते हैं त्वचा पर से निकल जाते॥

बालकों की त्वचा को घावों से रक्षित रखने के लिये आवश्यक है कि उन के शरीर और वस्त्र को स्वच्छ रक्खो और उन्हें मक्खियों और मच्छरों के काटने से बचाओ॥

यदि बालकों को भूमि या धूलि पूरित गली में बैठने या लेटने दोगे तो किसी न किसी प्रकार के फोड़े उन के अवश्य ही निकल आवेंगे॥

यदि बालक की खाल पर खरोंच लगी या कुचल गई है तो चोट लगे स्थान को धो के स्वच्छ करो। खरोंच या कुचले हुए भाग को सुखाने के पश्चात् थोड़ा सा बोरासिक एसिड का पावडर छिड़को या उस पर थोड़ासा टिंक्चर आयोडीन लगा दो। यदि घाव से जल निकलता है तो टिंक्चर आयोडीन न लगाओ। बोरासिक एसिड का पावडर या आयोडीन खरोंच या कुचले भाग को पकने न देगा॥

जब बालक के शरीर पर फुंसियां हों तो जो चिकित्सा इस अध्याय में फुंसियों के निमित्त बताई गई है उस का उपयोग करो। यदि बालक फुंसियों को खुजलायगा तो घाव हो जायगा॥

यदि त्वचा पर अति सूक्ष्म फुंसियां हैं तो उन को सूई से या छोटे तेज़ बांस के टुकड़े से खोलो, सूई या बांस के टुकड़े को उपयोग करने के पूर्व या तो टिंक्चर आयोडीन में या खौलते जल में डुबोओ। फुंसी को खोल कर और उस में से पीप निचोड़ कर निकाल डालने के पश्चात् एक छोटा फाहा एक बांस की चिपट्टी के सिरे पर कुछ रुई लपेट कर बनाओ। इस फाहा को टिंक्चर आयोडीन में डुबो कर फुंसी में घुसेड़ दो। तत्पश्चात् थोड़ी सी रुई या स्वच्छ कपड़ा फुंसी पर लगा कर एक स्वच्छ कपड़े की पट्टी बांध दो॥

यदि त्वचा पर फोड़ा है तो उसे छोटे फल वाले तेज़ चाक़ू से खोलना चाहिये। चाक़ू को कई मिनिट तक उबालो। उस को खोल कर उसी प्रकार का सेवन करो जो ऊपर बताया है। यदि रोगी को बार २ फोड़े होते हैं तो दिन में तीन बार पाव ग्रेन केलशियम सलफ़ाइड (Calcium Sulphide) का दो॥

एक बड़े फोड़े की चिकित्सा ऐसे करो:—उसे पहिले लोशन से धो डालो। लोशन ऐसे बनाओ:—एक चाय के चम्मच भर लाइसोल (lysol) को गिलास भर पानी में डालो। दूसरा लोशन यूं बनता है कि परमेंगनेट आव पोटाश के कुछ थोड़े टुकड़े दो बड़े चम्मच भर पानी में डालो, फोड़े को धो डालने के पश्चात् कुछ बोर सिक ऐसिड उस पर छिड़को॥

सफ़ेदा का मरहम या व्हाईट प्रेसीपिटेट ऑइन्टमेन्ट (white precipitate ointment) साधारण बालक के गर्दन और चहरे के साधारण फोड़ों के लिये अति उपयोगी है॥

बड़े खुले और कच्चे घाव के लिये यह चिकित्सा भली है कि दो तीन तह उस कपड़े की जो एक बड़े चम्मच भर नमक को प्याला भर पानी में घोल कर लोशन बना कर गीला कर लो लगाओ। इस गीले कपड़े के ऊपर तेल चुपड़ा हुआ काग़ज़ रक्खो तब पट्टी बांधो। प्रत्येक घण्टे नमकीन जल में कपड़ा भिगोओ यह चिकित्सा अति लाभकारी है॥

कोढ़।

कोढ़ एक रोग-कृमि बीमारी क्षय रोग के समान होती है। इस के रोग कृमि रोगी के शरीर के घावों में और उस की नाक के रेंट में पाये जाते हैं॥

इस बात का निर्णय हो चुका है कि कोढ़ कई प्रकार के भोजन, जैसे मछली के खाने के द्वारा, नहीं होता है। यह रोग पशुओं द्वारा लगता है यह भी चूक है; परन्तु जिस मनुष्य को यह रोग है उसी से लगताहै॥

यह हो सक्ता है कि कोढ़ किसी प्रकार के कीड़ों द्वारा जैसे, जुएं, चीलड़, खटमल और पिस्सू से लगता है॥

जब घर में एक को कोढ़ होता है तो घराने के और जनों को भी लग जाता है। इस कारण निकटवर्ती सम्बन्ध द्वारा रोग फैलता है। यह रोग बहुधा ऐसे लोगों में पाया जाता है जो मैली, घनी मण्डलियों में रहते हैं और अपने शरीर को स्नान द्वारा साफ़ नहीं रखते और न बार २ अपने कपड़े धोते हैं॥

लक्षण।

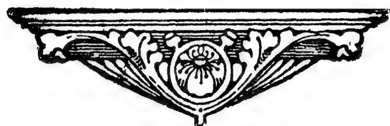
दो प्रकार का कोढ़ होता है, पर दोनों एक ही प्रकार के रोग कृमि द्वारा होते हैं। कोढ़ के प्रथम लक्षण जो दीख पड़ते हैं यह है: ज्वर चढ़ना सिर पीड़ा और शरीर के भिन्न २ अङ्गों मे पीड़ा होना या शरीर के भिन्न २ भागों में ठण्ड लगना, सुन्न सा ज्ञात होना। दूसरा प्रथम लक्षण पसीना निकलना है, पसीना सम्पूर्ण शरीर में या शरीर के एक भाग में जैसे हाथों या पैरों या सिर में निकले। पीछे चहरे पर और अंगो में दाने निकलना और मुख्य कर के माथे की, गालों को, नाक की, कान की, होंठों की त्वचा पर गांठे पड़ने लगती हैं। बहुधा डाढ़ी मूंछों और पलकों के बाल झड़ जाते हैं, पीछे कोढ़ द्वारा पलकें, नाक उंगलियां अंगूठे और शरीर के और २ भाग सड़ कर गिर पड़ते हैं॥

दूसरे प्रकार का कोढ़-रोग केवल चेतना तन्तुओं को मुख्य कर लगता है और सम्पूर्ण स्पर्शेन्द्रिय ज्ञान मर जाता है परन्तु स्पर्शेन्द्रिय ज्ञान के मरने के पूर्व तीक्ष्ण पीड़ाएं मुख्य कर सामने के हाथों और सामने की टांगों में होती हैं। पीछे त्वचा पर धब्बे दिखते हैं, ये धब्बे प्रथम तो लाल होते हैं पर थोड़े काल पश्चात् इन धब्बों का केंद्र श्वेत हो जाता है और इस में कुछ स्पर्श ज्ञान नहीं होता है। बाल झड़ जाते है, सल्वटें और छिलके दिखाई देते हैं, फिर समय पा कर हाथों और पैरों के स्नायु सुन्न पड़े जाते हैं। उंगलियां, अंगूठे और शरीर के दूसरे अंग सड़ कर झड़ जाते हैं॥

चिकित्सा।

प्रत्येक कोढ़ के रोगी का समाचार स्वास्थ्य अध्यक्ष को देना चाहिये सरकार प्रत्येक देश में कहीं न कहीं कोढ़ियों के अस्पताल बनवाती है इन

अस्पतालों में उत्तम रक्षा और चिकित्सा के उपाय उपयोग होते हैं और कुछ खर्च भी नहीं होता है। यदि रोगी अस्पताल को जावे तो रोग से चंगे होने की आशा है। यह मुख्य बात है कि जब का आरम्भ हो तब ही फ़ौरन कोढ़ की पहिचान करा ली जाय। क्योंकि जितनी शीघ्र चिकित्सा हो उतनी ही अधिक आशा रोग को रोकने की होती है इस कारण ज्यूं ही रोगी किसी भी लक्षण को अपने शरीर पर देखे तो तुरन्त ही अच्छे अस्पताल जावे॥



नेत्र और कान के रोग

चिङ्गारी या अन्य वस्तुओं का नेत्र में पड़ जाना।

जब चिङ्गारी या धूलि के कण नेत्र में पड़ जाते हैं, तो उंगली से नेत्र को न मलो, न रूमाल से नेत्र को पोंछ कर कण निकालो, रोगी को लिटा दो पहिली उंगली और अंगुठे से नेत्र को खोल कर बोरिक एसिड का लोशन नेत्र में डालो इस से चिङ्गारी या कण धुल जायगा॥



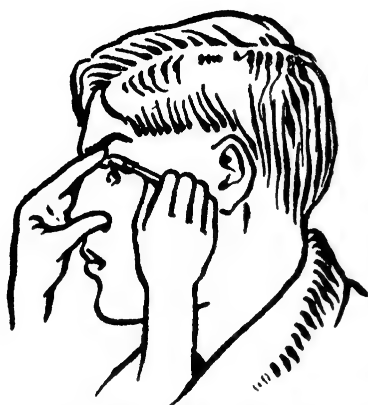
नेत्र में कुछ पड़ जाय उसे निकालने की पहली विधि

यदि इस से चिङ्गारी या कण न निकले तो पलक को उलटाओ। रोगी को नीचे दृष्टी करने को कहो और हाथ धो कर के बरौनी और पलक के छोर को दहिने हाथ की उंगली और अंगुठे से खोलो। तब एक छोटी पेंसिल या बांस के टुकड़े से ऊपर के पलक को दबाओ और उसी समय नीचे के पलक को सामने उठाओ ऐसा कि पलक का भीतर का भाग बाहर आवे (देखो उदाहरण पृष्ट २६६) पलक को ऐसा रक्खो जब कि स्वच्छ कपड़े से चिङ्गारी या दूसरे अन्य पदार्थ को नेत्र से निकाल रहे हो। चिङ्गारी या नेत्र में जो वस्तु पड़ गई थी निकालने के पश्चात् नेत्र में पीड़ा मिटाने के हेतु कुछ बून्द बोरिक एसिड के लोशन की डालो॥

यदि नेत्र में एक टुकड़ा चूने का पड़ जाए तो आंख को एक छोटे चम्मच सिरका और आधा गिलास पानी मिला कर धो डालो॥

पलक के छोर का सूज जाना—चिकित्सा।

पहिले सूखी पपड़ी को गर्म जल से पलकों को धो कर निकालो। बरौनी के ढीले बाल खींच कर निकाल डालो तब प्रति रात मरहम ज़रा सा लगाओ यूं बनाओः—एक बड़े चम्मच (४ ड्राम) वेसलीन में ४ ग्रेन पीली ऑक्साइड आव करक्यूरी (Yellow Oxide of Mercury) को मिश्रित करो॥



अन्य पदार्थ नेत्रों से निकालने की दूसरी विधि।

बिलनी निकलना।

गुहेरी निकलना पलक पर का फोड़ा है। यदि गुहेरी बार २ निकलती है तो रोगी को जा कर नेत्र-वैद्य को नेत्र दिखा कर परीक्षा करानी चाहिये कदाचित् चश्मा लगाना आवश्यक हो॥

चिकित्सा।

पलक को अति गर्म जल से धो, गुहेरी पर के बाल निकाल डालो और तब लकड़ी की दांत खरोचनी या छोटी पतली लकड़ी की सलाई के सिरे को टिंक्चर आइओडाइन में डाल कर उसी सिरे से बिलनी के बाल निकालने के द्वारा जो सूक्ष्म छेद हुआ उस में डालो। जब गुहेरी में से पीप निकल आता है, तो कुछ मरहम जो उपरोक्त प्रकरण में वर्णन किया है पलक के किनारे पर सूजन के लिये लगाओ॥

नेत्रों का आना।

नेत्रों के आने के साधारण कारण ये हैं:—धूलि या मैल नेत्र में पड़ जाना, नेत्रों को उंगली से मलना, एक मले कपड़े या रूमाल से नेत्रों को पोंछना, मुंह को तालाब के पानी में धोना, चिलमची और तौलिया उन लोगों के उपयोग करना जिन के नेत्र आये हैं। बालकों के नेत्रों पर मक्खियों को बैठने न देना चाहिये॥

तम्बाकू पीना, सिगरेट पीना, या किसी भी प्रकार की मदिरा पीने से नेत्रों का उपरोध होता है और बहुत से नेत्र रोग होते हैं। किसी बालक की आंखों में बहुत सा श्वेत या पीला पीप होता है इस का कारण प्रमेह के रोग-कृमी हैं, यह नेत्र रोग बड़ा ही भयानक कष्ट साध्य है और इस के द्वारा बहुतेरे अन्धे हो जाते हैं। यदि डाक्टर इस की चिकित्सा न करे तो निश्चय अन्धे हो जाएंगे। इस प्रकार का नेत्र रोग छोटे उत्पन्न हुए बालकों में बहुत पाया जाता है। इसे रोकने के लिये कुछ बून्द आर्गिराल (Argyrol) लोशन की ज्यूंही बालक उत्पन्न हो इस के नेत्रों में डाल दो। (देखो अध्याय ५० वां, उपचार नम्बर ३)॥

सब प्रकार के असाध्य नेत्र रोग अति छूत के हैं और एक जन से दूसरे को तौलिया, रुमाल, साबुन, चिलमची इत्यादि से लग जाते हैं। इस लिये यदि घर में एक जन को नेत्र रोग है तो उस की तौलिया चिलमची साबुन को दूसरे लोग उपयोग न करें। वह जो रोगी की चिकित्सा करता है औषधि डालने के पश्चात् प्रत्येक बार अपने हाथों को गर्म जल और साबुन से भली भांति धोवे। मक्खियों द्वारा भी नेत्र रोग फैलता है इस कारण बालक के नेत्रों से मक्खियां दूर रक्खो॥

चिकित्सा।

किसी भी प्रकार से आंख आने में बोरिक एसिड के लोशन का उपयोग करो। एक प्याले जल में दो बड़े चम्मच बोरिक एसिड के डालो यह औषधि एक स्वच्छ बोतल में रक्खो। ज्यूं २ लोशन का उपयोग करो त्यूं त्यूं और पानी मिलाते आओ जब तक कि बोतल का सब पावडर समाप्त न हो जाय। एक औषधि बून्द छोड़ने वाली नली से औषधि प्रति तीन वा चार घण्टे डालो या इस से अच्छा उपाय यह है कि "आंख के प्याले" को औषधि से आधा भर दो तब इसे नेत्र पर लगा दो कि ठीक से पलकों पर जम जाए। सिर को पिछे झुकाओ और पलकों को खोलो कि औषध भीतर नेत्र में प्रवेश करे इस "नेत्र-प्याले" को नेत्र पर कई मिनिट तक लगाये रक्खो। बोरिक लोशन के उपयोग करने के पश्चात् प्रति सैंकड़ा १० अंश आर्गिराल लोशन का बना के एक २ बून्द एक २ नेत्र में डालो॥

यदि बोरिक एसिड या आर्गिराल प्राप्त न हो सके तो आधा छोटा चम्मच नमक को पानी में डाल कर इस जल का उपयोग करो, नमक पानी में मिला कर उसे उबालो तब ठण्डा कर के उपयोग करो॥

नेत्र आने की चिकित्सा में यह सावधानी अति ही मुख्य है कि जो कुछ नेत्र में उपयोग किया जाय अति स्वच्छ हो॥

ट्रीकोमा (Trachoma) पलकों के भीतर दाने पड़ जाना।

यह नेत्र रोग का एक अति असाध्य रूप का रोग है, यदि इस रोग के रोगी की पलकें नीचे को खींची जाएं कि भीतरी सतह दिखाई दे तो यह देखोगे कि पलक में असंख्य छोटे २ दाने हैं इस की चिकित्सा नेत्र आने की चिकित्सा के समान करो, पर इस में तुतिया (Copper Sulphate) लोशन और कई और औषधियां भी चंगा होने के हेतु उपयोग करनी पड़ेंगी। यह एक अति छूत का रोग है और डाक्टर से अवश्य सम्मति लेनी चाहिये॥

दूर दृश्य,—निकटवर्ती दृश्य,—नेत्रों में पीड़ा।

प्राकृतिक भाव से पुस्तक को नेत्र से एक फुट की दूरी पर पढ़ लेना चाहिये। यदि पुस्तक को निकट रखना पड़ता है तो प्रत्यक्ष है कि तुम्हें चश्मा लगाना चाहिये। पढ़ते समय छापा का धब्बे सा दिखाई देना, नेत्र केन्द्र में पीड़ा, नेत्र के चहुं ओर पीड़ा, सिर पीड़ा इन सब से यह बात प्रगट होती है कि तुम्हारे नेत्र बिगड़े हैं, इस बिगाड़ को ठीक करने के लिये एक नेत्र-वैद्य के यहां जाना चाहिये जो तुम्हारे नेत्रों की परीक्षा कर ठीक प्रकार का चश्मा दे सके। वे लोग जो चश्म बेचने के लिये फेरी लगाते फिरते हैं विश्वास योग्य नहीं हैं॥

कान के रोग।

बहिरापना।

कान का छिद्र प्रायः एक इंच गहरा है। कान के छेद की भीतर छोर पर एक झिल्ली है जो कान का परदा कहलती है (देखो उदाहरण अध्याय १३ वां) इस छेद में मैला एकत्र हो कर बहिरापन हो सक्ता है, बहिरापन जो अकस्मात होता है बहुधा कान में मैला एकत्र होने के द्वारा हो जाता है॥

मैल निकालने के हेतु एक लोशन एक छोटे चम्मच भर पकाने के सोडा को तीन या चार बड़े चम्मच गर्म जल में मिलाओ, बायें कान का मैल निकालने के लिये रोगी को दहिनी ओर लिटाओ, गर्म औषधि कान में डालो। जल को कई मिनिट कान में रहने दो कि मैल को कोमल करे तब एक छोटी पिचकारी द्वारा कुछ गर्म औषधि कान में से मैल निकालने के हेतु छोड़ो। यदि पिचकारी प्राप्त नहीं हो सक्ती है तो एक लकड़ी की सलाई के छोर पर कुछ रुई लपेटो। यह भली भांति देख कर निश्चय कर लो कि सिलाई के छोर पर रुई लगी है। इस को सावधानी से छेद में डालो और कुछ बार घुमाओ तब निकालो ऐसा करने से मैल का ढेर निकल आयगा। बड़ी सावधानता पूर्वक लकड़ी की सलाई को छेद में कान के परदे तक घुसाना पड़ेगा क्योंकि कान के परदे का सुगमता से उपरोध हो जाता है।

बहिरापना जो धीरे २ होता है और दृढ़ता से बहुत काल से होता चला आता है बहुधा करके नाक, कण्ठ और मध्य कान के रोग द्वारा होता है। अध्याय १३ वें में चित्र को देखने से विदित होगा कि कण्ठ और कान के मध्य में एक छिद्र है, जब नाक में ज़ुकाम होता है या कण्ठ दुखता है तो रोग-कृमि कान में प्रवेश करते हैं और बहिरेपन के कारण होते हैं।

बढ़े हुए कहवे और गदूद भी बहिरेपन के साधारण कारण हैं (देखो २६ वें अध्याय में चिकित्सा के लिये) इस प्रकार से बहिरेपन को चंगा करने के लिये नाक और कण्ठ में औषधि लगानी चाहिये। नाक को दिन में तीन बार पकाने वाले सोडा का एक चम्मच भर कर और एक छोटा चम्मच नमक का एक गिलास पानी में मिलाकर लोशन बनाओ, इस से धोओ और नाक स्वच्छ रक्खो। लोशन को उपयोग के पूर्व गर्म करो और इसी औषधि से दिन में तीन बार कण्ठ का कुल्ला करने में उपयोग करो॥

क्या करना चाहिये जब कोई कीड़ा या दूसरी वस्तु कान में घुस जाय।

यदि कोई कीड़ा कान में घुस जाय तो कुछ नारियल का तेल या मुंगफली का तेल डाल कर उसे मार डालना चाहिये। और तब पिचकारी द्वारा जो इस अध्याय के पहिले भाग में बताई है निकालना चाहिये। यदि कीड़ा दिखाई देवे तो उस को छोटी चिमटी से पकड़ कर निकाल डालना चाहिये॥

ऐसे दृढ़ पदार्थों को जैसे कंकर या मटर निकालने के लिये कान को नीचा करो, कान को पकड़ के सामने और पीछे की ओर खींचो और कान के छिद्र के सामने त्वचा को मलो। ऐसा करने से कभी २ सेम, मटर या कंकर बाहर गिर पड़ेगा। यदि कान में सेम या और किसी प्रकार का बीज हो तो कान के छेद में ज़रा सी शराब डाल दो कि बीज फूल न जाय। यदि उपरोक्त उपाय लाभ दायक न हों तो उत्तम होगा कि डाक्टर की सम्मति लो क्योंकि उस में से निकालने के यत्न में कान को बहुत हानि पहुंच सक्ती है॥

कान की पीड़ा।

कान की पीड़ा बहुधा नाक और कण्ठ में सर्दी लगने के कारण मध्य कान में सूजन हो जाने से होती है। बढ़े हुए कहवे और गदूदों द्वारा बहुत कान-पीड़ा होती है, नाक को ज़ोर से छिनकने से भी कान की पीड़ा होती है। ग़ोता लगाना या तरङ्गों में स्नान करने से भी कान पीड़ा होती है॥

चिकित्सा।

लेट जाओ और पीड़ित कान को एक रबर की थैली में गर्म जल भर कर या एक बोतल में पानी गर्म भर कर लगाओ प्रत्येक दो घण्टे ज़रा सा गर्म जल जो सह सके हो कान में डालो तब कान को रूई से सुखा दो॥

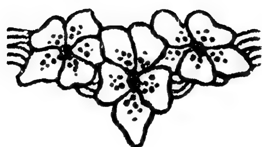
यदि कान १२ घण्टों या उस से भी अधिक देर तक पीड़ित रहे तो एक डाक्टर की सम्मती लेनी चाहिये ॥

कान का बहना।

जब कान की पीड़ा के पश्चात् कान बहने लगता है तो यह प्रत्यक्ष है कि उस पीप ने जो कान में बना कान के परदे को फोड़ दिया है ॥

एक छोटी लकड़ी की सलाई को लो और उस के एक सिरे पर स्वच्छ रूई लपेट के दिन में दो बार कान को सुखा दो। तब एक रूई का फाहा गर्म बोरिक ऐसिड में (वही जो नेत्र के लिये उपयोग किया था) भिगोओ और इस फाहा का कान के छिद्र में उपयोग करो। ऐसा करने के पश्चात् सूखी रूई का उपयोग कर कान को सुखा दो और तब सूखा बोरिक ऐसिड का पावडर कान में डाल दो। सूखा बोरिक एसिड कान में एक छोटी कागज़ की नली बना कर डालो। कुछ थोड़ा सा बोरिक पावडर कागज़ की नली में डाल कर कान के छेद में घुसेड़ो और फूंक कर पावडर कान के छेद के भीतर डाल दो। यह चिकित्सा प्रति दिन करनी चाहिये। छेद का मुंह और कान के भाग जो पीप से गीले हो जाते है तो वहां पर वैसलीन या नारियल का तेल चुपड़ना चाहिये कि फोड़े होने से बचे रहें ॥

जब कान बहता है और यदि कान के पीछे पीड़ा विदित होती है तो वह एक अति असाध्य रोग का चिन्ह है और यदि डाक्टर से सम्मति ले कर उस की चिकित्सा न करें तो शीघ्र मृत्यु हो जायगी ॥



अध्याय ४५।

आकस्मिक घटनाएं।

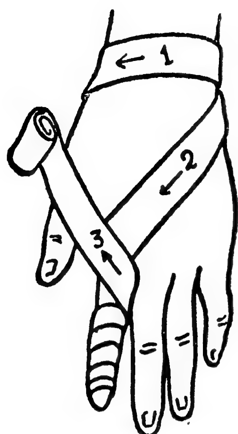
आकस्मिक घटनाएं और चोटें प्रति दिन आती हैं। प्रत्येक बड़े घराने में ऐसा कोई दिन कठिनाई से बीतता होगा जिस में घर के कोई जन का कुछ कट न जाय, या कुचल न जाय, या नेत्र में कुछ पड़ न जाय, या दांत में पीड़ा न हो। कभी २ हानि अधिक होती है जैसे हड्डी टूट जाना या गहरा कट जाना जिस से रक्त खूब अधिक बहता है। जब ऐसी घटना होती है तो बहुत से लोग केवल खड़े हो कर देखते ही हैं परन्तु उस मनुष्य की जिसे चोट लगी है कुछ सहायता नहीं कर सक्ते हैं। प्रत्येक को यह जानना आवश्यक है कि आकस्मिक घटनाओं में क्या करना चाहिये, क्योंकि शीघ्र उचित उपाय करने से तुम किसी की जान बचा सकोगे॥

पट्टी बांधना। (bandage)

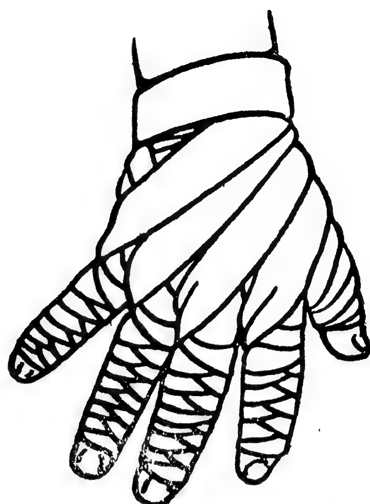
प्रत्येक चोट में पट्टी बांधना आवश्यक होता है इस लिये प्रत्येक को यह जानना उचित है कि शरीर के भिन २ भागों में पट्टी कैसे बांधनी चाहिये। पट्टी स्वच्छ कपड़े की होनी चाहिये। बांहों और टांगों के लिये प्रायः २ इंच चौड़ी पट्टी होनी चाहिये। उंगली के लिये एक इंच से कुछ कम चौड़ी पट्टी होनी चाहिये। भला होगा कि पहिले से कई पट्टियां तैयार कर के रख लो। इन को लपेट कर स्वच्छ काग़ज़ या स्वच्छ कपड़े में रक्खो। आगामी तीन पृष्ठों में उदाहरण दिये हैं कि पट्टी (bandage) कैसे ठीक और उचित रीति से बांधनी चाहिये॥

कुचल जाना।

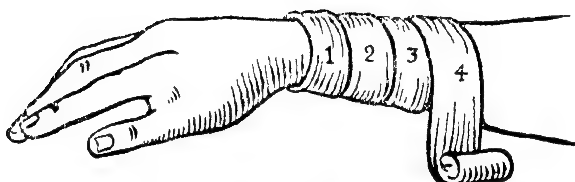
जब एक जन गिर जाता है या अपने शरीर के किसी भाग को मारता है या किसी से मार खाता है तो चमड़ा बहुधा टूटता तो नहीं है परन्तु त्वचा के भीतर के मांस को हानि पहुंचती है और कोई २ छोटी छोटी रक्त नाड़ियां टूट जाती हैं इसी के कारण से चोट लगने के पश्चात् चोट की जगह धब्बा दिखाई देता है॥



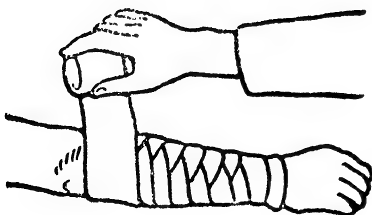
उंगली की पट्टी-नम्बर अनुसार बांधो।

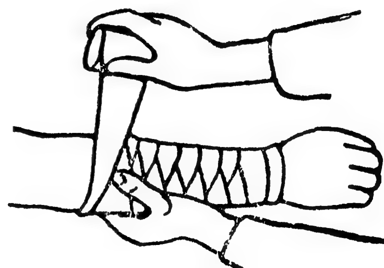


प्रत्येक उंगली को पृथक २ पट्टी बांधना।

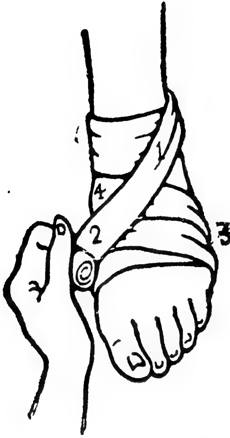


कलाई की पट्टी—नम्बर के अनुसार बांधो

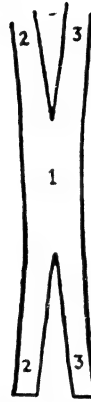




बांह की पट्टी—कलाई से लपेटते हुए चित्रानुसार ऊपर की ओर लपेटते जाओ।

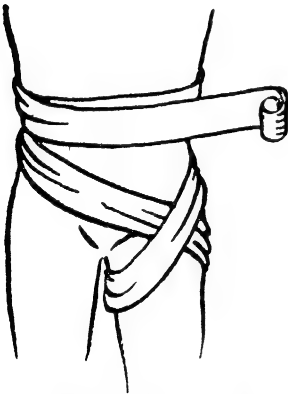


पांव की पट्टी—नम्बर के अनुसार बांधो





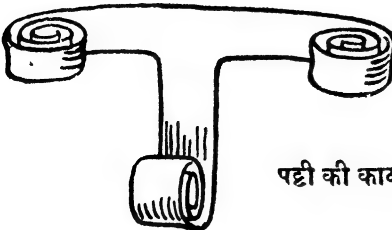
सिर की पट्टी—जैसा दिखाया है वैसा कपड़ा काटो, नम्बर के अनुसार बांधो



जांघ की पट्टी—जैसे नीचे बताई है वैसे पट्टी काटो और ऊपर के समान बांधो

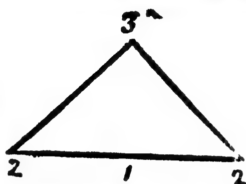


नेत्र की पट्टी।



पट्टी की काट छांट की रीति





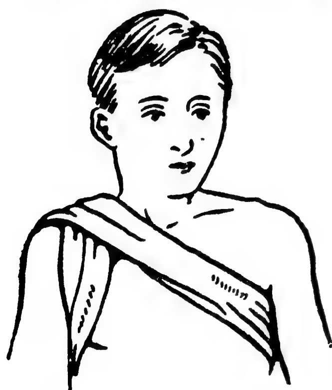
त्रिकोण सिर की पट्टी।

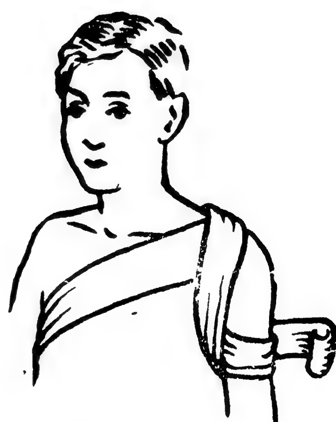


त्रिकोण सिर की पट्टी एक ओर का दृश्य।



त्रिकोण पट्टी बांह लटकाने के लिये।





कन्धे और ऊपरी बांह की पट्टियां।

चिकित्सा।

तुरन्त हिम जल या बहुत ही ठण्डा जल डालो। यदि बर्फ़ का पानी या अति ठण्डा पानी न मिले तो यह करना उत्तम होगा कि कपड़े (जैसे रूमाल या छोटी तौलिया) को अति गर्म जल में डाल के निचोड़ कर हिलाओ और इन कपड़ों को चोट के ऊपर लगा दो, इन कपड़ों को बार २ गर्म जल में भिगोओ या एक बोतल गर्म जल से भर कर कपड़ों पर रख दो॥

चोट लगे भाग को उठाओ। इस से पीड़ा मिटती है॥

यदि चोट लगे भाग का चमड़ा कट गया है तो फाहा से टिंक्चर आइओडाइन लगाओ या कुछ बोरिक एसिड का पावडर उस पर छिड़को और एक स्वच्छ कपड़े की पट्टी बांधो॥

त्वचा का छिल जाना और चोट लगना।

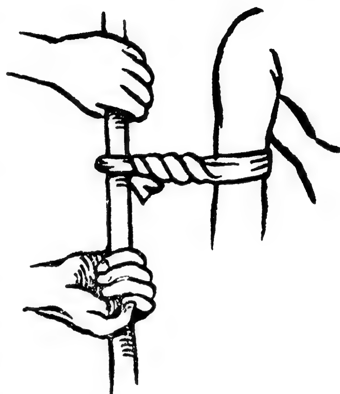
जब चमड़ी छील जाता है या जब ज़रा सा कट जाता है तो सब से उत्तम उपाय यह है कि फाहा बना कर टिंक्चर आइओडाइन लगा दो तब थोड़ा सा बोरिक एसिड का पावडर छिड़क दो और पट्टी बांध दो। टिंक्चर आईओडाईन से जब पहिले लगाते है तो पीड़ा होती है परन्तु यह पीड़ा केवल कुछ सेकण्ड तक ही रहती है। यदि चोट लगा स्थान मैला हो तो भी टिंक्चर आईओडाइन लगाने के पूर्व उसे मत धोओ॥

यदि ज़रा सी चोट लगी है तो केवल एक बार औषधि लगाना बस होगा। परन्तु यदि चोट अधिक लगी और घाव बड़ा है और घाव के आस पास की त्वचा दूसरे दिन लाल और फूली है तो पट्टी निकाल दो और यदि पीप हो तो गर्म बोरिक एसिड के लोशन से (एक छोटा चम्मच बोरिक एसिड को आधे प्याले गर्म जल में डालो) धो डालो। धोने के पश्चात् एक कपड़ा उस में गीला कर घाव पर रख कर पट्टी बाँध दो। यदि कपड़े को प्रत्येक घण्टे बोरिक एसिड के लोशन में गीला कर घाव पर रक्खोगे तो घाव शीघ्र ही अच्छा हो जायगा। यदि बोरिक एसिड न मिल सके तो पानी में उतना ही नमक घोल डालो और दूसरी औषधियां घाव को धोने में उपयोग कर सके हो, कुछ दाने पोटासियम परमेंगनेट के या १० से २० बून्द लाईसोल या कारबोलिक एसिड के आधे प्याले गर्म पानी में डाल कर उपयोग करना लाभदायक होता है॥

गहरे, कष्ट घाव जिन में रक्त अधिक बहता है।

यदि घाव में से बहुत रक्त बहता है और कम नहीं होता है तो एक स्वच्छ कपड़ा अति गर्म पानी में डुबो के घाव पर लगा कर दबाओ। पानी को खूब गर्म होना चाहिये नहीं तो यह उपाय व्यर्थ होगा॥

यदि रक्त घाव से अति शीघ्र बहता है तो रोगी को लिटा दो और घाव के ज़रा ऊपर दोनों अंगूठों से कोमल भाग को दबाओ यदि घाव बांह या टांग में हैं तो एक तह किया हुआ कपड़ा वा रूमाल को ढीला कर के घाव के ज़रा ऊपर के अंग में बांधो और एक लकड़ी से कपड़े को ज़ोर से मोड़ने के लिये उपयोग करो। एक छोटा गोल पत्थर या डाट कपड़े की तह में घाव के ज़रा ऊपर रखना रक्त के बहने को बन्द करने में अति लाभदायक होगा इस की अपेक्षा कि केवल कपड़े ही का उपयोग हो। कपड़े को ज़ोर से मोड़ो (देखो उदाहरण चित्र) बांह या टांग जिस में से रक्त निकलता है ऊपर उठानी चाहिये और एक टेकन पर रखना चाहिये कि रक्त का प्रवाह उस में से कम हो। ज्यूंही रक्त प्रवाह बन्द हो जाता है त्यूंही कसे कपड़े को हटा लेना चाहिये पर इस को धीरे २ ढीला करना, ज़रा सा एक २ समय खोलना चाहिये क्योंकि यदि सब एक दम से खोल दोगे तो घाव से फिर रक्त बहने लगेगा॥



टांग या बांह को कपड़े से मोड़ कर बांधने से रक्त बहना बन्द करना

ज्यूंही कपड़ा कस के मोड़ा गया तो एक फाहा कमाई हुई रूई का एक सलाई के छोर पर लपेट कर बनाओ और टिंक्चर आईओडाईन का घाव पर लगाओ, जब रक्त बहना बन्द हो जाता है तो घाव के ऊपर कुछ तह कपड़ की जो कुछ मिनिट तक उबाला गया है रक्खो तत्पश्चात् पट्टी बांधो॥

खोपड़ी के घाव से रक्त बहना बन्द करना।

घाव के ऊपर एक पतला कपड़ा जो टिंक्चर आईओडाइन से गीला हो रक्खो तब इस पर कई तह स्वच्छ कपड़ों की गद्दी बना कर रक्खो, इस गद्दी को दृढ़ता पूर्वक घाव पर दबाओ॥

चहरे और गर्दन से रक्त बहना।

कटे हुए होंठों का रक्त बहना यूं बन्द करो। हाथों को धोओ, चौथी उंगली मुंह के भीतर और अंगूठा बाहर कर के उंगली और अंगूठे से चोट को दृढ़ता पूर्वक दबाओ॥

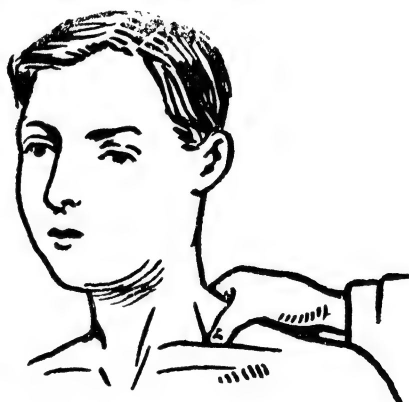
जब मुंह से अधिक रक्त बहता है तो रोगी का गला ऐसे पकड़ो जैसे तुम उस का गला घोंटने के समय करते हो। उस का गला जबड़ों के नीचे पकड़ कर ज़ोर से दबाओ इस से रक्त का प्रवाह चहरे पर कम हो जायगा। इस के साथ गद्दी बना कर घाव पर रख कर जैसे खोपड़ी की चोट पर किया वैसे ही दबाओ॥

कन्धों और बग़ल से रक्त बहना।

हंसली की हड्डी के बीच में पीछे से अंगूठे से दृढ़ता पूर्वक दबाओ (देखो उदाहरण—नीचे दिया हुआ चित्र)

जब घाव में बिगाड़ हो तब क्या करना चाहिये।

जब घाव लाल, पीड़ित और सूज जाता है और उस में कुछ पीप पड़ गई है तो उसके लिये यह उत्तम उपाय है की कई छोटे कपड़े बोरिक एसिड के लोशन में, एक छोटा चम्मच बोरिक एसिड को आधे प्याले पानी में डाल कर, गीले घाव पर रक्खो, इस को बार २ गीला रक्खो कि वह बराबर गीला ही रहे। सब कपड़े जो घाव पर रखते हो पहिले पानी में उबाल लेने चाहियें। यदि बोरिक लोशन से भीगे हुए कपड़े के ऊपर एक टुकड़ा मोम जामा या मोम का काग़ज़ या केले का पत्ता रक्खा जाय तो कपड़े को शीघ्र सूखने न देगा। यदि बोरिक एसिड न मिल सके तो उस के स्थान पर साधारण नमक का उपयोग करो॥



हंसली की हड्डी को मध्य में अंगुठे से दबाना

यदि किसी प्रकार की चोट हाथ या पैर में हो और उस में पीप पड़ गई हो तो उस के लिये निम्न लिखित उपाय अति लाभदायक है:— दो बड़ी

बाल्टी जिन में हाथ या पैर समा सके लो और एक में अति उष्ण जल और दूसरे में अति शीत जल डालो और पानी में प्रत्येक गिलास के लिये एक छोटा चम्मच नमक डालो, जितना गर्म और जितना शीत जल होगा उतना ही लाभ होगा। चोट लगे हाथ या पांव को पहिले एक या अधिक मिनिट तक गर्म जल में डालो। फिर निकाल कर कुछ सेकण्ड तक शीत में डालो। ऐसा २० वा अधिक मिनिट तक करते रहो। पानी को बार २ गर्म करना पड़ेगा कि वह बहुत गर्म रहे और ठण्डे पानी को बार २ बदलो कि वह अति शीत रहे॥

मोच आना।

मोच एक ऐसी चोट है जो जोड़ों को एकाएकी मोड़ देने से आ जाती है। कलाई और टखने के जोड़ों में बहुधा मोच आती है॥

यदि अति अधिक मोच आई है तो भला होगा कि किसी डाक्टर को दिखाओ कदाचित मोच के बदले हड्डी टूट गई हो।

मोच के लिये प्रथम चिकित्सा यह है कि आधे घण्टे या और अधिक उसे जितने गर्म पानी को सह सके हो उतने गर्म जल में डाले रहो। और फिर एक लसदार पलास्टर को मोच आये भाग में लगा दो या मोच आये भाग पर कस के कपड़े की पट्टी बांध दो। मोच के नीचे से पट्टी बांधना आरम्भ करो)। (जैसे यदि हाथ में मोच है तो उंगलियों की ओर से बान्धना आरम्भ करो) दूसरे दिन पट्टी खोल कर मोच वाले भाग को १५ या २० मिनिट तक उष्ण जल में डुबा रखो। जब हात या पाव उष्ण जल में है तो मोच आये भाग को कोमलता से मलो। ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर की ओर मलो॥

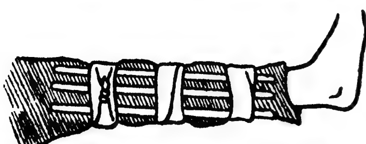
हड्डी का टूटना।

जब कभी हड्डी टूट गई हो तो एक डाक्टर को बुलाना चाहिये। नीचे लिखी हुई शिक्षाएं उन के लिये हैं जिन्हें डाक्टर तुरन्त नहीं मिल सक्ता सो ये शिक्षाएं उस समय तक के लिये है जब तक कि डाक्टर न आ जावे।

यदि हड्डी टूट गई है तो रोगी को चुप चाप लिटा दो। हड्डी टूट जाने से दोनों छोरों पर जो तीक्ष्ण नोक हो जाती है जैसे लकड़ी के तोड़ने से दोनों छोरो पर नोक बन जाती है अवयवों को गति होने से ये नोक मांस को फोड़ डालेगी और यूं अति हानि या पीड़ा होगी॥

जिस की हड्डी टूट गई हो तो उसे उठाने के पूर्व टूटे भाग पर किसी प्रकार की पटरी बांध देनी चाहिये कि हड्डी के टूटे छोर हिलने न पावें॥

यदि टूटी हड्डी बांह या टांग की है तो बांस की पतली खपची तोड़ो जो दो इञ्च चौड़ी हो। यदि बांह की हड्डी टूट गई हो तो बांस की खपची एक फुट लम्बी हो, यदि टांग की हड्डी टूट गई हो तो खपची इतनी लम्बी हो कि पांव से कूल्हे तक पहुंच जाए॥



टांग की भंग अस्ति में खपची और पट्टी बान्धने की विधि।

खपची लगाने के लिये पहिले टूटी बांह या टांग को सीधा कर लेना आवश्यक है टूटे स्थान को कोमलता से पकड़ कर यत्न करो कि दोनों छोर मिल जाएं कि अस्थि सीधी हो जाएं, यह अति सावधानी से करना चाहिये कि अधिक पीड़ा न हो। तत्पश्चात् रूई की मोटी तह से अङ्ग को लपेटो या यदि यह न मिल सके तो कपड़े की गद्दी बना कर खपची लगाने के पूर्व लपेट दो। जब गद्दी लग चुके तब अवयव पर बांस की खपचियां रख दो और तब दृढ़ता पूर्वक बांध दो (देखो उदाहरण चित्र में) ऐसा करने के पश्चात् रोगी को घर या अस्पताल या औषधालय को ले जाओ॥

टूटी हड्डी के जुड़ जाने में तीन या अधिक सप्ताह लगते हैं सो उस समय तक खपच्चियों को बंधा रहने दो (देखो नीचे दी हुई सूचना जिस में अस्ति के चूर चूर हो जाने के विषय में शिक्षाएं दी गई हैं)॥

हड्डी का उखड़ना।

जब हड्डी का सिरा उखड़ जाता है तो जोड़ गति नहीं कर सक्ता है यह बहुधा हड्डी टूटने और हड्डी उखड़ने की पहिचान है॥

सूचनाः—एक मिश्रित टूटना या कम्पौंड फ़्रेकचर (a compound fracture) वह है जब हड्डी टूट कर उस के टुकड़े मांस में भिद जाते हैं इस कारण कि मैले और रोग-कृमि इन के द्वारा जो भीतरी नसों में होते हैं पहुंच जाने का भय है जहां तक बन पड़े एक चतुर डाक्टर को बुलाना चाहिये और टूटी हड्डी की खुले घाव के समान चिकित्सा करनी चाहिये। एक पोली नली लगानी चाहिये जिस से विष और रोग कृमि निकल जाएं जब तक शरीर इस न्यूनता को पूर्ण न करे। मिश्रित हड्डी के टूटने को अति सावधानी से चिकित्सा करो॥

अस्थि के उखड़ने की चिकित्सा का मुख्य उद्देश्य यह है कि हड्डी का छोर अपने मुख्य स्थान पर आ जाए। प्रायः ऐसी सब दशाओं में डाक्टर की सहायता इसे ठीक करने के लिये आवश्यक होती है, इस लिये जब अस्थि उखड़े तो रोगी को या तो डाक्टर के पास ले जाओ या डाक्टर को घर पर बुलाओ। चोट के पश्चात् जितनी शीघ्रता से डाक्टर को बुलाओगे उतना ही भला होगा कि वे अपने स्थान पर जम जायेंगी पर एक या दो दिन की देरी करने से डाक्टर को ठीक करने के लिये चीर फाड़ (ऑपरेशन) कदाचित करनी पड़े॥

जल जाना।

यदि ज़रा से जले हो तो जले भाग को ठण्डे पानी में डाल देना उत्तम उपाय है। २० मिनिट या और अधिक समय तक ठण्डे पानी में डुबोए रहने के पश्चात् जले भाग को कारबोलेटेड वेसलीन (Corbolated Vaseline) (२ बून्द कारबोलिक एसिड को एक छोटे चम्चे भर वेसलीन में डालो) या जितनी अण्डे की सफ़ेदी उतना ही उबला नारीयल का तेल मिश्रित कर लगाओ॥

यदि कष्टदायक और अधिक जला हो तो कपड़े काट कर अलग करो तब जहां जला हो वहां पर कपड़े के टुकड़े बोरिक ऐसिड या नमकीन पानी में गीले कर के रक्खो (लोशन बनाने की विधि इसी अध्याय में "त्वचा छिल जाने और कट जाने" के वर्णन में बताई है) प्रति दिन कई घण्टों तक इन गीले कपड़ों को जले हुए स्थानों पर रक्खो जब कपड़ों को हटाते हो तो महीन पीसा हुआ बोरिक एसिड जले भाग पर छिड़क दो। एक मरहम यूं बनाओः–एक चम्मच बोरिक एसिड और दो चम्मच वेसलिन को मिश्रित करो और कपड़े पर लगा कर जले भाग पर रख दो॥

उबलते जल से जल जाना।

जब त्वचा खौलते या उबलते जल से जल जाती है तो छाले पड़ जाते हैं इन छालों को जब तक वे अति बड़े न हों (रुपये के समान बड़े) न खोलना चाहिये एक अति उत्तम चिकित्सा छाले के लिये यह है कि एक छोटे चम्मच भर पिकरिक एसिड (Picric Acid) एक छोटी शीशी में डालो (जिस में ४ या ५ बड़े चम्मच पानी के समा जावें) इस औषधि का फाहा दिन में दो या तीन बार जले स्थान पर लगाओ और जले स्थान पर थोड़ा सा बोरिक एसिड छिड़क दो। स्वच्छ कपड़े की पट्टी बांधो॥

जब कील या फांस पांव या हाथ में लग जाय।

फांस या कील को निकाल कर एक फाहा एक लकड़ी की खपची के सिरे पर रुई लपेट कर बनाओ। इस फाहा को टिङ्क्चर आएओडीन में डुबोओ और उस छेद के भीतर डालो जो फांस या कील से बना है॥

जब कुत्ता या कोई दूसरा पशु काटे तो क्या करना उचित है।

यदि बांह या टांग पर काटा है तो काटे हुए के ज़रा ऊपर अंग में एक पुष्ट डोरी बान्धो, डोरी के नीचे लकड़ी डाल कर बल पूर्वक मोड़ो (देखो चित्र पृष्ठ २७६) ऐसा करने से घाव का विष शरीर पर नहीं चढ़ेगा। डोरी बांधने के पश्चात् वही चिकित्सा करो जो कील के गड़ जाने के वर्णन में ऊपर बताई है, आएओडीन लगा कर धीरे २ डोरी ढीली करो, एक दम से ढीली न करना। और जहां पर पशुओं के काटने की चिकित्सा की जाती है जैसे कसौली, वहां रोगी को भेजने का तुरन्त प्रबन्ध करो यदि किसी उन्मत्त पशु ने काटा हो तो तुरन्त भेज दो विलम्ब न करो॥

उन्मत्त पशुओं के या जिन जन्तुओं के विषय में सन्देह हो उन के काटने पर क्या करना चाहिये वह परिशिष्ट भाग में लिखा है। उन्मत्त जन्तुओं के काटने की चिकित्सा भारतवर्ष में चार स्थानों में होती है जिन्हें पास्टियर इन्सटीटयूट (Pasteur Institute) कहते हैं। बड़े २ नगरों के सरकारी अस्पतालों में पास्टियर चिकित्सा हो सक्ती है। अपने डाक्टर या अध्यक्ष से सम्मति लो और वह तुम्हें ठीक स्थान जाने का पूरा पता देगा। किसी २ दशा में यह भी उचित होगा कि जन्तु के सिर को काट कर रोगी के साथ परीक्षा हेतु भेज दिया जाय॥

सर्प का काटना।

सर्प के काटे की वही चिकित्सा करनी चाहिये जो कुत्ते के काटे में ऊपर बताई गई है। घाव से रक्त निकालना उत्तम बात है। डोरी कस के बांधने के पश्चात् एक चाकू की नोक को सर्प के दांतों के चिन्ह पर चुभा दो, तब छेदों के चारों ओर खूब दबाओ कि रक्त निकल जाय। जब घाव से कई मिनिट तक रक्त निकल चुके तब उन्हीं छेदों में टिङ्क्चर आएओडीन का फाहा भर दो या कुछ परमेंगनेट आव पोटाश के दाने एक चम्मच पानी में घोल कर टिङ्क्चर आएओडीन के स्थान पर उपयोग करो और यदि यह विदित हो कि सर्प जिस ने काटा था अति विषैला था तो सर्प के दांत जिस स्थान पर गड़े थे उन्हीं चिन्हों में परमेंगनेट आव पोटाश मांस में भर

दो। इस के लिये परमैंगनेट का लोशन यूं बनाओः—दो बड़े चम्मच भर पानी में ५ ग्रेन परमैंगनेट आव पोटाश को डालो॥

बिच्छू और खनखजूरे के डंक मारने की चिकित्सा।

जब बिच्छू या खनखजूरा डंक मारे तो डंक मारे हुए चिन्ह पर एक सूई को त्वचा में गहरा गड़ाओ, १० या १२ छेद त्वचा में करो। पानी से त्वचा को गीला कर कुछ दाने परमैंगनेट आव पोटाश के छिड़को और यूं कई मिनिट तक रहने दो॥

लू लगना।

जब कोई जन धूप में काम करते आकस्मिक अचेत हो भूमि पर गिर पड़े तो उसे शय्या पर ले जाना चाहिये और शीत जल सिर और छाती पर डालना चाहिये। जब रोगी पर शीत जल छोड़ा जाता है तो एक जन उस की छाती और बांह की त्वचा को शीघ्रता से मले। लू लग जाना एक असाध्य घटना है और एक डाक्टर को बुला कर रोगी की परीक्षा कराओ॥

विष खा लेना।

बहुत सी दशाओं में जब विष निगल लिया गया है तो केवल कारबोलिक एसिड के विष सरी के विषों को छोड़ शेष विषों में प्रथम कार्य्य क्रय या वमन कराना है। यह कई प्रकार से हो सक्ता है। एक विधि यह है कि उंगली या पर कण्ठ में दूर तक डालना और कण्ठ को गुदगुदी करना। गिलास भर गुनगुना पानी जिस में बड़े चम्चे भर राई घोली हो या ४ बड़े चम्चे नमक घुला हो पी लेने से वमन होगी यदि प्रथम उपाय से न हुई हो॥

कारबोलिक एसिड का विष॥

ऐसे जन की जान बचाने के लिये जिस ने कारबोलिक एसिड खाया है, उसे वमन न कराओ परन्तु चार या पांच कच्चे अण्डे शीघ्र निगलवा दो। तत्पश्चात् रोगी को एक बड़ा चम्मच एपसम साल्टस (Epsom Salts) या सोडियम सलफ़ेट (Sodium Sulphate) गिलास भर जल में पिलाओ॥

संखिया का विष या चूहों का विष।

जो उपाय उपरोक्त वमन करने के लिये बतलाये हैं उन्हीं को करो। तब रोगी को चार या पांच कच्चे अण्डे दो और एक बड़ी खुराक मेगनेशिया सलफ़ेट या सोडियम सलफ़ेट की दो॥

दांत पीड़ा।

जब दांत में छेद है और उस में दर्द हो तो उस में से भोजन निकाल कर स्वच्छ करना चाहिये, कुछ स्वच्छ रूई को क्रीयाज़ोट (Kreosote) या लौंग के तेल में गीला कर के छेद में भर दो। एक दांत कोरनी से रूई को छेद में अच्छी रीति से दबा दो क्रीयाज़ोट को निगल न जाओ इस में सावधानी करो। एक या दो बून्द कारबोलिक एसिड को ज़रा सी रूई में डाल कर दांत के छेद के भीतर डाल दो, तो पीड़ा बन्द हो जायगी। कभी २ दांत के छेद को पकाने के सोडा से भर देने से भी पीड़ा बन्द हो जाती है॥



शरीर के मध्य भाग को उठाओ।

डूबे हुओं की जान बचाना।

ज्यूंही शरीर जल में से निकाला जाय त्यूंही कीचड़ और पानी को मुंह और नाक से पोंछो। जो कपड़ा छाती पर है उसे फाड़ कर अलग करो, मुंह खोलो और एक टुकड़ा लकड़ी का दांत में लगा कर मुंह खुला रक्खो। रोगी को पेट पर पुट लिटा दो, अपने दोनों हाथ उस के पेट के नीचे रख कर उस के धड़ को ऊपर की ओर उठाओ कि उस के फेफड़ों में से जल निकल आय। जब उस के मुंह और नासिका से जल प्रवाह बन्द हो जाय तो शरीर को नीचे लिटा दो। कपड़े का एक गोला बना कर उस के पेट के नीचे रख दो। तब उस की पीठ पर अपने दोनों हाथ रख कर जैसा अगले उदाहरण चित्र में दिखाया गया है खूब ज़ोर से दबाओ तब अचानक छोड़ दो। एक मिनिट में १२ बार ऐसा करो (अर्थात् जितनी शीघ्रता से तुम स्वयं श्वास लेते हो वैसे ही करते रहो)। पीठ को दबाने से वायु

फेफड़ों में से बाहर निकल जाती है और जब दबाव हटा लिया जाता है तो वायु फिर फेफड़ों में प्रवेश करती है। यदि रोगी में जीव के कुछ भी चिन्ह हों, तो यह कार्य्य एक या अधिक घण्टे तक करना चाहिये। यदि और कोई जन निकट हो तो उस से डूबे हुए का शरीर शीघ्रता पूर्वक मलवाओ कि वह सूख जाय। गर्म जल की भरी हुई बोतलें मंगा कर उस के शरीर के निकट रक्खो। जल इतना ऊष्ण न हो कि उस से शरीर की त्वचा जल जाय, क्योंकि ऐसे जन की त्वचा जो प्रायः मृतक सरीखा हो गया हो सुगमता से जल जाती है ॥



अपने दोनों हाथ पीठ पर रख कर ज़ोर से दबाओ और फिर हाथ हटा लो।



अध्याय ४६।

भिन्न २ प्रकार के रोग।

मुंह आ जाना।

बच्चों के साधारण प्रकार के मुंह आने की चिकित्सा २६ वें अध्याय में वर्णन की गई है॥

बड़े लोगों का मुंह, दांत और जीभ स्वच्छ न रखने के कारण से आता है। होंठों के भीतरी ओर और गालों के भीतरी ओर छाले पड़ जाते हैं। ये छाले श्वेत धब्बों के समान दिखते हैं। ये अति कष्टदायक होते हैं॥

चिकित्सा।

५० वें अध्याय के नम्बर ६ और १० उपचारों द्वारा मुंह को स्वच्छ रक्खो। दांत कोरनी के एक ओर को निर्मल लाइसोल या कारबोलिक एसिड में डुबो कर घाव में लगाओ। तब मुंह की लार को थूक दो और विष का ज़रा सा भाग भी न निगलो॥

हिचकी।

श्वास रोकने से कभी २ हिचकी बन्द हो जाती है। दूसरा उपाय यह है कि जीभ को पकड़ के मुंह के बाहर खींचो और एक या दो मिनिट पकड़े रहो। एक और उपाय है कि अति गर्म जल गिलास भर पी लो॥

नाक से लहू बहना (नकसीर फूटना)।

कभी २ चौथी उंगली और अंगूठे के मध्य में केवल नासिका दबाने से रक्त बहना बन्द हो जाता है॥

दुसरी चिकित्सा यह है कि बर्फ़ का एक टुकड़ा नथनों के पास पकड़े रहना और बर्फ़ के दूसरे टुकड़े को मुंह में रखना। बर्फ़ के एक टुकड़े को गर्दन के पीछे लगाने से बहुधा नासिका से रक्त बहना बन्द हो जायगा॥

नाक में अति नमकीन जल डालने से भी रक्त बहना रुक जाता है॥

यदि ये समस्त उपाय व्यर्थ हों तो स्वच्छ रुई के छोटी उंगली के अन्तिम पोर के बराबर दो छोटे २ गुच्छे बनाओ। इन में से प्रत्येक में एक

पुष्ट डोरी जो ६ या ८ इंच लम्बी हो बांधो इन रुई के गुच्छों का प्रायः तीन तीन इंच तक नाक के भीतर डालो इन बत्तियों को नाक में डाल कर नथनों को बन्द कर दो अब इन को प्रायः ३० मिनिट या और अधिक समय तक रहने दो। फिर उस डोरी को जो नाक के बाहर लटकती है खींच कर बत्तियां निकाल लो॥

आंत का बढ़ आना॥

आंत जब पेट के भीतर से बाहर आती है तो उसे आंत का बढ़ आना कहते हैं। त्वचा के भीतर सूजन हो जाती है। आंत का बढ़ आना बहुधा जांघ के जोड़ के निकट होता है॥

आंत के बढ़ आने की चिकित्सा करना डाक्टर का काम है यदि सूजन दबाने से आंत भीतर नहीं हो जाती है तो रोगी को लेटा रहना चाहिये और एक डाक्टर को शीघ्र बुलाना चाहिये॥

आंत बढ़ आने की किसी २ दशा में एक ट्रस (Truss) नाम की पट्टी उपयोग की जाती है। यह एक पेटी है जो शरीर के सब ओर आती है और इस में एक कड़ी गोल गद्दी होती है जो उस स्थान पर जहां से आंत निकलती है दृढ़ता से जमा कर रक्खी जाती है। ट्रस को रोगी के नाप के अन्दाज़ का होना चाहिये। सब से उत्तम चिकित्सा चीर फाड़ की है। जब इसे चीर फाड़ के डाक्टर एक बार ठीक कर देता है तो फिर आंत बढ़ने से कष्ट नहीं होता है॥

मूत्राशय में पथरी पड़ जाना।

बार २ और पीड़ा से मूत्र निकलना। मूत्र में रक्त होना और कभी २ मूत्र के साथ सूक्ष्म पत्थर निकलना ये सब मूत्राशय में पथरी पड़ने के चिन्ह हैं॥

चिकित्सा

पलंग पर विश्राम करो और पानी में नीबू (lime) का अर्क़ या (lemon) काग़ज़ी नीबू का अर्क़ मिला कर बहुत सा पानी पियो। पोटासियम सिटरेट (Potassium Citrate) के १५ ग्रेन एक प्याला भर पानी में दिन में तीन बार पियो। गर्म जल का स्नान लाभ दायक है। युरोट्रोपीन (Urotropin) के १० ग्रेन दिन में तीन बार लेने चाहिये। यदि पीड़ा अधिक है तो अस्पताल जाओ और किसी चीर फाड़ के डाक्टर (surgeon) से पथरी निकलवा लो॥

पाण्डु रोग या पीलिया रोग।

नेत्रों की सफ़ेदी का पीला पड़ जाना और त्वचा का भी पीला होना यह पित्ताशय या कलेजे (Liver) का रोग है॥

यदि ज्वर हो तो रोगी को पलंग पर लेटना चाहिये। भोजन में केवल चांवल की लपसी और कच्चा अण्डा और दूध मिलाकर दो। पानी में नीबू का अर्क़ मिला कर पियो। प्रति दिन एपसम साल्टस पियो और दिन में दो बार २० मिनिट तक कलेजे (जिगर) पर सेंकन सेवन करो॥

जोड़ों में और पीठ में पीड़ा, गठिया।

इन सब पीड़ाओं में प्रत्येक में गर्मी पहुंचाना लाभ कारी चिकित्सा है, गर्मी पहुंचाने के लिये गर्म जल की रबड़ की बोतल या गर्म सेंकन सेवन करना चाहिये। विन्टर ग्रीन (Winter Green) का तेल जोड़ को त्वचा पर मलने से लाभ होता है। एक कपड़े को तेल में भिगो के पीड़ित स्थान पर रक्खो। इस तेल में भिगोए हुए कपड़े को मोम जामे के काग़ज़ से ढक कर पट्टी बांध दो। मदिरा पीना और मांसाहार त्याग दो। प्रति दिन पानी अधिक पियो॥

जोड़ों में गठिया के कारण पीड़ा होने के लिये १५ ग्रेन सोडियम सेलीसिलेट (Sodium Salicylate) और ३० ग्रेन सोडा बाइकारबोनेट (पकाने का सोडा) आधे गिलास पानी में प्रत्येक ३ घण्टे बाद पीना चाहिये।

मिर्गी (Epilepsy)

यह सम्भव है कि मिर्गी पीड़ा ऐसी असाध्य हो कि रोगी अचेत हो कर भूमि पर गिर पड़ता और मुंह से फेन निकलता हो। किसी २ दशा में यह रोग अति सरल होता है और रोगी खाते या बोलते २ आकस्मिक आधे मिनिट या अधिक के लिये अचेत हो जाता है। ये सरल ऐंठन बहुत कुछ अचेत होने के समान होती है। (देखो सूचना पृष्ट २१५)॥

चिकित्सा में यह देखना आवश्यक है कि टट्टी प्रति दिन होती है। या नहीं मदिरा पीना, तम्बाकू पीना वा मांसाहार त्याग देना चाहिये। युवा मनुष्य को जब तक डाक्टर न प्राप्त कर सको ६० ग्रेन प्रति दिन सोडियम ब्रोमाइड (Sodium Bromide) के दो। पानी में नीबू का अर्क़ (Lime Juice) और थोड़ी सी शक्कर मिला कर खूब पियो॥

अन्य वस्तुओं का निगल जाना।

कभी २ पिता माता अति भयभीत हो जाते हैं क्योंकि बालक पैसे, इकन्नी, दुअन्नी, पिन, बटन इत्यादि निगल जाते हैं। ये वस्तुएं बहुधा कुछ हानि न कर शरीर में से निकल जाती हैं। जुल्लाब न दो पर भारी भोजन जैसे रोटी, दलिया, शक्करकन्द या इस प्रकार की दूसरी गूदे वाली

साग तरकारी दो कि आंतों में ढेर हो कर इस अन्य निगले पदार्थ को अपने साथ आंतों के बाहार निकाल ले जायें॥

गिलटी (Tumours) या गुम्मड़ पड़ जाना।

कोमल गिलटी जो सिर, गर्दन और पीठ पर निकलती है भय-जनक नहीं है। पर गिलटी जो होंठ, जबड़े या छाती में होती है भय-जनक होती है। डाक्टर से तुरन्त सम्मति लेनी चाहिये। वह गिलटी एक नासूर या कोई असाध्य गहरा फोड़ा (Sarcoma) भी हो सकता है और ऐसी स्थिति में यही लाभ दायक है कि चीर फाड़ कर उसे निकाल फेंका जाए॥



अध्याय ४७।

रोगी की सेवा टहल कैसे करनी चाहिये—औषधि द्वारा शुद्ध करना (Disinfection)

इस पुस्तक के १८ वें और २० वें और दूसरे अध्यायों में यह बताया गया है कि रोगों के चंगा करने में अति मुख्य बात औषधि नहीं है परन्तु विश्राम, अच्छा भोजन और भली सेवा टहल और प्रत्येक सम्भव उपायों का रक की सहायता करने में उपयोग करना है ताकि रोग-कृमि और विष जो रोग-कृमि द्वारा उत्पन्न होते हैं, नाश हो जायें॥

विश्राम।

प्रत्येक असाध्य रोग की दशा में रोगी को पलंग पर दिन रात पड़ा रहना चाहिये। बहुतेरे रोगी जन इस कारण से अच्छे नहीं हो जाते हैं कि वे केवल उस समय तक लेटे रहते हैं जब तक कि उन्हें अच्छा नहीं लगता, ज्यूंही अच्छा लगने लगता है उठ कर चलने फिरने और अपना काम काज करने लगते हैं और साधारण भोजन खाने लगते हैं॥

जब एक जन रोगी होता है तो वह शीघ्र अच्छा हो जायगा यदि उस के पड़ोसी और नातेदार बार २ आ कर भेंट न करें। यथोचित प्रबन्ध वाले अस्पतालों में बहुत कम लोगों को रोगी को देखने की आज्ञा मिलती है। देखनेवाले लोग भलाई की अपेक्षा हानि पहुंचाते हैं। वे वार्तालाप कर के रोगी को थकित करते हैं। वे कभी २ भोजन और औषधि रोगी के लिये लाते हैं और वह भोजन और औषधि रोगी को अनुकूल नहीं होती हैं। दूसरे प्रकार से भी मिलने वाले लोग हानि पहुंचाते हैं वह यह है कि वे रोग फैलाते हैं, बहुत से रोग लगने वाले होते हैं (एक जन से दूसरे को लग जाते हैं) और वे लोग रोगी से हाथ मिलाने से या उस के पलंग पर बैठने से या रोगी के कमरे की वस्तुओं को छूने से अपने हाथों और कपड़ों में रोग-कृमि ले जाते है और फलतः अपने घरों में इन रोग-कृमि को आश्रय देते हैं और इस तरह वे दूसरों को रोग देते है। यह उत्तम है कि केवल दो वा तीन मनुष्य जो रोगी की देख भाल करते हैं रोगी के कमरे में जायें और

दूसरों को यदि उन के रोगी की सेवा टहल में सहायता नहीं मांगी गई है तो कमरे में जाने की आज्ञा नहीं देनी चाहिये ॥

रोगी को निर्मल, ताज़ी वायु की आवश्यकता है और दर्शक जिन को कमरे में आने की आज्ञा मिलती है सिगार और सिगरेट पी कर उस वायु को जो रोगी श्वास में लेता है बिगाड़ डालते है ॥

प्रत्येक रोगी को अधिक निद्रा की आवश्यकता है। किसी को बत्ती जला कर रोगी के कमरे में बैठने की आज्ञा न देनी चाहिये। ज्योति को जल्द बुझा देना चाहिये कि रोगी अंधेरे में सो सके ॥

भोजन।

उचित भोजन रोगी की चिकित्सा में एक अति विशेष बात है ॥

किसी २ रोग में रोगी साधारण भोजन खा सका है परन्तु बहुत से रोगो में और मुख्य कर आमाशय और आंतों के रोगों में विशेष भोजन बनाना पड़ता है। कोई भी रोग क्यूं न हो रोगी को अधिकता पूर्वक पानी पीने को दो। पानी को प्रथम उबाल कर ठण्डा करो। ताज़े पके फल, और फलों से रस निचोड़ कर पिलाना यह रोगी के लिये उत्तम भोजन है ॥ अण्डे, कोमल उबले हुए या पोच किये हुए या जेली बनाए हुए अच्छे हैं पर तल के या कड़ा उबाल के न देने चाहिये। अण्डों को तोड़ कर थोड़े से उबलते पानी में डाल दो यह "पोच करने" की रीति है, ज्यूंही अण्डे का स्वच्छ भाग सफ़ेद हो जाए तो अण्डे को उबलते पानी से निकाल लो। "अण्डों की जेली" यूं बनती है:—एक सेर पानी को एक छोटे बर्तन में उबालो ज्यूंही पानी उबल जाए उसे चूल्हे से उतार कर अलग रख दो और उस में दो अण्डे डाल दो। अण्डों को पानी में १० या १५ मिनिट तक रहने दो। यदि यथोचित प्रकार से किया जाए तो अण्डे का भीतरी भाग जेली के समान पतला रहता है, इस प्रकार के बनाए हुए अण्डे शीघ्र पच जाते हैं। "एग नॉग" (Egg-nog) या "अण्डे का नॉग या फ़ेंटन" भी अति शीघ्र पच सका है। इसे यूं बनाते हैं:—अण्डे की सफ़ेदी को ख़ूब फ़ेंट डालो कि कड़े श्वेत फेन हो जाएं तब ज़रदी डाल कर फ़ेंटो इस में थोड़ी शक्कर और अनन्नास के अर्क़ का एक या दो चम्मच अर्क़ मिलाओ तब आधे गिलास दूध या फल के अर्क़ में डाल कर मिला लो ॥

पेचिश, दस्त, संग्रहणी या अमाशय या आंतों के कोई भी तीक्ष्ण और असाध्य रोगों में केवल अण्डे का पानी ही भोजन में रोगी को दिया जाता

है। इसे ऐसे बनाते हैं:—एक गिलास पानी जो उबाल कर ठण्डा किया गया है लो और दो अण्डे की सफ़ेदी को मिला कर चलाओ, स्वाद के लिये ज़रा सा काग़ज़ी नीबू का अर्क़ या नीबू का सत मिला दो॥

कांजी (चांवल की लपसी) या भूने हुए आटे की लपसी भी रोगी के लिये उत्तम भोजन है चाहे बालक हो या युवा मनुष्य हो। दूध जो उबाला गया हो, भूने आलू, फल शक्कर डाल कर उबाल देना, अरारूट की लपसी, डबल रोटी को पतले टुकड़ों में काट कर अच्छी रीति से भूनना ये सब रोगी के भोजन के लिये अच्छे हैं॥

रोगी को मुख्य कर इन भोजन के पदार्थों को जैसे पियाज़, लहसुन, केक, पकवान या किसी भी प्रकार की मिठाई, कढ़ी, मिर्च, अदरक, अति नमकीन भोजन, रोगी को ये सब त्याग करना चाहिये॥

रोगी के लिये भोजन बनाते समय यह उद्देश्य होना चाहिये कि स्वच्छ भोजन जिस से भूख लगे और जो शीघ्र पच सकें बनाओ॥

रोगी का कमरा।

यदि रोगी को अति कठिन रोग है तो उस के लिये अकेली कोठरी होनी चाहिये। यह कोठरी भली भांति से प्रकाशित रखनी चाहिये। इस में दो वा अधिक खिड़कियां होनी चाहियें। कई रोगों में जैसे विसूचिका, डिपथीरिया, लाल ज्वर में रोगी को ऐसे घर में जिस में दूसरे लोग नहीं रहते हैं रखना चाहिये क्योंकि ये रोग छूत के रोग होने से अति शीघ्र दूसरों को लग जाते हैं और यदि घर में दूसरे जन रहते हैं तो उन को भी लग जाने की सम्भावना है॥

स्नान कराना

कई लोगों का विचार है कि जब मनुष्य रोगी है तो उसे स्नान न कराना चाहिये। यह बड़ी भूल है क्योंकि स्वस्थ मनुष्य की अपेक्षा रोगी को स्नान करने की अति अधिक आवश्यकता है। रोगी के किसी एक भाग को स्नान कराते ही उस भाग को खूब पोंछ कर सुखा लेने से रोगी को सर्दी लगने का भय नहीं रहता है। बहुत से रोगों में स्नान करना एक अति लाभदायक चिकित्सा है॥

ज्वर कैसे नापना चाहिये।

त्वचा को छूने ही से सदैव यह विदित नहीं हो सक्ता कि ज्वर है या नहीं। ज्वर है या नहीं इस के निश्चय करने के लिये ज्वर मापक यंत्र

(ज्वर का थरमामीटर Thermometer) उपयोग करना चाहिये। थरमामीटर पर चिन्ह और अंक ९० डिग्री से ११० डिग्री F. तक बने हुए होते हैं, एक बाण का चिन्ह ९८–१/२ डिग्री पर बना रहता है इतनी डिग्री गर्मी स्वस्थ मनुष्य में होनी चाहिये। यदि थरमामीटर का पारा १०० डिग्री चढ़ता है तो रोगी को ज्वर है पर १०४ डिग्री या १०५ डिग्री अति ऊंचा ज्वर चढ़ना है॥

थरमामीटर का उपयोग करने में उस के ऊपरी सिरे को दृढ़ता से पकड़ो और पारा वाला सिरा नीचे की ओर हो और उसे कई बर झटक डालो मानो एक चाबुक को चटकाते हो। ऐसा करने का अर्थ यह है कि पारा थरमामीटर के निचले सिरे में चला जाय। तब थरमामीटर का वह सिरा जिस में पारा है रोगी की जीभ के नीचे लगाओ रोगी से कहो कि होंठों को ज़ोर से बन्द कर नाक से श्वास ले पर दांतों को बन्द न करे थरमामीटर को ३ या ४ मिनिट जीभ के नीचे लगा रहने देना चाहिये॥

बग़ल को पोंछ कर सुखा लो और थरमामीटर को बग़ल में लगाओ बांह को खूब दबाकर छाती के निकट रक्खो॥

बालकों में कि वे थरमामीटर को तोड़ न डालें गुदा में २ इंच घुसेड़ दो या जांघ के बीच में दबा कर लगा दो॥

ज्वर मापक यंत्र को उपयोग करने के पूर्व और पीछे साबुन और ठण्डे पानी से धोना चाहिये (परन्तु गर्म जल से कभी न धोना) पानी और साबुन से धोने के पश्चात् उसे लाइसोल या कारबोलिक ऐसिड के लोशन से या सुरासार से धोओ। इस लोशन को यूं बनाओ:—इन में से किसी एक को छोटे चम्मच भर लो और गिलास भर जल में डाल दो॥

नाड़ी।

भिन्न २ आयु के अनुसार नाड़ी की गति निम्न लिखित होनी चाहिये:—

उत्पत्ति के समय	१३०–१५०	तक	एक	मिनिट	में
१ वर्ष से २ वर्ष तक... ...	११०–१२०	"	"	"	"
२ ,, ४ ,, ...	९०–११०	"	"	"	"
६ ,, १० ,, ...	९०–१००	"	"	"	"
१० ,, १४ ,, ...	८०– ९०	"	"	"	"
युवा मनुष्य	७२	"	"	"	"

नाड़ी गिनने के लिये तीन उंगलियों के पोरवों को अंगुठे की ओर से एक इंच नीचे के ऊपर और कलाई की ओर से एक आध इंच भीतर की ओर पर रक्खो॥

श्वास लेना।

भिन्न २ आयु में श्वास नीचे लिखे नियमानुसार लेनी चाहिये:—

उत्पत्ति के समय	...	...	एक	मिनिट	में	४०	बार
२ वर्ष में	...	...	...	,,	,,	२८	,,
४ ,,	...	...	...	,,	,,	२५	,,
१० ,,	...	...	...	,,	,,	२०	,,
युवा मनुष्य	...	...	...	,,	,,	१६-१८	,,

श्वास गिनने के लिये अपने एक हाथ में घड़ी लो दूसरा हाथ रोगी की छाती पर धरो प्रत्येक बार जब श्वास चलती है तो गिनो॥

औषधि द्वारा शुद्ध करना (Disinfecting)

विसूचिका और मोती झरा ज्वर के अध्यायों में मल को औषधि द्वारा शुद्ध करने की उचित विधि बताई गई है॥

शुद्ध करने की उत्तम विधि जलाना या उबालना है। कपड़ा और काग़ज़ों के टुकड़े जो रोगी से अशुद्ध हुए हैं जला डालने चाहियें॥

प्रायः समस्त वस्त्र और बिछौना बिना कुछ हानि के उबाल डाले जा सके हैं। यह कार्य्य सदैव दूसरों के वस्त्र और बिछौने को उपयोग करने के पूर्व करना चाहिये॥

मल मूत्र को तेल के टीनों में डाल कर ढकना लगा कर खौला लेना चाहिये तब फिंकवा देना चाहिये या मल मूत्र में कूड़ा और घास डाल कर जला देना चाहिये॥

सूर्य्य की ज्योति रोग-कृमि को, यदि वे सूर्य्य ज्योति में उचित समय तक रहें, नाश कर डालेगी। इस कारण रोगी की कोठरी पूर्ण प्रकाशित हो और रोगी के कपड़े और बिछौने को कभी २ तेज़ सूर्य की धूप में कई घण्टों तक डाल देना चाहिये कि धूप लगे॥

फ़ारमलडीहाईड (Formaldehyd) (फ़रमैल्लीन) (Formalin) ऐसे कमरों के लिये जो बिलकुल बन्द हो सके हैं उत्तम शुद्ध करने वाली

औषधि है। ऐसे वस्त्रों को शुद्ध करने के लिये जो न धोये और न उबाले जा सके हैं एक ऐसे सन्दूक में रखना चाहिये जो सम्पूर्ण बन्द हो सके। सन्दूक में वस्त्रों की एक तह लगा कर ऊपर एक छोटे चम्मच भर फ़ारमैलीन छिड़क देनी चाहिये तब एक और तह लगाकर उतनी ही छिड़कनी चाहिये। ऐसा करते जाओ तब सन्दूक को बन्द कर के २४ घण्टों तक पड़ा रहने दो॥

बाई-क्लोराइड आव मरक्यूरी या दाल चिकना, शुद्ध करने के लिये अति उपयोगी होता है। यह अति तीक्ष्ण विष होने के कारण प्रत्येक स्थान में सुगमता से नहीं बेचा जा सका है। निदानस्थान गोलियां या टिकियां बना कर बिकती हैं। इस की दो गोली यदि दो गिलास या एक सेर पानी में घोल दी जायें तो १००० अंश में १ अंश का लोशन या मिश्रण बन जायगा रोगी को छूने इत्यादि के पश्चात् इस औषधि से हाथों को धोना चाहिये। रोगी के उपयोग किये हुए तोलिये, कम्बल इत्यादि इसी औषधि में आधे घण्टे तक डुबोए रखने चाहियें, तत्पश्चात् धुलाने चाहिये॥

१०० अंश जल में दो से ५ अंश तक कारबोलिक एसिड मिला कर शुद्ध करने की औषधि बनाई जाती है और इस का भी अति उपयोग होता है॥

लाईसोल भी १०० भाग पानी में १ भाग अर्थात एक छोटा चम्मच एक गिलास पानी में डाल कर उत्तम शुद्ध करने की औषधि बन जाती है॥

सफ़ेदी का चूना भी एक उपयोग शुद्ध करने वाली वस्तु है। इस को घर में भूमि पर और निकटवर्ती स्थानों में फैला देते हैं। जब मल मूत्र गड्ढे में फेंके जाते हैं तो उन के ऊपर भी चूना डाल देना अच्छा है॥

नीला तूतिया (सलफ़ेट आव कॉपर) भी शुद्ध करने वाली औषधि में उपयोग हो सक्ता है, चार गिलास पानी में एक चम्मच भर नीला तूतिया घोल लेना चाहिये॥

जिस घर में कोई रोगी रह चुका हो उस को शुद्ध करने की उत्तम रीति यह है कि उस की धरती, भीतें और सामान को साबुन और पानी से ख़ूब मलें और रगड़ कर स्वच्छ करें यदि कारबोलिक एसिड या दाल चिकना मिल सके तो उपरोक्त वर्णन अनुसार एक मिश्रण बनाओ और भीत इत्यादि शुद्ध करने के लिये पानी और साबुन की अपेक्षा इन में से एक से शुद्ध करो॥

सूचना:—मिर्गी: यह कहा जाता है कि मिर्गी रोग बपौती (खानदानी) होता है। मदिरा, मतवालापन, सिर की चोट, नेत्रों पर बल पड़ना, आंत में रोग-कृमि होना, गर्भ इत्यादि ये ऐसे जन में जिस के चेतना यंत्र में बिगाड़ है इन कारणों द्वारा मिर्गी के दौरे (attacks) आ सके हैं॥

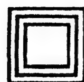
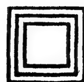
मिर्गी के दौरे के समय रोगी को चोट से रक्षित रखना चाहिये॥ और वस्त्र ढीले कर देने चाहिये। डाट या एक लकड़ी का टुकड़ा दांतों में लगा देना चाहिये कि जीभ न कटे और मिर्गी आने के कारण को सावधानी से ढूंढना चाहिये॥

भोजन अति विशेष बात है। नियत समय पर थोड़ा २ भोजन देना चाहिये। मांस, चाय और काफ़ी और पकवान नहीं देने चाहिये। बहुत ही थोड़ा नमकीन भोजन देना चाहिये। भोजन के लिये फल, दलिया, कांजी इत्यादि अच्छी रीति से सेंकी हुई रोटी का टूकड़ा, दूध और तरकारी देने चाहिये॥

संयमी भोजन द्वारा आंतें स्वच्छ रहनी चाहियें। सादा जुलाब या पिचकारी आवश्यकता अनुसार दो। सब प्रतिबिम्बित दुखदायक कारण (reflex irritation) जैसे नेत्रों का कष्ट, नाक का रोग, बढ़े हुए कहवे, वृषण की बढ़ी हुई खाल और आंतों के कृमि निकाल देने चाहिये॥

बार २ गर्म जल में स्नान करने से त्वचा को उत्तेजित रखना चाहिये।

रोगी को शान्त जीवन व्यतीत करना चाहिये। घर के बाहर खुले स्थान में अधिक समय तक रहना चाहिये और खूब शारीरिक व्यायाम करना चाहिये॥

अध्याय ४८।

मक्खियां मनुष्य-नाशक होती हैं।

मक्खी जो ऐसा छोटा जन्तु है मनुष्य को कैसे मार सकती है? इस प्रश्न का उत्तर नीचे के उदाहरण द्वारा दिया जा सकता है। एक दिन एक छोटा सा बालक अपने पिता के औषधालय में खेल रहा था और अकस्मात् उसे एक श्वेत चूर्ण की पुड़िया हाथ आ गई, उसे लेकर वह मार्ग की ओर निकल गया और इस पुड़िया को उस ने कुएं में डाल दिया। यह श्वेत चूर्ण दारुण विष था और निकटवर्ती लोगों में से बहुतों की जिन्हों ने उस कुएं का जल पान किया मृत्यु का कारण हुआ। इस छोटे बालक ने यह विष ले जा कर और जल में डाल कर इन सब मनुष्यों को मार डाला। इस उदाहरण से यह स्पष्ट सिद्ध है कि एक छोटा बालक भी इस प्रकार से बहुत से लोगों का नाश कर सक्ता है ऐसा कि उस के ऊपर कुछ सन्देह भी न हो। मक्खी विष ले आ कर लोगों का नाश करती है यदि मक्खी के द्वारा भारत वर्ष में प्रति वर्ष सहस्रों मनुष्य मर जाते हैं तथापि मक्खी के विषय में किसी को भी सन्देह नहीं होता है कि वह ख़ूनी है। बहुत से लोग मक्खी को एक अति निर्दोष जन्तु विचार करते हैं,। जो शरीर पर बैठ कर उस स्थान को गुदगुदाने से अधिक उपरोध नहीं पहुंचा सक्ता है॥

मक्खी का नाशक कार्य समझने के लिये यह आवश्यक है कि इस के जीवन-चरित्र और इस के अभ्यासों को भली भांति समझ लेवें॥

मादा मक्खी अण्डे देती है और इन अण्डों के कृमि बन जाते हैं ये कीड़े पीछे मक्खियां हो जाती है। मादा के अण्डे देने के दिन से १०-१२ दिन में अण्डों से नवीन पीढ़ी मक्खीयों की निकल आती है। एक मादा मक्खी कम से कम १२० अण्डे देती है और दो हफ़्तों में इन १२० अण्डों में से १२० मक्खियां निकल आवेंगी। इस से यह स्पष्ट है कि केवल एक ही मक्खी से कुछ महिनों में कई लाख मक्खियां उत्पन्न होती हैं॥

मक्खी के अण्डे देने का विशेष स्थान घोड़े की लीद है। मक्खियां मनुष्यों के मल और सड़े गले पदार्थों पर और सब प्रकार के कूड़े कचरे

पर अण्डा देती हैं। यह कह सक्के हैं कि जहां पर मैले का ढेर लगता है वहां पर मक्खियां वृद्धि करती हैं॥

मक्खी मैल में सेई जाती, मैला खाती और मैले स्थानों में रहना पसन्द करती है। मक्खी का शरीर और टांगें मैला ले आने के योग्य बनी हैं क्योंकि उसकी छः टांगों और शरीर में असंख्य बाल हैं और प्रत्येक पैर में गोल गद्दी है, इन गद्दियों में लसलसा चिपकने वाला पदार्थ है। यदि यह चेप वाला पदार्थ न होता तो मक्खी छतों पर उलटी चल न सक्ती जैसे चलती है। शरीर और टांगों में बाल होने के कारण और पैरों में चिपकने वाला पदार्थ होने के कारण मक्खी अपने शरीर और टांगों में जो वस्तु चिपक जाय साथ ले जा सक्ती है। यदि मक्खी मनुष्य के मल मूत्र पर बैठेगी तो उसे अपने शरीर और टांगों में ले आयगी और फिर जब फल तरकारी या और कोई भोजन के पदार्थ पर उतरेगी तो जिस पर बैठेगी उसी पर कुछ मल छोड़ जायगी। यदि यह मल दस्त, संग्रहणी और विसूचिका के रोगी का है तो इन रोगियों के रोग-कृमि मल में हैं और फल यह होता है कि जो कोई इन फलों या भोजनों को खायगा उसे भी दस्त, संग्रहणी या विसूचिका रोग होजाने का भय है॥

> रोगियों से मुख्य कर छूत के रोगियों से मक्खियां दूर रक्खो॥
>
> प्रत्येक मक्खी जो रोगी की कोठरी में चली आती है मार डालो॥
>
> अपने हाते (बाड़े) या उस के निकट कूड़े कचरे सड़े गले पदार्थ को जमा न होनेदो॥
>
> सब कूड़ा कचरा जो सड़ने वाला है जैसे जन्तुओं का नीचे का पुवाल, कागज़ का कचरा, भोजन का बचा कुचा भाग और साग तरकारी को जला देना चाहिये॥
>
> सब भोजन को जाली में रक्खो चाहे घर का हो या बाज़ार में बेचने के लिये हो॥
>
> सब कूड़े कचरे के टीनों को ढांक के रक्खो और सावधानी से स्वच्छ करके तेल या चूना उन में छिड़क दो॥
>
> लीद गोबर को जाली में रक्खो और उन पर चूना या मिट्टी का तेल छिड़को॥
>
> देखो कि तुम्हारे घर की नाली नहीं चूती है, मिट्टी का तेल नालियों में डालो॥
>
> सब द्वार और खिड़ाकियों में विशेष कर रसोई घर और भोजन के कमरे में जालियां लगाओ॥
>
> यदि मक्खियां देखते हो तो उन के अण्डे देने का स्थान निकट के कचरे के ढेर में होगा, या द्वार के पीछे या मेज़ के नीचे या पीक दान में अवश्य होगा॥

यदि तुम सावधानी से मक्खी को खाते समय देखो तो यह देखोगे कि कोई दृढ़ वस्तु खाने के पूर्व वह अपने आमाशय से कुछ रस निकाल कर उस वस्तु को पिघलाती है। मक्खी के आमाशय में सब प्रकार का मल रहता है और रस के साथ मैला भी निकल आता है। इस प्रकार से मक्खी नाना प्रकार के रोग फैला सक्ती है॥

मक्खी नेत्रों पर जो सूजे या आये हैं या रोगी के घाव से जो पीप निकलता है उस पर बैठती है, वह कुछ पीप को खाती और कुछ अपने शरीर, टांगों और पैरों में चिपटा लेती है, फिर उड़ जाती है और किसी बालक या मनुष्य की त्वचा पर बैठती है, यह आंखों के रोग और दूसरे त्वचा के रोगों को फैलाने की साधारण रीति है॥

इस बात का निर्णय हो चुका है कि मक्खियां नाना प्रकार के रोग जैसे मोती झिरा, ज्वर, विसूचिका, दस्त, संग्रहणी, डिप्थेरिया, खसरा, लाल ज्वर, शीतला, आंख आना, महामरी, फोड़े, फुन्सी, छाले और आंतों के कृमि फैलाती हैं॥

मक्खी द्वारा रोग से कैसे बच सके हैं॥

सब से उत्तम उपाय मक्खी द्वारा रोग से रक्षित रहने का यह है कि उन को वृद्धि करने से रोकें। उन को वृद्धि करने से रोकना सरल है उस की अपेक्षा कि जब उत्पन्न हो गईं तब उन्हें नाश करें। यह भी वर्णन हो चुका है कि मक्खियों के अण्डे देने का मुख्य स्थान घोड़ों की लीद और कूड़े कचरे का ढेर है। घोड़े की लीद को ढके सन्दूकों में रखना चाहिये कि मक्खियां उस पर न बैठें और लीद की खाद लेजा कर सप्ताह में दो बार खेतों में डालनी चाहिये। यदि केवल थोड़ी सी खाद हो तो उस पर मिट्टी का तेल या क्लोराइड आफ लाइम छिड़कना चाहिये। इस से मक्खियां उस पर अण्डे नहीं देती हैं॥

कूड़े कचरे को दृढ़ता पूर्वक बन्द होने वाले कूड़े कचरे के बक्स या टोकरी में रक्खो। किसी प्रकार का कूड़ा कचरा या सड़ा गला पदार्थ गलियों, कूचों और आंगनों में एकत्र न होने दो॥

प्रत्येक उत्तम प्रबंध वाले नगरों और गांवों में चाहिये कि ऐसे नियम बनाये जाएं जिन के कारण नगरवासी जो चेतनाएं और सूचनाएं ऊपर लिखी हैं उन के पालन करने के लिये विवश हों। यदि यह सम्भव हो तो रोग और मृत्यु घट जायेंगी॥

प्रत्येक घर में द्वारों और खिड़कियों पर चिक्कें और जाली लगाने से मक्खियां भीतर प्रवेश नहीं कर सक्ती हैं और बहुत सा रोग कम हो जायगा। यदि यह असम्भव हो कि घर के सब द्वारों और खिड़कियों पर चिक्कें टांगी जाएं तो रसोई घर और भोजन के कमरे के द्वारों और खिड़कियों पर अवश्य लटकानी या लगानी चाहियें॥



अपने सिरजनहार को जान।

ईश्वर संसार का सिरजनहार और सर्व प्रधान है। वह परमात्मा है परन्तु कोई २ लोग मृतकों को और भूत प्रेत को आत्मा कहते हैं। ईश्वर सच्ची आत्मा कहलाता है, वह स्वर्ग और पृथ्वी और उन में की समस्त वस्तुओं पर प्रभुता करता है और "परमेश्वर" और "राजा" कहलाता है कारण कि वह संसारी राजाओं और अध्यक्षों से अति ही महान् है इसलिये वह राजाओं का राजा और प्रभुओं का प्रभु कहलाता है। उस ने सकल जीते जीवों को सिरजा है और उन का पालन करता है इस कारण वह पिता कहलाता है। परन्तु सब मनुष्यों के सांसारिक पिता होते हैं तो उस की पहिचान निमित्त उसे "स्वर्गीय पिता" कहते हैं॥

केवल एक ही सत्य ईश्वर है। इस का प्रमाण इस बात में पाते हैं कि किसी भी देश में दो मुख्य अध्यक्ष नहीं होते हैं। यदि दो राजा सांसारिक राज में एक ही सिंहासन पर नहीं बैठ सक्ते हैं तो यह निश्चय है कि सृष्टि के सिंहासन पर केवल एक ही सर्वप्रधान हो सक्ता है॥

ईश्वर सदा से है वह स्वयं जीवित है और उस का न आदि है और न अन्त है॥

यदि कोई पूछे कि ईश्वर कहां निवास करता है तो उत्तर यह है की स्वर्ग उस का सिंहसान है परन्तु वह अपनी आत्मा द्वारा सर्व व्यापी है। यद्यपि उस का सिंहासन स्वर्ग पर है तथापि मनुष्यों को स्वर्ग की पूजा न करनी चाहिये क्योंकि स्वर्ग केवल उस के सिंहासन का स्थान है॥

ईश्वर अति सामर्थ्यवान है। मनुष्य को चौकी, पलंग, घर बनाने के लिये औज़ारों और पदार्थों की आवश्यकता है परन्तु जब ईश्वर ने सृष्टि रची तो उसे पहिले पदार्थों को एकत्र करने की आवश्यकता न पड़ी। उस ने केवल वचन उच्चारण किये और स्वर्ग पृथ्वी को बनने की आज्ञा दी और तुरन्त स्वर्ग और पृथ्वी बन गये। बलवान मनुष्य कठिनता से दो मन का बोझ उठा सक्ता है परन्तु ईश्वर अपनी महान शक्ति द्वारा इस पृथ्वी को जिस पर हम रहते हैं और आकाश में समस्त स्वर्गीय समूह को संभालता

और निरन्तर गति में रखता है॥ वह इस सृष्टि के आरम्भ से वर्त्तमान दिन तक सहस्त्रों वर्षों से दिन और रात करता आया है॥

ईश्वर का ज्ञान उन सब वस्तुओं में जो उस ने सिरजा है प्रगट होता है चान्द और सितारे अपने २ मण्डल में घूमते हैं नाना प्रकार के पौधे जिन की नाना प्रकार की पत्तियां होती हैं। सुन्दर फूल और रसीले फल और उन का मनुष्य के भोजन और वस्त्र के हेतु उचित उपयोग होना यह सब बताते हैं कि ईश्वर जिस ने इन को रचा सर्वज्ञानी है। इस पुस्तक के ३, ६, ७ अध्यायों में और दूसरे स्थानों में हमारे शरीर की अद्भुत रचना के विषय में और उस अद्भुत रीति के विषय में जिस से शरीर के भिन्न २ अवयव अपना कार्य्य करते हैं, वर्णन किया गया है इन सिद्धांतों से ईश्वर जिस ने हमें सिरजा है उस की बुद्धि का प्रमाण और अधिक मिलता है। ईश्वर ने नेत्र और कान बनाये यह अति अचम्भित बात होती यदि वह स्वयं देख और सुन नहीं सका। वह निस्सन्देह हमारे प्रत्येक कार्य्य को देखता और प्रत्येक शब्द को सुनता है और हमारे हृदय प्रत्येक विचार उसे कहते हैं॥

ईश्वर ने सब जीव धारियों को केवल जीवन ही नहीं दिया परन्तु वह उन के जीवन का, उन को वायु, भोजन और जल पान देकर पालन पोषण भी करता है। इस से हमको यह प्रमाण भी मिलता है कि ईश्वर अपने सिरजे हुए जीवों की चिन्ता भी करता है॥

ईश्वर के गुणों को हम अति स्पष्ट रूपसे तब पहिचान सके हैं जब हम उस के मनुष्य को सिरजने के उद्देश्य को और मनुष्य के आनन्द की सामग्री इकट्ठी करने को ध्यान पूर्वक पढ़ते हैं॥ मनुष्य को उत्पन्न करने के पूर्व ईश्वर ने भूमि को सिरजा और जैसा कि ईसाई लोगोंके धर्मशास्त्र में लिखा है उस ने पौधों, जन्तुओं और सकल वस्तुओं को जो मनुष्य के उपयोग और उस के आनन्द के लिये आवश्यक थीं उत्पन्न किया। उस ने मनुष्य को सिरजने का आशय स्वयं वर्णन किया है "मैं ने मनुष्य को अपनी महिमा के लिये सिरजा।" ईश्वर का मन्तव्य यह था कि मनुष्य अपने स्वर्गवासी पिता से प्रेम करे और उस की सेवा करे और अपने कार्य्यों द्वारा उस के गुण महिमा को प्रगट करे॥

उत्पत्ति में ईश्वर ने दो जनों को उत्पन्न किया: पुरुष और स्त्री को। उस ने उन को सिद्ध शरीर, तीक्ष्ण बुद्धि और पवित्र प्रकृति का दान दिया उन का घर एक सिद्ध स्थान में था जिस का नाम "अदन का बाग़" था, उस समय

संसार में दुष्टता, दुःख और रोग न था। उस का आशय यह था कि मनुष्य आनन्दित और शान्त जीवन व्यतीत करें न ऐसे जीवन जो रोग अथवा मृत्यु से ३०, ५० या ८० वर्ष में समाप्त हो जाएं परन्तु ऐसे जीवन जो असंख्य और अगणित वर्ष तक रहें–अर्थात् जो चिरजीवी हों॥

ईश्वर ने सातवें दिन को उत्पत्ति के स्मरण में नियत किया इस आशय से कि मनुष्य अपने सिरजनहार को भूल न जाय और सब मनुष्यों को ईश्वर ने आज्ञा दी कि सातवें दिन (अर्थात् शनिवार को) पवित्र "विश्राम दिवस" कर के मानें और इस बात से सचेत रहें कि ईश्वर ने मनुष्य को सिरजा। जो लोग आज के दिन सत्य ईश्वर की आराधना करते हैं उन को ईश्वर की इस आज्ञा का पालन करना चाहिये जिस में कहा है कि "विश्राम दिवस को पवित्र मानने के लिये स्मरण रखना। छः दिन तो परिश्रम करना और अपना सारा काम काज करना पर सातवां दिन मुक्त तुम्हारे परमेश्वर यहोवा के लिये विश्राम का दिन है उस में न तो तुम किसी भांति का काम काज करना न तुम्हारे बेटे न तुम्हारी बेटियां, न तुम्हारे दास, न तुम्हारी दासियां, न तुम्हारे पशु, न कोई परदेशी (अजनबी) भी जो तुम्हारे फाटकों में हो, क्योंकि छः दिन में मुक्त यहोवा ने आकाश और पृथ्वी और समुद्र और जो कुछ उन में है सब को बनाया और सातवें दिन विश्राम किया इसी कारण मुक्त यहोवा ने विश्राम दिन को आशीर्वाद दिया और उस को पवित्र ठहराया।" यह नियम कभी बदला या मिटाया नहीं गया और आज तक मनुष्यों को अपने सिरजनहार की ओर उन के बड़े भारी कर्तव्य कर्म्म को दिखाता है॥

सिरजनहार ने नियम बनाए जो सब का प्रबन्ध करते हैं, जैसे उदाहरण के लिये पृथ्वी की गति इस प्रबन्ध से है कि सब दिन २४ घण्टों के होते हैं और ऋतु अपने नियमानुसार आती हैं और स्वर्गीय पिण्ड अपने नियत समयों और मार्गों के अनुसार प्रगट और लोप होते हैं। हमारे शरीर के सम्पूर्ण अवयव नियम आधीन हैं। ईश्वर ने एक धर्म्माचारी नियम बनाया है जिस में सकल कर्तव्य कर्मों का, जिन का मनुष्य अपने सिरजनहार और साथी मनुष्यों का ऋणी है, समावेश है। क्लेशित दशाएं जो वर्त्तमान काल में संसार में देखी जाती हैं वे मनुष्य के धर्म्माचारी नियमों का उल्लंघन करने के फल हैं और वह दुष्ट आत्मा द्वारा इतना भटक गया था कि वह सच्चे ईश्वर को प्रेम करने और सेवा करने से भी विमुख हो गया और लकड़ी और पत्थर की मूर्तियों की सेवा और पूजा करने और वृक्षों, पहाड़ों, पक्षियों

और पशुओं के आगे सिर झुकाने लगा। जब मनुष्य मार्ग से भटक गया और अपनी भलाई के विपरीत जो कार्य्य हैं सो करने लगा, तो रोग, पीड़ा और मृत्यु उसे प्राप्त हुई॥

संसार के समस्त रोग पाप के फल हैं। यदि मनुष्य ईश्वर की आज्ञा को भङ्ग न करता तो आज कल कोई रोग भी न होता परन्तु इस पर भी यदि बहुत कुछ रोग सब स्थानों में पाया जाता है तिस पर भी वह मनुष्य जो ईश्वर की आज्ञाओं का जो शारीरिक और मानसिक वस्तुओं से सम्बंध रखती हैं पालन करने से बहुतेरे रोगों से जो मनुष्य जाति को पीड़ित करते हैं रक्षित रहेगा। यद्यपि मनुष्य ने पाप किया है तिस पर भी ईश्वर ने उन से जो उस की सेवा करते हैं कहा है "तुम नहीं जानते हो कि तुम ईश्वर के मन्दिर हो और ईश्वर की आत्मा तुम में बसती है।" हमें अपने शरीर की चिन्ता करनी चाहिये और उसे स्वच्छ और हृष्ट पुष्ट रखना चाहिये क्योंकि ईश्वर कहता है "यदि कोई मनुष्य ईश्वर के मन्दिर को (अर्थात् शरीर को) नाश करे तो ईश्वर उस को नाश करेगा क्योंकि ईश्वर का मन्दिर पवित्र है और वह मन्दिर तुम हो॥"

ईश्वर का मनुष्य से प्रेम करने का सब से मुख्य प्रमाण यह है कि उस ने अपना इकलौता पुत्र प्रभु यीसू क्राइस्ट मनुष्यों का मुक्तिदाता होने के हेतु भेजा। यीसू के द्वारा ईश्वर ने एक उपाय निकाला है कि सब जो कोई प्रभु यीसू पर विश्वास लावेंगे उन्हें पापों की क्षमा प्राप्त होगी और वे संसार में ईश्वर को प्रसन्न कर के सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करेंगे। ऐसा कहने से कि जो कोई प्रभु यीसू पर विश्वास लावे अनन्त जीवन पावेगा यह आशय नहीं है कि वह न मरेगा, परन्तु उस का यह अर्थ है कि यद्यपि वह मरेगा तथापि ईश्वर उसे फिर जीव प्रदान करेगा जिस से वह शान्ति और आनन्द में सर्वदा रहेगा॥

ईश्वर का पुत्र जब संसार में था तो भलाई करता फिरा। मुक्ति के मार्ग की शिक्षा उस ने लोगों को दी और उन की शारीरिक आवश्यकताओं को भी, उन के रोगियों और लूले लंगड़ों और अन्धों को चंगा कर, पूर्ण किया। सब से उत्तम बात यह की कि उस ने लोगों को एक ऐसे देश के विषय में बताया जहां दैहिक, दैविक, भौतिक पीड़ाएं प्रवेश नहीं कर सक्ती हैं, जहां न कोई अन्धा, बहिरा और लूला है, सब जो उस में प्रवेश करते हैं सिद्ध शरीर के हैं, एक देश जिस के निवासियों को मृत्यु नहीं है।

प्रभु यीसु ने प्रतिज्ञा की है कि वह इस पृथ्वी पर फिर लौटेगा। उस का आना निकट है क्योंकि वे लक्षण जो उस के आने का सन्देश देते हैं प्रायः पूर्ण हो चुके हैं। संसार में ऐसे लक्षण जैसे रोग और व्याधि की वृद्धि, बड़े भूकम्प और अकाल, जातियों में क्लेश, मुख्य कर संसार की बड़ी लड़ाई, ये सब लक्षण संसार के अन्त और प्रभु यीसु के दूसरी बार आने (पुनरागमन) की अति समीपता को प्रगट करते हैं॥

जब प्रभु यीसु पृथ्वी पर लौट आवेगा तो उनको जो उसपर विश्वास कर मर गये हैं फिर जीव प्रदान करेगा। इन को और उन जीवित लोगों को जो उस पर विश्वास करते हैं वह इस पापमय और पीड़ा क्लेश से पूरित संसार से ऐसे स्थान में जो उस ने धर्म्मात्माओं के लिये तैयार किया है ले जावेगा। उस के फिर आने पर वे सब जिन्हों ने उसे स्वीकार न किया और उस की दया को तुच्छ जाना नष्ट होंगे॥

इन सब बातों पर ध्यान देने से यह आशा है कि इस पुस्तक के पढ़ने वाले न केवल अपने शरीर के रोगों से चंगा होने का और अपने शरीर को हृष्ट पुष्ट रख सकने का उपाय पावेंगे, परन्तु मुक्ति के मार्ग का ज्ञान भी जो आत्मा के रोगों (पाप) को चंगा करता है पावेंगे और यूं उस स्वर्गीय स्थान में जहां पर पीड़ा और व्याधि और मृत्यु का नाम भी नहीं है, एक सुखद स्थान और अनन्त जीवन पावेंगे॥



नुसख़ों का सूचीपत्र, जिन के विषय में इस पुस्तक के पिछले अध्यायों में कहा जा चुका है

नं० १. बोरिक पेसिड सोल्यूशन (Boric Acid Solution) एक स्वच्छ बोतल जो जिस में ७ आउन्स (४ छटांक) या उस से अधिक जल आ आवे बोतल के भीतर एक बड़े चम्मच भर बोरिक एसिड क्रिस्टल्ज़ (Boric Acid Crystals) डालो फिर बोतल को उबाले हुए पानी से भर दो। दो चार घण्टे तक बोतल को रक्खा रहने दो तब भी बोरिक एसिड पूरा नहीं घुलेगा। जब बोरिक एसिड सोल्यूशन डालने लगो तो यह ध्यान रक्खो कि कोई क्रिस्टल्ज़ बाहर निकलने न पावें। जैसे जैसे सोल्यूशन निकालते जाओ वैसे वैसे और पानी बोतल में डालते जाओ जब तक कि सब क्रिस्टल्ज़ घुल न जावें॥

नं० २. टिंक्चर आव आयोडिन (Tincture of Iodine) तैयार किया हुआ किसी दुकान से ख़रीदा जा सक्ता है॥

नं० ३. आर्गिरॉल सोल्यूशन (Arygrol Solution) किसी दवा बेचने वाले की दुकान से लिया जा सक्ता है, प्रति सैंकड़ा १० गलाव (ten per cent solution) प्रयोग किया जाय॥

नं० ४. बोरिक एसिड पावडर (Boric Acid Powder) किसी दुकान से मोल लो॥

फयासा, या रूखे या गिरने वाले बालों के लिये।

नं० ५. दो ड्राम (लग भग ७ माशे) गन्धक, १ आउन्स (आधी छटांक) वेसलीन (Vaseline) में मिलाओ॥

गंजेपन के लिये।

नं० ६. २० ग्रेन रिसॉरसिन (Resorcin) और ५ ड्राम अलको हल (Alcohol) और पांच ड्राम पानी मिलाओ॥

दस्त रोकने के लिये।

नं० ७ मिलाओ
सबनाइट्रेट आव बिज़मथ (Subnitrate of Bismuth)	२ ड्राम (2 drams)
सेलोल (Salol)	१ ड्राम (1 dram)
चाक मिक्सचर (Chalk Mixture)	१-१/२ आउन्स (1½ ounce)

एक छोटे चम्मच भर हर ३ या ४ घण्टे के बाद दो

बच्चे के लिये।

मिलाओ
सब नाइट्रेट आव बिज़मथ	३६ ग्रेन्स (grains)
सेलोल (Salol)	१२ ,, ,,
चाक मिक्सचर	४ ड्रामस (drams)

एक छोटा चम्मच भर हर ३ या ४ घण्टे के बाद दो

नं० ८. बर्नूट ऐलम (Burnt Alum) इस प्रकार बनता है एक छोटा सा टुकड़ा "ऐलम या फिटकरी" का एक चम्मच में रक्खो और उसको आग के ऊपर रक्खो जब तक कि फिटकरी जल कर सफ़ेद और सूखी न हो जाय॥

कुल्ली और ग़रारा करने के लिये।

नं० ९. मिलाओ
कारबोलिक एसिड (Carbolic Acid)	१ ड्राम
ग्लिसरीन (Glycerine)	१ आउन्स
सैच्यूरेटेड बोरिक एसिड सोल्यूशन (Saturated Boric Acid Solution)	१० आउन्स

एक और नुसखा जो अच्छा है इस प्रकार बनता है:—

मिलाओ
बोरिक एसिड (Boric Acid)	१ ड्राम
पोटेसियम क्लोरेट (Potassium Chlorate)	२-१/२ ड्रामस
पेप्परमिन्ट का पानी (Peppermint Water)	१२ आउन्स

एक और अच्छा कुल्ली और ग़रारे का नुसखा यह है:—

एक छोटे चम्मच भर नमक और एक छोटे चम्मच भर पकाने का सोडा (Baking Soda) आध सेर पानी में मिलाओ॥

नं० १० मिलाओ	कारबोलिक एसिड (Carbolic Acid)	१-१/२ ड्राम
	आलकोहल (Alcohol)	२ आउन्स
	पानी	५ ,,

यह भी बहुत अच्छा कुल्ली और ग़रारे का नुसख़ा है॥

छोटी २ फुंसियों के लिये मरहम बनाने की तरकीब।

नं० ११ मिलाओ	वेसेलिन (Vaselin)	१ आउन्स
	कारबोलिक एसिड (Carbolic Acid)	१० ग्रेंस

कलेजे पर जलन या खट्टी खट्टी डकारें आना॥

नं० १२. सोडा बाईकारबोनेट (पकाने का सोडा) (Soda Bicarbonate) खाना चाहिये, थोड़ा २ करके, एक बार में आधा २ तोला॥

बवासीर का मरहम।

नं० १३ मिलाओ	लेड एसिटेट (Lead Acetate)	२ भाग
	टैनिक एसिड (Tannic Acid)	१ भाग
	बेलाडोना आएन्टमेन्ट (Belladonna Ointment)	१५ भाग

दांत का मंजन।

नं० १४ मिलाओ	पिसी हुई खरिया (Powdered Chalk)	१।२ पाउन्ड (पाव भर)
	पिसा हुआ कैसटील सोप (Castile Soap)	११ आउन्स
	शक्कर	१ आउन्स
	पिसी हुई आरिस रूट (Orris root)	१ आउन्स

नं० १५. हुकवर्म (Hook-worms) के नुसख़ों के लिये देखो पृष्ठ २१०।

सूंघने के लिये।

नं० १६ बराबर २ भागों में मिलाओ	मेन्थाल (Menthol)
	कैम्फ़र (Camphor)
	यूकेलिपटिस आयल (Eucalyptus Oil)
	ओलिअम पिनी सिल्वरट्रिस (Oleum Pini Silvertris)

नं० १७. इस दवा के सेवन करने की यह रीति है:—एक छोटा सा बांस का टुकड़ा या और किसी लकड़ी का टुकड़ा जो जो भीतर से खोखला हो। चार इंच लम्बा हो और उंगली के बराबर मोटा हो।

एक सिरा उस का एक कार्क (cork) से जिस में एक छोटा सा छिद्र हो बंद कर दो फिर एक कपड़े का टुकड़ा या रूई दवा में भिगोकर उस के अंदर रख दो फिर उस बांस का खुला हुआ सिरा अपने एक नथने में लगाओ और भीतर को सांस खींचो इस प्रकार प्रत्येक दिन बल को कई बार सूंघो। जिस समय दवा न सूंघो बांस का मुंह एक छोटे कार्क (cork) से बंद कर दो ताकि दवा उड़ न जाए॥

सूखी खांसी के लिये।

नं० १८. मिलाओ	कोडीन सल्फ़ेट (Codein Sulphate)	३ ग्रेन
	अमोनियम क्लोराइड (Ammonium Chloride)	१५ ग्रेन
	सिरप आव साइट्रिक एसिड (Syrup of Citric Acid)	१ औंस
	पानी	१–१।२ औंस

जवान आदमी एक छोटे चम्मच भर पानी में मिलाकर हर तीन २ या चार २ घण्टे के बाद पिये, जब तक कि फ़ायदा न मालूम होने लगे। बच्चे को चाय के छोटे चम्मच का तिहाई देना चाहिये॥

नं० १९. मिलाओ	सल्फ़ेट आव आयरन (Sulphate of Iron)	४ ग्रेन
	ओवेरीन (Ovarin)	३ ग्रेन

इस को एक कैपसूल (Capsule) में रखकर दिन भर में तीन बार खाओ, देखो पृष्ठ २५३॥

क्लोरोसिस की (Chlorosis) बीमारी के लिये।

नं० २०. ब्लाड्ज़ पिल्स (Blaud's Pills) प्रत्येक गोली में ५ ग्रेन सल्फ़ेट आव आयरन (Sulphate of Iron) होता है॥

नं० २१ नीला मरहम (Blue Ointment) किसी दुकान से खरीदा जा सक्ता है॥

नं० २२ पहिले पहिले बहुत ही गाढ़ा सोल्यूशन पोटेसियम परमेंगनेट Potassium Permangnate) का बनाओ। यानी आधा तोला भर लेकर पाव भर पानी में डाल दो। इस को बार २ हिलाओ और काम में लाने के पहिले इस को कई घण्टे तक रक्खा रहने दो। इस गाढ़े सोल्यूशन को काम में नहीं लाना चाहिये। इस के छोटे दो चम्मच लेकर आधे सेर पानी में

मिलाना चाहिये और तब घावों को धोने के लिये अथवा वैजाइनल डूश (Vaginal douche) या योनि की पिचकारी में प्रयोग करना चाहिये॥

नं० २३. ज़िंक मरहम (Zinc Ointment) किसी दवा बेचने वाले की दुकान से मोल लिया जा सक्ता है॥

नं० २४. भुने आटे की लपसी इस प्रकार बनानी चाहियेः एक स्वच्छ कढ़ाई में गेहूं का आटा रक्खो और आग पर चढ़ा कर बराबर चलाते जाओ जब तक कि वह भुन कर भूरा न हो जाय। इसी आटे से लपसी बनाओ। थोड़ा सा नमक मिलाओ॥

नं० २५. चांवल का मांड बनाने की रीति। दो बड़े २ चम्मच भर चांवल आध सेर पानी में डाल कर आग पर चढ़ा दो और तीन वा चार घण्टे उबलने दो थोड़ी २ देर के बाद थोड़ा २ और पानी डालते जाओ ताकि जब उतारो तब लगभग उतना ही पानी रहे॥

नं० २५. चूने का पानी (Lime water) इसकी तरकीब यह है कि वे बुझाए हुए चूने का एक टुकड़ा अंडे के बराबर लो। और उसको आध सेर पानी में रख दो। थोड़ी देर में दूध की तरह का शरबत बन जायगा। और चूना नीचे बैठ जायगा। जब पानी साफ़ ऊपर निथर आए तब उस को सावधानी से चूने पर से निकाल दो। फिर उसी चूने में आध सेर पानी और मिला दो और अच्छी तरह से हिला कर रख दो जब चूना फिर नीचे बैठ जाय तो पानी फिर डाल दो। अब चूना धुलकर साफ़ हो गया और उसका सारा मैल बह गया। अब इस चूने को ले कर उस के चार भाग कर डालो। और एक २ भाग आध सेर वाली बोतल में रक्खो। और बोतलों में उबाला हुआ पानी भर दो। और काग मज़बूती से लगा दो। इन बोतलों के अन्दर का स्वच्छ जल चूने का पानी है॥

नं० २७. अण्डे का पानी। देखो पृष्ठ २६०, अंतिम पङ्क्ति॥

नं० २८. स्टार्च एनीमा, श्वेत सार की पिचकारी। देखो पृष्ठ १५६॥

नं० २९. एग नॉग (Egg-nog) देखो पृष्ठ २६०॥

नं० ३०. जेलीड एग्ज़ (Jellied-eggs)। देखो पृष्ठ २६०॥

नं० ३१. भापके सूंघने की विधि। कोई बर्तन लो जिस में पानी उबल सके और आग पर रक्खो। फ़नेल की तरह का एक नल बनाओ जो बर्तन के मुंह से तुम तक लम्बा हो। या एक मामूली तौलिया या काग़ज़

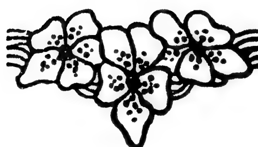
से बन सक्ता है। उसका एक सिरा उस बर्तन पर रक्खो जिस में पानी उबल रहा है और दूसरा अपने मुंह में लगाओ। और मुंह से भीतर को भाप खींचो। यूकेलिप्टस का तेल पानी में मिला देना चाहिये। देखो पृष्ठ १६० ॥

नं० ३२. मेडीकेटेड (Medicated) एनीमाज़। अर्थात् "औषधि वाली पिचकारियां" देखो पृष्ठ १७८, पङ्क्ति नं० २४ से ३० तक ॥

नं० ३३. टैनिक एसिड (Tannic Acid) एनीमा, हैज़े के लिये। देखो पृष्ठ १९१ पङ्क्ति नं० ६ ॥

नं० ३४. दाद (Ring-worms) का मरहम। देखो पृष्ठ २६० ॥

नं० ३५. थ्रेडवर्म्स (Thread-worms) महीन धागे की नाईं कृमि का मरहम। देखो पृष्ठ २११ ॥



परिशिष्ट भाग।

मेटाबोलिज़म के रोग

एच. सी. मेनकेल, एम. डी.

मेटाबोलिज़म के रोगों में नाना प्रकार के पालन पोषण की व्याधियाँ जिन में भोजन के तत्व (या आटे का सत्व चिकनाहट, शक्कर, दाल इत्यादि और नमक) पूर्ण रूप पर शरीर में उपयोग नहीं होते, सम्मिलित हैं। इस का परिणाम भोजन का यथोचित उपयोग न होना होता है और उस का प्रत्यक्ष कारण पूर्ण भोजन न मिलना या उचित पाचन न होना है और उस का पृथक लक्षण उस बिगाड़ के अनुसार होता है जो पाचन क्रिया में हो इस में इस प्रकार के रोग सम्मिलत हैं जैसे मूत्र कृच्छ्र, गठिया, बाई, मोटापा, और चेतना यन्त्र की निर्बलता इत्यादि ॥

गठिया और शरीर से खानिज पदार्थों की न्यूनता।

शरीर के पालन पोषण का ज्ञान वर्त्तमान काल में बढ़ जाने के द्वारा गठिया और अन्य इसी प्रकार के रोगों के कारण बहुत अच्छे प्रकार से समझ में आ गये हैं ॥

मनुष्य के अवयव यंत्र में दो प्रकार के कार्य्य होते रहते हैं, प्रथम घड़नेहार दूसरा नाश करनेवाला। "मनुष्य के उत्पन्न होते ही उस की मृत्यु आरम्भ हो जाती है" इस का अर्थ यह है कि अवयव अपने २ मुख्य कार्य्यों में प्रवृत्त होते ही उन के तत्वों में टूट फूट और नाशक विधि आरम्भ हो जाती है। इस क्रिया का अन्तिम फल इस प्रकार की खट्टी राख उत्पन्न करना है जिस से जीवित तत्वों में नाशक विधि आरम्भ हो जाती है ॥

खट्टास से छिद्र वाले अवयवों की मृत्यु होती है शरीर के तत्व केवल खार में अपना कर्तव्य कर्म कर सक्ते हैं इस कारण से पालन पोषण का घड़नेहार कार्य्य खारे पदार्थों के मध्य अपना कार्य्य करता है और इस का फल यह होता है कि एक तीखा खार संचय रक्त और आवयविक छिद्र रचना में एकत्र हो जाता है ॥

प्रकृति ने शारीरिक आवश्यकताओं के निमित्त उत्तम प्रबंध कर रक्खा है कि वनस्पति से जो भोजन मनुष्य को प्राप्त होता है उस में से १६ खारी खानिज पदार्थ प्राप्त होते हैं ये आवश्यकि खानिज नमक जो तरकारी और फलों में पाए जाते हैं गाढ़े और कोलाईड के रूप में होते हैं इस कारण हमारी खारी आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिये अति ही अनुकूल हैं॥

स्वास्थ्य की दशा में खट्टास और खार समान रहते हैं और सब ठीक रहता है और मनुष्य शान्त, उत्तेजित और चुस्त रहता है॥

यदि उन १६ खानिज नमकों में से किसी एक की न्यूनता के कारण से तत्वों का खारापन ज़रा भी घट जाय तो रोगी दशा उत्पन्न हो जाती है जिस को डाक्टर लोग पेसिडोसिस अर्थात् खटाई की अधिकता कहते हैं इस का अर्थ यह है कि खारे संचय में कमी हो गई और उस के लक्षण उन खानिज नमकों के अनुसार होते हैं जिन के कारण से कमी हुई हो॥

ये खानिज खाद्य नमक जैसे पोटासियम, सोडा, चूना, मेगनेशिया, सिलीका, फ़ासफ़ोरस, क्लोरीन, लोहे का सत और गन्धक एक नियत परिमाण में सजीव पदार्थों से मिल कर आवश्यकि तत्व के सम्बन्ध द्वारा जीवित शरीर के नाना प्रकार के छिद्र बनाते हैं॥

हमारी रोगों पर प्रबल होने की शक्ति या उन से पराजित हो जाना हमारे शरीर के प्रत्येक छिद्र के पालन पोषण की समानता पर अवलम्बित है। ये दशाएं भिन्न २ प्रकार के रोगों में होती हैं जैसे गठिया, बाई, चेतनिक सूजन इत्यादि। शरीर में इन १६ खारी नमकों और तीनों रसों के रहने न रहने से इस समानता पर प्रभाव पड़ता है और ये सब हमारी आवश्यकताओं के निमित वनस्पतियों में उत्पन्न किये जाते हैं॥

हम यह जानते हैं कि संसार के बहुतेरे रोग जिन को बड़े २ डाक्टर ने बड़े २ नाम दिये हैं वे सब खानिज पदार्थ की न्यूनता के कारण से होते हैं। शरीर का खानिज पदार्थों का संचय घट जाने के कारण देह का आवश्यक कर्तव्य कर्म असम्भव हो जाता है॥

तन्तुओं के खानिज पदार्थ की न्यूनता के कारण सुगमता से दिख आते हैं। पहिला कारण यह है कि खार पहुंचानेवाले भोज्य पदार्थ जैसे तरकारी, फल, दाल इत्यादि नहीं मिलते हैं। ऐसी दशा में साग तरकारी और ताज़े फल अधिक उपयोग करने चाहियें। तरकारी को ऐसा बनाना चाहिये कि जिस पानी में यह पकाई गई हो वह फेंका न जाय और कुछ ताज़ी कच्ची वस्तुएं जैसे सलाद (Salad) प्रति दिन खानी चाहियें। बीज वाला

अन्न जैसे गेहूं, चांवल ऐसे पकाने चाहिये कि उन का खानिज पदार्थ जाता न रहे अति सूक्ष्म मेदा और घिस कर स्वच्छ किये हुए चांवल में ये खानिज पदार्थ नहीं रहते हैं, इन वस्तुओं में के खानिज पदार्थ मर जाते हैं और इस कारण से यह व्यर्थ भोजन होते हैं ॥

अधिक रोटी खाने से खट्टास बढ़ जाती है इस कारण वे जिन को गठिया रोग है इस का अधिक उपयोग न करें। मांसाहार से अधिक खटाई पैदा होती है और "क्षार नाशक" है और वे शरीर के इस आवश्यक संचय को समाप्त कर डालते हैं जब कि शरीर मांस के खट्टे रस को मारने का यत्न करता है। हम ने अनुभव से सीखा है कि बाई के रोगियों को मांसाहार कम करना उचित है, अब हम को यह भी विदित हो गया कि यह किस कारण से है ॥

कोष्ठ बद्ध और खट्टे रस के भेदने और सोखने से भी खानिज पदार्थ मर जाते हैं इस को ठीक कर लेना चाहिये ॥

उपरोक्त वर्णन से यह प्रत्यक्ष प्रगट होता है कि बाई के आवश्यक कारण या तो खारी खानिज पदार्थों का अधिक नाश होना होता है या उन का संचय न करना। इस लिये:

जितने भोजन खट्टा रस उत्पन्न करने वाले हैं वे न खाने चाहियें ॥

जो २ भोजन खार रस वाले हैं उन को अधिक खाओ ॥

कोष्ठ बद्ध (Constipation) न होने दो ॥

अत्यन्त मल शरीर से निकालने के लिये अधिक जल पान करो ॥

प्राण वायु अधिक प्राप्त करने के लिये सदा ताज़ी वायु में रहा करो ॥

उपरोक्त वर्णन किये हुए खट्टास वाले भोजन के उपायों को छोड़ कभी २ यह भी आवश्यक होता है कि कुछ काल तक कई खानिज नमक मिश्रण कर के खावें ताकि तत्वों का खानिज संचय पूर्ण हो कर बना रहे ॥

खानिज अनुकूल और पृथक २ करने की क्रिया मुख्य कर ग़दूद रचना के समूह के आधीन है जो शरीर में भिन्न २ स्थानों पर हैं इन में तिल्ली, गले और कदाचित् पुरुष स्त्री के उत्पत्ति स्थान की गिलटियां हैं क्योंकि इन का भी मनुष्य के सम्पूर्ण स्वास्थ्य से सम्बन्ध है। जब ये ग़दूद अपने कर्तव्य कार्य्य में ढीले पड़ जाते हैं तो इस से भी खानिज पदार्थों की कमी हो जाती है। जब कभी ये ग़दूद निर्बल हों और उन पर अधिक श्रम पड़े तो इस का वही प्रभाव होता है जो खानिज पदार्थों के न मिलने द्वारा होता है।

क्योंकि ऐसी दशा में ये पदार्थ शरीर में पूर्ण उपयोग आए बिना निकल जाते हैं। इस प्रकार से खानिज या क्षार घट जाता है ॥

ऐसी दशाओं में आवश्यक है कि जिन २ ग़दूदों की कमी है उन्हीं के सत जो पशुवत ग़दूदी रचनाओं से रचे गये हों इन की गोलियां कई महीनों तक प्रति दिन खानी चाहियें। इस विषय के लेखक ने ऐसी चिकित्सा से बड़ा लाभ होते देखा है ॥

इस लिये कि इन ग़दूदी खानिज कार्य्य वालों पर सूर्य्य की तिक्ष्ण ज्योति (Ultra violet rays) का अधिक प्रभाव पड़ता है इस कारण यह भला होगा कि शरीर पर या तो सम्पूर्ण अथवा थोड़ी २ धूप पड़े। आरम्भ में केवल कुछ मिनिट तक यूं करो और फिर धीरे २ समय बढ़ा सके हो। गोरे रंगवाले लोगों को सिर और रीढ़ पर धूप न लगने देना चाहिये ॥

पीड़ित भागों को प्रति दिन गर्म सेंकन सेवन करना और प्रति दिन गर्म जल से स्नान करना घर के लिये उत्तम चिकित्सा है। जो लोग व्यय करने योग्य हैं उन्हें सैनिटेरियम में जहां पर ऐसी चिकित्सा का प्रबन्ध हो जा के चिकित्सा करानी चाहिये। कई प्रकार की तेजस्विनी शक्ति और कई प्रकार की बिजली की तरंगो से विशेष लाभ होता है ॥

मूत्रकृच्छ्र या अडीठ (Diabetes)

मूत्रकृच्छ्र रोग पालन पोषण के बिगाड़ द्वारा होता है और इस से शरीर में कारबोहाइड्रेटस अर्थात आटे के सत्व वाले पदार्थों को, जैसे शक्कर, श्वेत सार पदार्थों को, जिन का प्रवेश प्रति दिन होता है उपयोग नहीं कर सके हैं। इस कारण से रक्त और तत्वों में अपच शक्कर भर जाती है ॥

अप्राकृत और व्यर्थ अनुपयोगी शक्कर से रक्त और तत्वों में का क्षार विकारी और शितल पड़ जाता है इस से खट्टा रस बढ़ जाता है और मूत्रकृच्छ्र की दारुण और असाध्य स्थिति हो जाती है। प्रकृति यत्न करती है कि इन अप्राकृत वस्तुओं को दूर करे सो गुर्दों द्वारा मूत्र में शक्कर निकलने लगती है। यह शक्कर जो मूत्र में निकलती है मूत्रकृच्छ्र रोग का अति साधारण और मुख्य लक्षण है ॥

वर्त्तमान काल में यह रसायनिक संयोग द्वारा विदित हुआ है कि शरीर के तत्व में एक ऐसा रसायनिक संयोग होता है जिस से शक्कर

और श्वेतसार से शरीर में गर्मी उत्पन्न होती है; स्नायुओं को शक्ति मिलती है और चेतना शक्ति उत्तेजित होती है॥

इस रसायनिक संयोग से पची हुई शक्कर का जो रस बनता है वह रक्त में उस लम्बे गिल्टी की नाईं अवयव द्वारा, जो आमाशय के पीछे होता है जिसे पानक्रिअस (pancreas) कहते हैं, पहुंचाया जाता है॥

मूत्रकृच्छ्र रोग एक प्रकार का बड़ा और असाध्य अजीर्ण रोग समझा जाता है जो पानक्रिअस (pancreas) के काम न करने और रसायनिक संयोग का रस शरीर में न पहुंचने से होता है॥

सन १९२२ ई० में डाक्टर बानटिंग और डाक्टर बेस्ट जो टरॉंटो विश्वविद्यालय के थे उन्होंने पानक्रिअस में से इस रसायनिक शक्कर के पाचन रस को पृथक करने में सफलता प्राप्त की और उन्होंने इसे "इनसुलिन" नाम दिया। उन्होंने यह भी कहा कि इस "इनसुलिन" पदार्थ को हाइपोडर्मिक सूई द्वारा एक मूत्रकृच्छ्र के रोगी के रक्त प्रवाह में डाल सक्ते हैं और इसका यह फल होगा कि रक्त और मूत्र दोनों शक्कर रहित हो जावेंगे। ऐसा करने के लिये कि रोगी शक्कर और उस से होनी वाली हानि से बचे उसे दिन में तीन बार इस प्रकार के टीके देने की आवश्यकता है। जब तक यह टीका लगातार लगता रहता है तो उसका प्रभाव बना रहता है पर जब टीका लगाना बन्द हो जाता है तो शक्कर की अधिकाई फिर प्रगट हो जाती है। मूत्रकृच्छ्र रोग की चिकित्सा में यह उन्नति हुई है कि यह सुखाया हुआ पानक्रिअस का तैयार किया हुआ पदार्थ (Desiccated pancreatic preparations) अब अति लाभदायक चिकित्सा है॥

इस कारण कि मूत्रकृच्छ्र रोग पालन पोषण के विकार द्वारा होता है तो स्वस्थ दशा में होने के लिये भोजन में संयम करना अति मुख्य बात है। सो ऐसे रोगी के लिये पथ्य भोजन का ढांचा बनाते समय यह स्मरण रखना आवश्यक है कि ऐसे रोगी की पाचन शक्ति बहुत कुछ नष्ट हो चुकी है, और वह श्वेतसार और शक्कर ऐसे भोजन को प्रकृति के अनुसार पाचन कर उपयोग में नहीं ला सक्ता है॥

यदि ऐसे रोगी को उतना ही गुण का भोजन जैसा जब वह स्वस्थ था खिलाया जावे तो न केवल उस का कुछ भाग गुर्दों द्वारा व्यर्थ होगा वरन् वह भोजन का काम न देगा, न उस से लाभ होगा परन्तु इस के

विपरीत उस के लिये यह विष हो जायगा क्योंकि यह भोजन उन समस्त लक्षणों को जो मूत्रकृच्छ्र रोग में होते हैं बढ़ा देगा ॥

भोजन का ढांचा।

निम्न लिखित भोजन का ढांचा अति लाभदायक परिमाणित हुआ है पर इस में भी प्रत्येक रोगी की दशा के अनुसार फेर फार करना उचित होगा ॥

इस चिकित्सा का उद्देश्य यह है:— पहिले ऐसे पदार्थों को कम करें जिस से खट्टे रस का संचय होता है। दूसरा रोगी की कार्बोहाइड्रेट (carbohydrate) या श्वेतसार शक्कर इत्यादि पचाने की शक्ति को खोज लें और प्रविष्ट भोजन को इसी सीमा में रक्खें और पाचन क्रिया में जो न्यूनता है उस की उन्नति करें ॥

तीन दिन तक रोगी को केवल हरी, पत्तों की साग तरकारी पका कर उबाल कर या कच्ची दी जाती है। इस के साथ केवल पानी पीने को दिया जाता है। यदि तीन दिन पश्चात् मूत्र में शक्कर होती है तो फिर कुछ और समय तक साग और पानी दो जब तक कि मूत्र शक्कर रहित न हो जाय ॥

अब इस हरे साग वाले खाने में कुछ कारबोहाइड्रेट अर्थात् आटे के सत्ववाले को जैसे चांवल, आलू या ओटमील है मिलाओ पहिले दिन केवल एक चम्मच भर आटे के सत्व वाले पदार्थ का उपयोग करो और फिर धीरे २ ठीक नाप से नाप कर प्रत्येक बार बढ़ाते जाओ ॥

मूत्र की परीक्षा कि इस में शक्कर है या नहीं प्रति दिन होनी चाहिये, जब यह फिर दिखाई दे तो जान लो कि रोगी की श्वेतसार पदार्थ पचाने की सीमा तक पहुंच गये हैं ॥

तब चांवल और आलू का १/३ अंश कम कर देना आवश्यक है उस भाग में से जो तब दिया गया था जब शक्कर दृष्टि पड़ी और एक हफ्ते या और अधिक समय तक इतना ही श्वेतसार पदार्थ दो और बढ़ाओ मत। हरी साग तरकारी अधिकता पूर्वक खाने को दो यह ही भोजन के ढांचे का मुख्य भाग है ॥

जब कुछ काल तक मूत्र शक्कर रहित हो तो फिर श्वेतसार वाले पदार्थों को बढ़ाते जाओ जब तक यह फिर दिखने न लगे और तब ऊपर बताई विधि के अनुसार १/३ भाग कम कर दो ॥

इस श्वेतसार या कारबोहाइड्रेट के साथ रोगी को अण्डे, पनीर, छाछ, ज़रा २ सा मक्खन, ज़ैतून का तेल, दलिया या मोटे आटे की रोटी

और दाल, और अख़रोट, बादाम देने चाहियें। दाल, अख़रोट, बादाम को बड़ी सावधानी से देना चाहिये। कोई मिठाई और श्वेतसार-रहित भोजन नाममात्र को भी न दो। मांसाहार भी इस लिये नहीं दिया जाता कि उस की प्रवृत्ति खट्टे रस उत्पन्न करने की है॥

मदिरा और तम्बाकू का प्रभाव पोषण क्रिया पर हानिकारक होता है और इन को उपयोग करने से विकार होता है। पुराने मूत्रकृच्छ्र के रोग में प्रति सप्ताह में एक दिन व्रत रखना अति लाभदायक होता है। प्रति दिन टट्टी उतरनी आवश्यक है॥

एक वर्ष या उस से अधिक समय तक सूखे पानक्रीआटिक तैयार पदार्थों (Desiccated pancreatic preparations) के उपयोग से और उपरोक्त वर्णन के अनुसार भोजन का निषेध करने से और रोगी के श्वेतसार पदार्थों की पाचन शक्ति की सावधानी करने से यदि रोगी की पानक्रिआटिक क्रिया अति ही बिगड़ न गई हो तो फिर से नवीन हो आती है। परन्तु किसी २ दशा में जब रोग अति दारुण हो गया है यह चिकित्सा लोगों को अपने शेष जीवन पर्यन्त करनी पड़ती है और इस से उन का जीवन बढ़ जाता और विश्राम से कट जाता है॥

स्परू (Sprue)।

स्परू रोग दस्त रोग के समान बड़े हलके पीले फेन वाले दस्तों के आने से आरम्भ होता है। बहुधा प्रातःकाल को कई दस्त हो जाते हैं, मुंह में गालों की भीतरी ओर और जीभ पर फोड़े या छाले पड़ जाते हैं, पाचन क्रिया में विकार होता है और वज़न बहुत घटता जाता है। कुछ काल पूर्व इस रोग को आंतों का रोग सोच कर वैसी ही चिकित्सा करते थे। पर अब यह सिद्ध हुआ है कि यह पाचन पोषण के विकार द्वारा, जिस में भोजन के चूने को उपयोग करने की शक्ति नष्ट हुई है, होता है॥

शरीर के चूना उत्पन्न करने वाले अवयवों ने हड़ताल कर दी है और इस कारण से शरीर में चूने का मानो अकाल पड़ गया है ये शरीर के अवयव जो चूना उत्पन्न करते हैं इनका एक झुण्ड है और उस में तिल्ली, कलेजा और अन्न नल के राहूद सम्मिलित हैं॥

जब से यह ज्ञान प्राप्त हुआ है स्परू के रोग की चिकित्सा उत्तम और लाभ दायक रीति से होती है॥

साधारण दशा में रोगी को १ वा २ सप्ताह के लिये पलंग पर लिटाते हैं। और केवल दूध भोजन के लिये देते हैं और १० ग्रेन कैलसियम लैक-टेट (Calcium Lactate) को दिन में ३ बार देते हैं कि निश्चय हो जाय कि चूने का यथोचित संचय है॥

टिकियां जिन में यथोचित परिमाण तिल्ली, कलेजा और अन्न नल के ग़दूद के सूखे बनाये पदार्थ का दो दिन में तीन बार खाने को दी जाती है। ये ग़दूद रूपी पदार्थ चूना बनाने वालों की घटी को पूर्ण कर देते हैं और बहुत दशाओं में देखा गया है कि अति शीघ्र पालन पोषण क्रिया की समानता ठीक हो जाती है और चंगे हो जाते हैं॥

एक सप्ताह या अधिक दूध के भोजन पर रख कर भोजन धीरे २ ऐसे बढ़ाया जाता है कि दूध के भोजन और हरी साग तरकारी दी जाती है और ६ सप्ताहों के अन्त में उन को जिन्हें स्परू रोग केवल हलके रूप में है अपने पूर्ण भोज्य पर ले आते हैं और फिर से आरोग्य हो जाते हैं॥

बहुतेरे पुराने मुंह में छाले पड़ने के रोग जो स्परू के रोग में नहीं गिने जाते हैं इसी प्रकार की चिकित्सा द्वारा अच्छे हो जाते हैं यह वर्तमान काल में अति ही लाभदायक चिकित्सा और औषधियों में उन्नति हुई है॥

काला आज़ार।

लेखकः—ए. ई. क्लार्क, एम. डी.

काला आज़ार का रोग "लीशमन दोनोवनी" रोग कृमि के द्वारा लग जाता है और इस के ठीक रोग में समय कुसमय ज्वर आता है, रोगी का वज़न और बल अधिक घट जाता है, तिल्ली बढ़ जाती है और रक्त के तत्व में विकार हो जाता है॥

इस में और मलेरिया ज्वर में अन्तर।

बहुत कर के इस को मलेरिया के समान समझ लेते हैं, और मलेरिया की ही चिकित्सा करते है। कभी २ इन दोनों के लक्षण कई बातों में एक दूसरे के समान होते हैं यहां तक ये दो रोग कभी २ मिलते हैं कि इन के निर्णय करने में भूल न करना कठिन होता है। दोनों रोगों में तिल्ली बढ़ जाना एक मुख्य लक्षण है और दोनों में रक्त की न्यूनता होती है और दोनों रोग एक ही रोगी को हो सक्ते हैं। परन्तु ये बिलकुल भिन्न २ जाति के रोग कृमि

द्वारा होते हैं। यद्यपि हम को विदित है कि मलेरिया रोग के रोग-कृमि किस प्रकार से प्रविष्ट होते हैं हम यह नहीं कह सके कि स्परू के रोग-कृमि कैसे मनुष्य में प्रवेश करते हैं। कोई २ यह कहते थे कि ये रोग-कृमि खटमल के काटने से मनुष्य में प्रवेश करते थे परन्तु बहुत इस को प्रमाण रहित समझ कर नहीं मानते हैं वर्त्तमान काल में यह विश्वास किया जाता है कि ये कोई रक्त चूसनेवाले कीड़े के द्वारा, कदाचित् मच्छर या सैंड फ़्लाई (Sand fly), रेत मक्खी, के द्वारा शरीर में प्रवेश करता है॥

चिन्ह और लक्षण।

अति मुख्य और विशेष लक्षण और वह जो रोगी स्वयं देखता है काला आज़ार रोग में तिल्ली का बढ़ जाना है। यह बढ़ना धीरे २ होता है पहिले महीने के अन्त में वह केवल पसली के ज़रा नीचे होती है और तीसरे महीने के अन्त में नाभी और पसली के किनारे के मध्य में होती है और छटवें महीने में नाभी तक पहुंच जाती है। असाध्य दशाओं में वह इस से भी शीघ्रता से बढ़ती है यहां तक कि तीसरे महीने में नाभी तक पहुंच जाती है। यद्यपि इस से ऊपर जो बढ़ना बताया है वही इस के बढ़ने का साधारण नियम है। तिल्ली बहुधा पिलपिली व नर्म तो नहीं होती पर किसी २ दशा में ऐसी हो जाती है। तिल्ली नीचे की ओर न बढ़ कर पीछे की ओर भी बढ़ती है, ऐसी दशा में रोगी को विदित नहीं होती है और डाक्टर से परीक्षा द्वारा विदित हो जायगी॥

तिल्ली भी बढ़ती है और उसी के साथ रोगी का वज़न और बल भी घट जाता है और रोगी होने के कुछ काल पश्चात् रोगी को रोग विदित हो जाता है। ये घटी रोग के बढ़ने पर और भी अधिक होती जाती है॥

ज्वर।

काला आज़ार का ज्वर मोती-झिरा और मलेरिया के समान कुछ विशेषता नहीं रखता है। कभी २ इस का ज्वर मलेरिया के समान होता है और कभी २ मोती झिरा के समान होता है। और किसी २ दशाओं में इन दोनों रोगों के ज्वर से बिलकुल ही भिन्न भी होता है। इस ज्वर में केवल एक ही विशेषता है जो इस रोग के पहिचानने में मुख्य है कि २४ घण्टों में यह दो बार चढ़ता और उतरता है। यदि प्रति दो घण्टों में ज्वर (Temperature) नापा जाए तो देखोगे कि २४ घण्टों में यह दो बार चढ़ता है और यही काला आज़ार की मुख्य विशेषता है॥

रक्त में परिवर्त्तन।

इस रोग की विशेष दशाओं में जो परिवर्त्तन रक्त के मिश्रण तत्वों में होता है पूरा, स्पष्ट विदित होता है। प्रथम रक्त के श्वेत कण (Corpuscles) कम हो जाते हैं। एक आरोग्य मनुष्य में कुछ नपे हुए रक्त में रक्त के श्वेत कण ७,५०० होते हैं परन्तु काला आज़ार रोग होने से ४,००० या इस से भी कम रह जाते हैं। इस के साथ ही रक्त के लाल कण भी कम हो जाने के कारण वह लाल रंग, जो रक्त की स्वच्छता जब ठीक है तब होता है, फीका पड़ जाता है। मलेरिया ज्वर में ये रक्त के लाल कण नहीं घटते हैं, कभी एक आध दशा में घटें। इस का अर्थ यह है कि मलेरिया के पुराने रोगी का रंग "काला आज़ार" के रोगी की अपेक्षा अधिक पीला होता है॥

और भी छोटे मोटे चिन्ह और लक्षण हैं जो इन मुख्य लक्षणों के संयोग से विशेष मूल्य के हो जाते हैं। काला आज़ार के रोगी के दांत के मसूड़ों से, नासिका से और दूसरी नलियों और छिद्रों द्वारा रक्त निकलता है इस कारण उस में स्थूल होने की शक्ति कम हो जाती है और हज़म न हो जाने से इसे रक्त की स्वच्छता नहीं मिलती। दूसरा चिन्ह जो इस रोग के रोगीयों में दिखाई देता है वह बालों का सूखापन और शीघ्र टूट जाना और बालों में चमक न रहना है। बालों में का स्वाभाविक तेल जाता रहता है जो बालों को झलक देता है इसी कारण से इन में चमक भी नहीं रहती है। काला आज़ार के रोगियों को पुरानी तीव्र खांसी जैसी सर्दी (Bronchites) में होती है आने लगती है, माथे और कनपटी की त्वचा का रंग इस रोग में बहुधा काला पड़ जाता है॥

निदान।

इस रोग की पहिचान उपरोक्त दिये हुए विशेष लक्षणों द्वारा और असमय के ज्वर के वर्णन द्वारा और रोगी के वज़न और बल के लगातार घटने से और रक्त के परिवर्त्तन से जो ऊपर बता चुके हैं और रक्त की परीक्षा उचित उपाय द्वारा करने से जिस से इस रोग के रोग-कृमि दृश्य पड़ेंगे पता लग जायगा। रक्त के "सीरम" पदार्थ की परीक्षा भी की जाती है और वह इस की पहिचान में बहु मूल्य होती है। इस परीक्षा को अल्डीहाइड परीक्षा कहते हैं। किसी २ रोगी में साधारण रक्त परीक्षा द्वारा रोग-कृमि नहीं मिलते हैं, ऐसी दशा में तिल्ली को छेदने से तुरन्त ही पहिचान हो जाती है। तिल्ली को छेदने से काला आज़ार का निश्चय भली भांति

हो जाता है, परन्तु ऐसा करने में कुछ जोखिम का भय रहता है सो जब और २ उपाय द्वारा निर्णय नहीं होता है तब इस विधि का उपयोग करते हैं॥

संयोग से चंगा होने की आशा।

संयोग से इस रोग से अच्छा हो जाना ऐसी दशाओं में जहां चिकित्सा नहीं की गई असम्भव सा है क्योंकि रोग बढ़ता ही जाता है और अन्त में रोगी उस से मर जाता है या बहुधा कर के इसी रोग से कोई और रोग जो असाध्य है उत्पन्न हो जाता है। और शारीरिक यंत्र की निर्बलता के कारण रोगी इस में अशक्त हो जाता है। जिन रोगियों की चिकित्सा की जाती है उन में बहुतों की दशा भली रहती है। जितनी जल्दी चिकित्सा आरम्भ की जाय उतना ही चंगा होने की आशा होती है यदि रोगी रोग के आरम्भ के दिनों में चिकित्सा आरम्भ कर दे तो उस के चंगा होने की अधिक आशा है उस रोगी की अपेक्षा जो अपनी चिकित्सा कराने के लिये उस समय आवे जब कि रोग ने उस के शरीर यंत्र में दृढ़ जड़ पकड़ ली हो॥

चिकित्सा।

ज्यूंही रोग की पहिचान हो जाय तुरन्त चिकित्सा आरम्भ कर देनी चाहिये। चिकित्सा के लिये किसी नस में बहुधा कर के कोहनी के जोड़ के ऊपर की नस में टारटार इमेटिक या ऐन्टीमनी की कोई और तैयार की हुई औषधि पिचकारी द्वारा डालो। यह चिकित्सा डाक्टर ही देवे या कोई ऐसा जन जो इस में निपुण हो। इस कारण इस की चिकित्सा और खुराक इत्यादि का सारांश लिखना आवश्यक नहीं है॥

ऐन्टीमनी की सस्ते मोल की तैयार की हुई औषधि से महंगी की अपेक्षा देर में लाभ होता है। सो वे लोग जो व्यय कर सके हैं भला है कि महंगी मूल्य वाली औषधि ले कर अपनी चिकित्सा शीघ्र कर लें॥

उलझन।

काले आज़ार के रोगी के शरीर में रोग द्वारा दूसरे रोग कृमि पर प्रबल होने की शक्ति जाती रहती है और अशक्त होने से दूसरे असाध्य रोग जैसे मोती झिरा, संग्रहणी, क्षय रोग और शीत रोग लगने का बड़ा भय रहता है। एक साधारण उलझन काला आज़ार की ब्रांको निमोनिया (छाती में शीत) है और उस से बहुतों की मृत्यु होती है। दूसरी उलझन जो इस में होती है दस्त या संग्रहणी, (gangrene of the mouth मुंह में छाले), मुंह आना, मसूड़ों और नाक इत्यादि से रक्त बहना है॥

काला आज़ार का और विस्तार पूर्वक वर्णन जो पढ़ना चाहते हो तो नेपीयर और म्यूर को "हैंड बुक आव काला आज़ार" (Hand-Book of Kala Azar) जो आक्सफ़र्ड विश्वविद्यालय के छापेख़ाने में छपी है, पढ़ो॥

पागल कुत्ते के काटे की चिकित्सा।

लेखकः—ले० कर्नल ई. डी. डब्ल्यू ग्रेग, सी. आइ. ई., एम. डी. इत्यादि, डाइरेक्टर, पास्टिअर इन्स्टिटयूट आव इंडिया, कसौली॥

घाव का उपचार।

जानवर के काटने के पश्चात् जितनी जल्दी हो सके घाव को भली प्रकार पानी से धोना चाहिये। फिर अच्छी प्रकार से सुखा कर इस को जलाना (दाग़ लगाना cauterize) चाहिये। इस कार्य्य के लिये सब से अच्छी वस्तु निर्मल कारबोलिक एसिड है क्योंकि वह अच्छे प्रकार से भीतर प्रवेश हो जाता है और जल्दी से विष को नष्ट कर देता है। और चूंकि जिस जगह पर यह लगाया जाता है उस स्थान को सुन्न कर देता है इस लिये घाव के भीतर पहुंच कर विशेष कष्ट दायक भी नहीं होता। यदि निर्मल कारबोलिक एसिड न मिल सके तो परमैंगनेट आव पोटेशश सूखे अथवा उस के गाढ़े २ सोल्यूशन से या निर्मल सिल्वर नाईट्रेट से यही काम लेना चाहिये। परन्तु यह चीज़ें निर्मल कारबोलिक एसिड के बराबर लाभ दायक नहीं होतीं॥

यहां यह वर्णन कर देना आवश्यक है कि अच्छे प्रकार से घाव को "जलाना" किसे कहते हैं। कोई २ मनुष्य यह विचार करते हैं कि दांतों के दो गहरे घावों को अच्छी तरह से जलाने के लिये उन के चारों ओर की पांच पांच छः छः इंच तक की खाल नष्ट कर देनी चाहिये। और इस बात का नाम मात्र विचार नहीं रखते कि कास्टिक घाव के भीतर उस की बिल्कुल तह तक पहुंच गया या नहीं। घाव को अच्छी प्रकार "जलाने" के लिये एक २ दांत के चिन्ह को अलग २ कर के उपचार करना चाहिये और यह बात भली प्रकार देख लेनी चाहिये कि कास्टिक पूरी रीति से घाव के भीतर भर गया है या नहीं और इस की बिलकुल तह तक पहुंच गया है या नहीं। कभी २ दांत का घाव इतना सूक्ष्म होता है कि जब तक नश्तर से चीर कर इस को बड़ा न कर दो तब तक उस के भीतर हर स्थान

में कास्टिक नहीं पहुंच सका। जिस घाव में साफ़ २ दांत के चिन्ह हों उस में कोई तेज़ कुरेदनी अवश्य उपयोग करनी चाहिये। परन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि ऊपर की खाल दूर तक नष्ट न होने पाए, नहीं तो घाव भरने में देर लगेगी, बस इतना ही देख लेना आवश्यक है कि कास्टिक ने घाव के उन समस्त भागों को भली प्रकार जला दिया है जिन में दांत का विष लग गया है॥

हम को विश्वास है कि यदि जानवरों से काटे हुए मनुष्य जल्दी से देख भाल किये जाएं, अर्थात् काटने से एक घंटा व्यतीत होने के पहिले ही उन का उपचार कर दिया जाए, अर्थात् यदि घाव का स्थान ऐसा है जैसे पिंडली या हाथ जहां पर काटने को नश्तर से खटके लगाया जा सका है तो सब से अच्छा उपचार यही है कि उस जगह का सारा भाग जितने में विष के पहुंचने की आशंका है काट कर फेंक दिया जाए। परन्तु घाव चाहे जलाया जाए चाहे उसका भाग काट कर फेंक दिया जाए यह कभी दृढ़ता के साथ नहीं कहा जा सका है कि विष फैलने का डर अब बिलकुल ही दूर हो गया। हां इतना लाभ तो अवश्य है कि यदि यह सब उपाय भली प्रकार काम में लाए जाएं तो घाव में से विष का अधिक अंश दूर हो जाता है और थोड़ा सा बचा हुआ विष जो मनुष्य के शरीर में रह जाएगा वह भी पैस्टयूरियन उपचार के द्वारा अधिक सुगमता के साथ विनष्ट किया जा सका है॥

पैस्टयूरियन उपचार कूकर रोग से रक्षित होने के लियेः—

घाव को भली भांति जला कर दूसरा काम यह है कि इस का निर्णय किया जाय कि रोगी को पैस्टयूर इन्सटीटयूट या औषधालय में भेजें या नहीं। यदि एक पढ़ा लिखा अनुभवी डाक्टर न मिल सके या कुछ सन्देह हो तो एक सारांश तार रोगी के लक्षणों का और काटने के विषय के ब्योरे का पैस्टयूर इन्सटीटयूट को भेज कर सम्मति लो। ऐसी दशा में जब उपचार की आवश्यकता न हो तो इस से रोगी का लम्बी यात्रा का व्यय और दुःख बच जायगा। तार नीचे लिखे पते के अनुसार भेजोः—

१. पैस्टयूर इन्सटीटयूट आव इन्डिया, कसौली ... ... पैस्टूयर (Pasteur)
२. ,, ,, ,, सदर्न इण्डिया, कुनूर, (मद्रास). लिस्सा (Lyssa)
३. ,, ,, ...रंगून (बरमा) ... वीरस (Virus)
४. किङ्ग एडवर्ड ७ मेमोरियल पैस्टयूर इन्सटीटयूट, शीलांग (आसाम) ... ... रेबीज़ (Rabies)

— "रेबीज एण्ड एन्टी-रेबिक ट्रीटमेन्ट इन इण्डिया" ... ... पृष्ठ ९-११

विशेष सूचीपत्र

सूचीपत्र ।